"सूफी प्रेमाख्यानक" काव्यों में नारी-स्वरूप-परिकल्पना एवं स्थान

(इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल् उपाधि के लिए प्रस्तुत)

शोध-प्रबन्ध

शोध-कर्त्री :
श्रीमती कुसुमलता पाण्डेय
हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

निर्देशिका :
डा० आशा गुप्ता
अवकाश प्राप्त प्रोफेसर
हिन्दी विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

दिसम्बर १९९३

प्राक्कथन

हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानक काव्य अति समृद्ध है, इसके प्रणयन में अनेक सहृदय मुसलमान कवियों का अतुल सहयोग है। ये कवि नारी के स्वरूप की प्रतिष्ठा अपने काव्य में अनेकानेक रूपों में व्यंजित किये हैं। मध्य काल में जब नारी कृपाण के धार पर प्राप्त की जाती थी, उसका स्वरूप मात्र श्रृंगारी होकर रह गया था, वह भोग की वस्तु बन गयी थी, उसकी अपनी कोई विचारधारा नहीं थी, वह वीरों की भोग्या बन कर विलास की साधन थी, राजाओं के रंग महल की शोभा मात्र रह गयी थी। उसी समय सूफी कवियों ने 'प्रेम-काव्य' की धारा का सूत्रपात किया।

इन सूफी कवियों ने भारतीय प्रचलित लोक कथाओं एवं आख्यानकों को लेकर अपनी परिकल्पना से सजाकर नारी के विभिन्न रूपों की अवतारणा की है। सूफी कवि स्थूल-परक चित्रण करके, अलौकिकता का आवरण डालते हैं।

डा० कमल कुलश्रेष्ठ का हिन्दी "प्रेमाख्यानक काव्य" प्रेमाख्यानक साहित्य का, प्रथम प्रबन्ध है। लेखक का मत है कि सूफी कवियों का दर्शन स्पष्ट नहीं, उनकी कथाओं में आध्यात्मिकता सुरक्षित नहीं है। प्रस्तुत प्रबन्ध में उसी विषय पर विचार किया गया है।

डा० सरला शुक्ला का "जायसी के परवर्ती "सूफी कवि और काव्य" पर लिखा गया दूसरा प्रबन्ध है। लेखिका ने इस प्रबन्ध में

गार्हस्थ एवं पारिवारिक जीवन, नारी समस्या, विवाह समस्या आदि का विवेचन किया है।

डा० जयनाथ नलिन के द्वारा लिखा गया "भक्ति काव्य में माधुर्य भाव का स्वरूप" प्रबन्ध में, रति के लौकिक और आध्यात्मिक पक्ष पर विचार किया गया है। लेखक ने सामाजिक परिवेश के मूल्यांकन पर भी अपना विचार व्यक्त किया है।

डा० श्याम मनोहर पाण्डेय का शोध प्रबन्ध "मध्य युगीन - प्रेमाख्यान" है, जिसमें लेखक ने सूफी प्रेमाख्यान साहित्य, एवं प्रेम निरूपण के तुलनात्मक अध्ययन पर अपनी विवेचना प्रस्तुत की है।

डा० गोविन्द त्रिगुणायत का शोध प्रबन्ध, "जायसी की काव्य प्रतिभा एवं संरचना" है, जिसमें लेखक ने रचना सौन्दर्य का विश्लेषण किया है। इसके अतिरिक्त वियोग वर्णन, नख-शिख वर्णन आदि पर अपनी विवेचना प्रस्तुत की है।

डा० उषा पाण्डेय ने "मध्य युगीन काव्य में नारी भावना" शोध प्रबन्ध में, नारी भावना पर प्रकाश डाला है। इसके अन्तर्गत नारी के चरित्र, रूप एवं बिम्ब का, विवेचन प्रस्तुत किया है। किन्तु अभी तक कोई शोध प्रबन्ध ऐसा नहीं लिखा गया जो समग्र रूप से नारी स्वरूप एवं परिकल्पना पर प्रकाश डाल सके।

प्रस्तुत प्रबन्ध में इस गुरुतर कार्य को सम्पन्न करने का प्रयास किया गया है। गुरुतर इसलिए कि नारी स्वरूप को शब्दों में नहीं बांधा जा सकता, वह विराट है, अनन्त है। सूफी काव्य की नारी तो अनेक रूप में व्यंजित है। कहीं उद्दाम प्रेयसी जो समस्त बन्धनतोड़

देना चाहती है, कहीं विरह में क्रंदन करती हुयी नितान्त एकांकी, कहीं परित्यक्ता, तो कहीं प्रिया, कहीं माया, कहीं ब्रह्म, कहीं सत् तो कहीं असत् आदि रूप में स्थापित है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध जिसका विषय "सूफी काव्य में नारी स्वरूप परिकल्पना एवं स्थान" है। यह शोध प्रबन्ध पांच अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में स्त्री पात्र वर्गीकरण काव्य में उनका स्थान, चरित्र विश्लेषण, अलौकिक पात्र, असत् पात्र एवं अन्य नारी पात्रों के चरित्र वैशिष्ट्य पर विचार प्रस्तुत किया गया है।

द्वितीय अध्याय में सौन्दर्य चित्रण है, जिसके अन्तर्गत नायिका का नख-शिख वर्णन, जल क्रीड़ा वर्णन अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन है। इस प्रयास में नायिका के सौन्दर्य का सांगोपांग निरूपण है।

तृतीय अध्याय में विभिन्न परिवेशों पर विचार किया गया है। इसके अन्तर्गत राजनीतिक, सांस्कृतिक, सामाजिक परिवेशों एवं विभिन्न काल में नारी, प्रथायें, संस्कार एंव श्रृंगार का विवेचन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में श्रृंगार एवं अन्य रसों पर प्रकाश डाला गया है। संयोग एवं वियोग श्रृंगार, नायिका, उपनायिका बारह मासा एवं षट्ऋतु वर्णन आदि विषय इसके अन्तर्गत लिए गये हैं।

पंचम अध्याय में मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के अन्तर्गत प्रेम, असूया, क्रोध, स्वप्न विश्लेषण एवं नायिकाओं की मनोवैज्ञानिक एवं अन्य विशेषताओं पर विचार किया गया है।

इस प्रकार समग्र सूफी शोध प्रबन्ध एवं मूल ग्रन्थों के अध्ययन के पश्चात् हमें किसी निष्कर्ष पर पहुँचना कठिन प्रतीत होता है कि, प्रेमाख्यानक काव्य के कवि एक ओर तो, नायिकाओं का चित्रण, मध्ययुग के विलास पूर्ण नारी के आकर्षण से अछूते नही रह पाते, परिणाम स्वरूप अपने काव्य में वे नारी के स्थूल एवं पार्थिव स्वरूप का नग्न अंकन किये हैं। दूसरी ओर सूफी कवि नायिकाओं का सौन्दर्य चित्रण करते हुए, जहां कहीं अवसर मिला है वहाँ आध्यात्मिकता एवं अलौकिकता का आवरण डाल दिये हैं, जिससे नायिका का स्वरूप विराट ब्रह्म रूप में प्रतीत होने लगता है। इनकी ब्रह्म-नारी कहीं-कहीं अत्यन्त दुर्बल दिखाई पड़ती है, जैसे असूया, वियोगी रूप, इनके ब्रहम रूप को खण्डित करता है। स्वयं कवि ही नायिका को ब्रहम कहता है और यदि नायिका ब्रहम है तो, उसका प्रिय की प्रेयसी सपत्नी के प्रति डाह की अतिरेकता, रूपगर्विता, प्रेम गर्विता होना हास्यास्पद सा प्रतीत होता है।

इस शोध प्रबन्ध की निर्देशिका पूज्य डा० आशा गुप्ता जी से मुझे जो मार्गदर्शन एवं निश्छल स्नेह प्राप्त हुआ है, उसका सुफल ही शोध प्रबन्ध है। वस्तुतः अत्यधिक व्यस्त रहने पर भी जो समय मुझे उन्होंने दिया है वह आभार शब्द की औपचारिकता से कहीं अधिक मूल्यवान है।

डा० रामकुमारी मिश्रा जी की भी मैं अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के विषय को निर्दिष्ट किया है, एवं शोध-साधना के लिए महत्वपूर्ण सूत्र-संकेतों को दिया है।

एवं मुझे जिन पुस्तकालयों से सहायता प्राप्त हुयी है उनके प्रति

मैं अनुगृहीत हूँ। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के समस्त कर्मचारियों के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने मुझे अलभ्य पुस्तकों को प्राप्त कराने में सहायता प्रदान की।

अन्त में कृतज्ञता ज्ञापन के इस अवसर पर अपने परिजनों के असीम स्नेह को नहीं भूल सकती, अपने पूज्य पति के अपार सहयोग का मैं किन शब्दों में आभार व्यक्त करूँ, जिन्होंने पूर्ण रूप से मेरे शोध साधना में अपूर्व सहयोग प्रदान करके इसे पूर्ण करने में मेरी सहायता की।

"विषय-सूची"

"प्रथम" अध्याय"

स्त्री पात्र : वर्गीकरण एवं सूफी काव्य ग्रन्थों की नायिकाओं का चरित्र विश्लेषण

(अ) नायिका

(आ) उपनायिका

(इ) अन्य स्त्री पात्र

(ई) असत् पात्र

(उ) अलौकिक नारी पात्र

स्त्री पात्र: वर्गीकरण एवं चरित्र विश्लेषण

नारी स्वरूप का वर्गीकरण करना अत्यन्त जटिल है, यह काव्य में अनेकश: रूप रंगों में प्रस्तुत होती है, और सूफी काव्य की नारी तो विभिन्न परिस्थितियों में कई-कई रूपों में हमारे समक्ष प्रस्तुत होती है उसके चरित्र का विराट जगत अनेक भागों में वर्गीकृत है। कहीं देवी, कहीं दानवी, कहीं कोमल कहीं कठोर कहीं प्रेमिका कहीं दुखिता: कहीं सहेली तो[1] कहीं सौत कहीं माँ तो कहीं माँ के रूप में शत्रु समान, इस प्रकार नारी रूप की विभिन्नता वर्गीकरण की प्रक्रिया में अवरोध पैदा करती है।

सरलता के लिए नारी स्वरूप की दो प्रवृत्तियाँ हो सकती हैं, व्याख्यात्मक एवं शैलीगत। व्याख्यात्मक प्रवृत्तियाँ नारी के रूप का सामान्यीकरण करती हुई चलती हैं। जो प्रधानत: जातिनुसार, धर्मानुसार, अवस्थानुसार, गुणानुसार एवं दशानुसार हैं। शैलीगत प्रवृत्तियाँ भावात्मकता, बौधिकता, कलात्मकता, एवं कथात्मकता लेकर चलती हैं। प्रवृत्तियों का यह वर्गीकरण, नारी के स्वरूप को समझने में सरलता एवं सुविधा होगी।[2]

व्याख्यात्मक प्रवृत्ति के अनुसार- इस प्रवृत्ति के अनुसार नारी का सरलीकरण नहीं हो पाता हिन्दी साहित्य में नारी के रूप-निरीक्षण एवं परीक्षण के पश्चात् निम्न प्रवृत्तियाँ हैं।

1- जातिनुसार - इसके अन्तर्गत नारी की चार जातियाँ हैं। पद्मिनी, चित्रनी, शंखिनी एवं हस्तिनी।

1- मधुमालती पृ0 232

2- हिन्दी महाकाव्यों में नारी चित्रण पृ0 73 डा0 श्याम सुन्दर दास।

पद्मिनी नारी सुन्दर होती है, स्वर्ण वर्णा, मृदुहाँसिनी, सुगंधित तनवाली हल्का आहार ग्रहण करने वाली, अल्प क्रोधी होती हैं सूफी काव्य की समस्त नायिकायें इसी श्रेणी के अन्तर्गत होती हैं।

चित्रनी नारी चंचल, नृत्य, चित्र, संगीत. कला, में पारंगत होती है। परिहास प्रिय, रति-शीला, उसमान की चित्रावली - , अपवाद स्वरूप इसी जाति की नारी है।

शंखिनी नारी क्रोधी, घमंडी, लज्जाहीन, इनके अंदर भय, क्षमा, धैर्य का अभाव होता है। हस्तिनी नारी निकृष्ट नारी होती है। वह नाटे कद की कटु शब्द बोलने वाली अधिक आहार ग्रहण करने वाली उच्छृंखल हंसी अट्टहास करते हुए, हंसने वाली होती है। इसकी गति गज के समान होती है।

§अ§ धर्मानुसार -

पुण्य-धर्म कसौटी के आधार पर नारी के तीन भेद हैं। यह विवाहिता नारी होती है यह पति के प्रति तन, मन, धन से समर्पित, पर पुरूष से विमुख। वह "स्वकीया" नारी होती है।

"सामान्या" नारी जो धन हेतु पर पुरूष से प्रेम का पाखण्ड करती है। "परकीया" नारी पर पुरूष से प्रेम करने वाली होती है।

सूफी काव्य की समस्त नायिकाये "स्वकीया" के अन्तर्गत आती है चंदा पूर्व ब्याहता है किन्तु पति क्लीव है जो स्वयं चंदा से दूर रहता है चंदा

का उससे संयोग हुआ ही नहीं न तो चंदा उसे आंतरिक रूप से चाहती है, अतः चंदा भी स्वकीया के अन्तर्गत है।

उपर्युक्त तीन भेदों के भी उपभेद हैं। मुग्धा, ज्ञात यौवना, अज्ञात यौवना, यौवना गमन हो गया किन्तु नायिका को ज्ञात नहीं, अज्ञात यौवना। यौवना गमनका ज्ञान हो, उसे ज्ञात यौवना। मुग्धा अभी यौवन का आरम्भ है, नायक को देखकर मुग्ध हो उठी है क्यों ? कारण नहीं ज्ञात है। वह मुग्धा नायिका होती है। इस प्रकार सूफी काव्य की नारी को यौवन आगमन का पता है वह प्रिय प्रतीक्षा में अहर्निशि प्रतिक्षित रहती है वह ज्ञात यौवना है।[1]

§इ§ <u>दशानुसार</u> – गर्विता, अन्य सम्भोग दुखिता एवं मानवती।

ये तीनों रूप सूफी काव्य की नायिकाओं में निरूपित है।

§ई§ <u>अवस्थानुसार</u>– प्रेमालाप प्रणय जन्य स्थितियों के अन्तर्गत नारी के दस भेद किये गये हैं।

§1§ स्वाधीन पति का – नायक को वशीभूत रखती है। §चंदा§

§2§ वासक सज्जा – प्रियतम के आगमन के आशा में सविलास-रति, गृह द्वार की ओर देखा करती है। (चित्रावली)

§3§ उत्कंठिता – जो केलि स्थान पर नायक की प्रतीक्षा करती है। §चंदा§

§4§ विप्रलब्धा – नायक की प्रतीक्षा अत्यन्त उत्सुकता से करती हुई चिन्तित रहती है। (नागमती)

1- हिन्दी महाकाव्यों में नारी चित्रण, पृ0 73-74

§5§ खण्डिता - जो स्त्री अपने पति के शरीर पर दूसरी स्त्री के संसर्ग के चिन्ह देखती है और ईर्ष्या करती है। (चित्रावली)

§6§ अभिसारिका - जो स्वयं कामार्त्त होकर नायक के पास जाती है या उसे अपने पास बुलाती है। §चंदा§

§7§ प्रवत्स्य-प्रेयसी- जो अपने पति के लिए भविष्य की आशंका से दुखी होती हैं नागमती, चित्रावली, कौलावती, रूपमती इसी श्रेणी के अन्तर्गत आती हैं।

§8§ प्रोषित पतिका- सूफी काव्य की समस्त उपनायिकाएं एक आदर्श प्रोषित-पतिका नायिका की श्रेणी में आती हैं।

§9§ कलहंन्तारिका- जो नायक का अपमान करने के पश्चात् दुखी होती है।

§10§ आगत पतिका- जो प्रिय के आने पर प्रसन्न हो। [5]

अवस्थानुसार -

इसके अन्तर्गत नायिका की मनोदशानुसार प्रिय के लिये विकल होना उसके मार्ग में नेत्र बिछाना[1] बरसते हुए सावन के महीने में नेत्रों से पानी का गिरना[2] चांद को देखकर वियोगावस्था में दो चांद का भ्रम होना जिसमें एक शीतल एक तपता हुआ[3] प्रिय को प्रसन्न देख ईर्ष्या भावना से भर कर पूछ उठना कि मेरे नेत्र तो जल बरसा रहे हैं, तुम्हारे मुख पर विद्युत सी चमकती हुई हंसी क्यों?[4] और कभी-कभी अपने ही हाथों अपने

1- मृगावती पृ0 114, छ॰ 290
5- हिंदी महाकाव्यों में नारी चित्रण पृ॰73-74
2- मधुमालती पृ0 351, छ॰ 402
3- चित्रावली पृ0 106, छ॰ 436
4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 552 छ॰ 459

चाल नोचना मुक्तों की माला तोड़ देना[1] आदि चेष्टायें बुद्धि भेद के अनुसार सूफी काव्य में बहुतायत है।

सूफी काव्य में नारी वर्गीकरण के अन्तर्गत कई विभाग हैं। इनकी नारी पात्र को पाँच भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

(1) नायिका (2) उपनायिका (3) अन्य स्त्री पात्र (4) असत् पात्र (5) अलौकिक पात्र।

नायिका – यह सूफी काव्य की मुख्य नायिका एवं नायक की "प्रेमिका" है। काव्य में इसका स्वरूप दो रूप में आया है। अलौकिक, एवं लौकिक प्रथम के अन्तर्गत नारी ब्रह्म-रूप में व्यंजित हुई है, जिसके अन्तर्गत वह दिव्य, तेजोमय, पारसरूप[2], साधक की साध्यरूप, अनन्य सौन्दर्य वती, है।

द्वितीय रूप में वह नारी जनित समस्त दुर्बलताओं एवं क्षमताओं से युक्त साधारण लौकिक नारी के रूप में निरूपित की गई है।

नारी के लौकिक रूप में प्रेयसी रूप की प्रधानता है वह प्रेमोन्मत साधिका है सामाजिक प्रतिबन्धों को नगण्य मानती है। बाधा कठिनाइयों से पराभूत नहीं होती[3]।

इस रूप में नारी में ईर्ष्या, जलन, द्वेष आदि असूया भाव का चित्रण है। लौकिक रूप में नारी के आदर्श स्वरूप की व्यंजना है इस रूप में, नारीगत आदर्श रूप पातिव्रत्य, प्रेम सहिष्णुता, त्याग क्षमा, दयाशील, सत्धर्म एवं वियोगी, प्रेमिका, सती रूप की प्रमुखता है।

1– हंस जवाहर, पृ0 20।
2– जायसी ग्रन्थावली, मानसरोदक खण्ड पृ0 92 छ· 67, राजनाथ शर्मा,
3– मध्य युगीन हिन्दी साहित्य में नारी भावना डा0 उषा पाण्डेय।

उपनायिका :

यह पूर्व व्याहता होती है पति द्वारा प्रेमिका-संयोग के पश्चात् यह प्रोषित-पतिका रूप में आती है, और वियोग विह्वल होकर समस्त काव्य को अपने वियोग रस से रससिक्त करती है। काव्य में उपनायिका का चरित्र नायिका से अधिक उत्कृष्ट है।

अन्य स्त्री पात्र:

इस वर्गीकरण के अन्तर्गत दो प्रकार के नारी पात्र काव्य में वर्णित हैं। प्रथम प्रकार के अन्तर्गत नायिकाओं की मातायें, सास इत्यादि। दूसरे के अन्तर्गत कथा प्रवाह क्रम को बढ़ाने के लिए, कथा के घटना चक्रो को, नया रूप देने के लिए कवि नायिका की सखी, दूती, धाय, मालिन, दासी आदि गौड़ नारी पात्रों की सृष्टि करता है। ये सभी नारी अनेक रूप-योजना में निरूपित हैं।

असत् पात्र :

इन पात्रों की सृष्टि कवि नायिका के सतीत्व, दृढ़ता, क्रोध,[1] एक निष्ठता आदि के आदर्श रूप को उत्कर्ष पर लाने के लिए करता है।नायिका भारतीय नारी के उच्च शिखरपर, इन्हीं पात्रों की कुटिलता से आसीन हो गई। सूफी काव्य की नारी सतीत्व की आलोक शिखा बन गई। इनके अन्तर्गत दासी दूती आदि नारी पात्र आती है।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 149, छ० 640

अलौकिक पात्र :

इस वर्गीकरण के अन्तर्गत वे पात्र हैं जो प्रेमी युगल के संयोग में सहायक है, इनमें भी दो वर्ग हैं, प्रथम वे पात्र जो मानवीय रूप में आती हैं, दूसरी वे पात्र जो परी आदि रूप में आती हैं, एवं प्रेमी युगल के मिलने पश्चात् गायब हो जाती हैं।

मानवीय रूप में अलौकिक पात्र लक्ष्मी, पार्वती पद्मावत् में, आई है शब्दपरी हंस जवाहर में –
वे पात्र जो प्रेमीयुगल को मिलाकर अन्तर्ध्यान हो जाती हैं उनमें मधुमालती की अप्सरायें, हंस जवाहर की परियां इत्यादि हैं।

नायिकाओं का चरित्र विश्लेषण :

चरित्र विश्लेषण के अन्तर्गत सूफी काव्य की नायिकाओं में विभिन्न विशेषताएं एवं दुर्बलताएं हैं नारी की सत्ता कहीं दैवि स्वरूप में दिखाई गई है और कहीं अत्यन्त ऐन्द्रिक, कहीं वह क्रोधी तो कहीं वह अत्यन्त कोमल इस प्रकार उसका व्यक्तित्व अत्यन्त जटिल हो जाता है।

"कुछ नायिकाएं प्रारम्भ में प्रिय के प्रति कठोरता दिखाती हैं[1] तत्पश्चात् आत्म समर्पण करती हैं, इन नायिकाओं के चरित्र में उत्थान, पतन, संघर्ष, कुछ भी नहीं है। वे नायक के विरह में तड़पती हुई अवश्य दिखाई गई हैं। मृगावती पद्मावती जवाहर आदि नायिकाएं

1– मध्युगीन प्रेमाख्यान डा० श्याम मनोहर पाण्डेय, पृ० 205

सती भी होती हैं।" ये तन मन जीवन को उत्सर्ग करती हैं[1] कहीं ये पति द्वारा संभोग-केलि के पश्चात् अति निरंग हो जाती है।[2]

कहीं ये पारस रूप होकर मानसरोवर को निर्मल करती हैं, अपनी हंसी से अनेक हंसो की उत्पत्ति कर देती हैं।[3]

और कहीं अपने सत् बल एवं मर्यादा की ज्योति जलाती हुई शीलवती नारी के रूप में अमर हो जाती हैं।

सूफी कवियों की उपनायिकाएं अपने चरित्र वैशिष्ठ्य में नायिकाओं की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ हैं। उनमें सहज नारीत्व है प्रेम है, ईर्ष्या, द्वेष, और डाह है, अपने रूप पर गर्व है, प्रथम विवाहिता होने का गर्व है।

नायिका चंदा :

यह गोबर गढ़ के राजा महर सहदेव की कन्या हैं जिसका विवाह बारह वर्ष की अवस्था में ज्योतिषि के कहने पर उसके पिता सिउहर 'बावन' के साथ कर देते हैं। जो कद में अत्यन्त छोटा, एक आंख का काना, क्लीव एवं नपुंसक है। अतः चांदा सूफी-प्रेमाख्यान की पूर्व व्याहता नायिका है जो "कुंकु" लोर से प्रथम प्रेम का प्रारम्भ स्वयं करती है। चांदा अत्यन्त सौन्दर्य वती है।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 425, छ॰ 249, राजनाथ शर्मा

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 803, छ॰ 69।

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 92, छ॰ 67॰

"अउर नखत उरगावन आछहि पवन दुवारि
चांद चलत नर मोहहिं जगत भयउ उजियारि"[1]

चंदा ससुराल में पहले तो सरलता एवं शिष्टता से रहती है किन्तु पति की उपेक्षा, एकान्त रात्रि में अकेली नवागत-वधू पति विहीना, सास का व्यवहार असहिष्णु। सब मिलाकर उसको क्षुब्ध कर देते हैं।

चांदा भारतीय संस्कार से बंधी गाय सदृश मूक वधू नहीं, जो सास ननद, क्लीव पति को न चाहते हुए भी जीवन पर्यन्त उनसे बंधी रहे, और अपनी अन्तर आत्मा को नित्य मारती रहे, बल्कि वह नयी चेतना नये विचार की स्पष्टवक्ता नायिका के रूप में अवतरित हुई है।

सास का पुत्र पक्ष लेने पर स्पष्ट वादी हो उठती है। और अपना निर्णय सुना देती है।

तुम्हरी धिय जो ससुरे अहा, पिउन पूछ तो बोलउ कहा।
अब लई कुरू मैं आपनधरा, काम लुबुध बिरही तन जरा।

चांदा विरह से जल रही है उसकी कोमल अभिलाषाएं जलती बुझती रहीं, वह उन्हें सहती रही, किन्तु उसने देखा कि यहाँ सभी स्वार्थ से युक्त हैं, वह अविलम्ब वहाँ से अपने पितृ-गृह जाना चाहती है वह कहती है कि सुहागिनी स्त्री से तो रांध रहना भला है। चांदा पति-प्रेम की आकांक्षा के दमन से, प्रेम के प्रति आसक्त है अतः लोर के प्रति उसका समर्पण उद्दाम

1- चंदायन पृ० 43, छ० 48

प्रेम, इसी का परिणाम है। एक आभीर जाति के परिवार की राज-कन्या होने के बाद लोरक के प्रति उसका प्रेम समर्पण की भावना से ओत-प्रोत होना स्वाभाविक है। वह कहती है कि मैं तुम्हारी दासी होकर तुम्हारी सेवा करूंगी उसे अपनी चिंता नहीं उसे लोर की चिन्ता है।

मोहिं लागि लोर परछेवा, अब हौं करौ दासि तोर सेवा
अधर खंडि नैनन पिउ सनौं, हिरदय थार भरि आगे आनौ
मोहिं संक आपन नहिं लोरा, मत कछु होहिं बहुलडर तोरा।[1]

चांदा अनेक कष्टों को सहन करते हुए कष्ट सहिष्णु है, वह विरह एवं यौवन दाह से दग्ध है माघ के महीने में वह ठंड से सताई हुई है भयंकर सर्दी उससे सहन नहीं होती। वह गर्मी की लूँ में अकेली तप रही है उसका कोई साथी नहीं है यहाँ चांदा एक विवश वधू, पति द्वारा उपेक्षिता स्वरूप में दिग्दर्शित हुई है।

वह जैसी पवित्र पैदा हुई थी, वैसी ही आज भी है यह उसकी विवशता एवं ऐकान्तिकता का सबसे बड़ा उदाहरण है -

" मॉह मास मोयेउ कुछुआइ, सीउ न पिउ बिनु जाइ '[2]
जो चंदन लाउ थनहारा, अधिक उठे पिरिम के झारा
जानु लुआरि तपौं अकेली, नाहें न सेज कइस सोंउ अकेली
जस जनमि तस आहि सरीरू "[3]

1- चंदायन पृ0 209, छ॰ 215

2- चंदायन पृ0 651, छ॰ 48

3- चंदायन पृ0 50 , छ॰ 52

चांदा में साहस है। वह एक नारी होते हुए भी पुरूष को पलायन करने के लिये बाध्य करती है, यहाँ उसके चरित्र का मलिन स्वरूप उजागर होता है। यहाँ चांदा की मानसिकता एवं भावना नारी के स्वार्थी स्वरूप को स्पष्ट करती है। इतना ही नहीं वह विष खाकर प्राणान्त कर देने का विश्वास दासी विरस्पति को दिलाती है और समय भी निर्धारण कर देती है।

"आजु राति लइ निकरउ, नातरू मरूउ भोर विष खाई"[1]

वह सुनियोगिता नारी है, वह लोरक के साथ हरदी पाटन पलायन करते समय आभूषण एवं मोतियों को साथ ले जाती है।

"लितेसि अभरन मन्निक मोती"[2]

चांदा परकीया नायिका के रूप में अत्यन्त प्रौढ़ा एवं चतुरा है, वह प्रेमिका के रूप में अत्यन्त समझदार एवं गम्भीर है। वह लोरक के प्रेम संयोग से अपनी अस्त-व्यस्त दशा उधेसी मांग को किस चतुरता से उद्घाटित करती है।

रइनि चौखडी चढ़ी बिहारी, लै उंदी सख निसि परी मंझारी[3]

"तेहिं मन नैन रात भोर, मुख भेभर कुंभिलान

अइस रात मोर दूभरि, माहिं कोइन प्रान"

चांदा नारिजनित दुर्बलता से ओत-प्रोत है - वह अपने प्रेम की पूर्णता को समझने के लिए, उपनायिका मैना के सौन्दर्य का वर्णन लोर से करती है और

1- चंदायन पृ0 214, छ. 22
2- चंदायन पृ0 203, छ. 280
3- चंदायन पृ0 114, छ. 221

कहती है। ऐसी स्त्री छोड़कर तुम मुझे क्यों चाहते हो? यह प्रश्न उसके मनोविज्ञान के ज्ञान का परिचय देता है।

"सुरंग सेज भरि फूल बिछावसि, कवंल करी हंसि मैना रावसि
अस धनि छांड़ि जो अनितई धावा, कइ सनेह तउहिं छटकावा" [1]

प्रारम्भ में तो लोर के प्रति अत्यन्त प्रेमातुर है दुखी है किन्तु कथा के उत्तरार्द्ध में चांदा, प्रायः प्रेम में विह्वल न होकर सामान्य है. लोर अधिक विरही है। चांदा का व्यक्तित्व कठोर है लोर कितनी कठिनता से चांदा के धौराहर पर चढ़ता है और चांदा है कि उसे हार के टूटे हुए मोतियों को चुनवाते हुए ही प्रभात करा देती है। फलतः लोरक के मन की साध मन में ही रह जाती है।

वह जानती है कि लोर से मैं जितनी दूरी रखूँगी उतना ही प्यार बढ़ेगा।

"चांद कहां खिनएक सम्हारौं, हार टूटिगा मोंति सम्हारौं [2]
मोंति उचावत रैइनि बिहानी, उठासूर लई साध निमानी"

उसका मानिनी स्वरूप भी काव्य में अभिव्यंजित है चांद ने देखा लोरक धौराहर पर चढ़ चुका है वह तुरन्त शैय्या पर जाकर पड़ जाती है।

"चांदहि देख लोरिक गा आई
सेज सुभर होई विसरी जाई" [3]

1- चंदायन पृष्ठ 201, छं० 207

2- चंदायन पृ0 206, छ. 212,

3- चंदायन पृ0 119, छ. 19

कथावस्तु में चांदा का व्यक्तित्व आक्रामक है वह मैना के ऊपर जूझ पड़ती है।

"दॅवरि चांद बहु बाँह पसारे, हार टूटि मोति छहराने"

इस प्रकार चांदा में गम्भीरता का अभाव है। कथावस्तु में वह विभिन्न रंगों में अवतरित हुई एक मुखर नायिका के रूप में प्रस्तुत हुई है जो अलौकिक न होकर सामान्य नारी जनित दुर्बलताओं एवं क्षमताओं से युक्त है।

चांदा सौतदाह, की भावना से भी भरी हुई है वह अंहकारी है सौन्दर्य गर्विता भी है नारी जनित समस्त दुर्बलताओं से युक्त नायिका है।

वह मैना से सामाजिक प्रतिष्ठा में बड़ी होने पर भी उससे असामाजिक तरीके से वार्तालाप करती है। गन्दी शब्दावलियों का प्रयोग करती है। जो उसकी गरिमा को नष्ट करता है।

जस आपन तजि अवरहु जाइ, जस छिनार तस सुधि बरखानइ[1]
पुरूष छिनार केरकी लेई, बात रहस अस उत्तर देई
तईं का दीसा हइ बेसादारी, चित्त सुगाइ, दीन्ह मोहिं गारी।[2]

चांदा में गम्भीरता का अभाव है वह अपने भावनाओं पर अंकुश नहीं रख पाती वह जैसी अन्दर है वैसी ही बाहर है। वह अधीर नारी है मैना

1- चंदायन पृ0 245 छ• 252,

2- चंदायन पृ0 442 छ• 250

के मलिन स्वरूप को देखकर वह अपने आपको रोक नहीं पाती और हंसते हुए उससे पूछ बैठती है तुम्हारा रंग रूप सांवरा क्यों है? तुम्हारे सिर पर शीश बन्द नहीं है, अधरो पर पान नहीं, क्या तुम्हारे पति तुम्हारी शैय्या पर नही आते या तुम्हारी बुद्धि क्षीण है। कोई अवगुण अवश्य है जो पति तुम्हारे पास नहीं आते। यहां परोक्ष रूप से चंदा अपना महत्त्व प्रतिपादित करती है और मैना कोहेय। यहां चांदा का स्वरूप एवं मानसिक स्तर बहुत निम्न है। चांदा में आत्म विश्वास है वह जो चाहती है उसे पा लेने की क्षमता है, उसका चरित्र काव्य में मुखरा एवं तेज तर्रार नायिका के रूप में उद्घाटित हुआ है।

वह दासी विरस्पति को अपना स्पष्ट निर्णय देती है-लोरक को मेरे घर बुलाओं या मुझे उसके पास ले चलो क्षण मात्र की भी देर उसको सहन नहीं -

"चांद विरस्पति के पॉ परी, कामिनी सूर देख एक धरी[1]
कइ ओहि मेरे घरे ~~बो लावहिं~~, कइ मोहिंलाई ओंक डंड लावहिं।

चांदा कोमल हृदय की स्वामिनी भी है वह लोरक को देखकर बेचैन हो उठती है उसके नेत्र-सीपिओं से मोती ढुलने लगते हैं ऐसा प्रतीत होता है मानों उसने समस्त आभरणों के साथ स्नान कर लिया है।

"देखि विमोहीं गई बेकरारी, नैन मुरछि मुख गा कुंभिलाई[2]
नैन सीप जनु मोतिंह ढरे, राखेसि चांद आंसू तन ढरे।

1- चंदायन पृ0 137, छ. 140

2- चंदायन पृ0 138, छ. 135

चांदा में चतुरता कूट कूट कर भरी है वह लोरक से प्रेम भी करती है और उसके महल में आने पर प्रश्न एवं तर्क भी करती है जो उसके व्यक्तित्व को जटिल बना देते हैं।

जाँकह लोर कीन्ह मनुजाई, तेहिक मन्दिर कस पैठेहु धाई।[1]
इस प्रकार चाँदा एक सामान्य नारी के रूप में प्रस्तुत है।

§2§ मृगावती :

कथावस्तु में यह नायिका विशेष रूप में प्रस्तुत हुई है। कथानक में इसके दो स्वरूप व्यंजित हैं प्रथम में यह दैवि स्वरूप में आई है, जो स्वरूप बदलने की क्षमता से युक्त है। दूसरा स्वरूप मानवी का है, कठोर रूप में अवतरित है किन्तु प्रेमोत्पति पश्चात् कोमल रूप में निरूपित है। यह उड़ने की कला जानती है।

"तरक कुरंगिनी चली पराइ"[2]

"चली कुरंगिनी चित एक लाइ"

इहि कारण हौ जाही उड़ाही, कहहु कुवंर सो आवहि धाई ।।

यह कंचन नगर के राजा गणपति देव की कन्या है एवं उस देश की रानी भी हैं। इसका प्रेम प्रत्यक्ष दर्शन से उद्भूत है। किन्तु नायक के समक्ष यह अन्य नायिकाओं की तरह प्रेम का उद्घाटन नहीं करती है।

मृगावती प्रेमिका के रूप में अत्यन्त कठोर रूप में आती है। वह कुवंर के वस्त्र देने की बात पर स्वाभिमानी हो उठती है। कहती है-

---

1- चंदायन पृ0 197, छ. 230

2- मृगावती पृ0 125, छ. 22

चीर हमार देउ कस नाहीं, अउर चीर हम पहिरी न चाहीं[1]

किन्तु वास्तविकता यह है कि अन्तर में वह कुवंर को प्रेम करती है उसे व्यक्त नहीं करती, वह कुवंर के साथ आती है कुछ समय तक रहती है किन्तु अपने महत्व का प्रतिपादन करने के लिये पुनः उड़ जाती है। वह सोचती है यदि कुवंर को मेरी आवश्यकता होगी तो वह अवश्य आयेगा।

मिरगावती मन भइं अस कहा, इहं कहु मोर चाह जो अहा।[2]
जोरे मोहिं यह चाहा आइ हमरहुं गांव
कहेसि चीर कैसे छुवै पाउँ, उड़िरे इहा हुति जाउँ।

किन्तु कठोरता का प्रदर्शन करती है अंतर में वह व्याकुल प्रेमिका है। अपने राज्य में वह सारे पक्षी से पूछती है आशा पूर्ण नेत्रों से कुवंर की प्रतीक्षा करती है।

आसा लुबुधि पुछि सों वह, मकुहि मिलै वह आइ।[3]

वह प्रेम में अपने अस्तित्व को समाप्त कर देती है कुवंर से नेत्र मिलने पर पानी में बूंद की तरह अपने आपको विलीन कर देती है दो होने का अस्तित्व समाप्त करके कुवंर मय हो जाती है। वह इस प्रकार कुवंर से मिलती है मानो।

जिउ जिउ एक परान घाह देखो बुझि समत्थ
पसरी पुरूई पिरिन्त के छाई रहे दुहुँ गन्त।[4]

1- मृगावती पृ० 202, छ• 337
2- मृगावती पृ० 166, छ• 166
3- मृगावती पृ० 337, छ• 202
4- मृगावती पृ० 318, छ• 296

इसी प्रकार मान, ईर्ष्या, सौतदाह की मानसिक भावनाओं से युक्त एक सामान्य नारी के रूप में मृगावती कथा के उत्तरार्द्ध में प्रस्तुत होती है।

मान भाव से चली सुनारी, दौरि कुवंर करगही पियारी।[1]

वह आत्मदर्प भाव से सौतिया दाह से दंशित है और सौत से कहती है कि मेरे लिए तो पूरे एक योजन तक मेरा प्रिय गया तुम्हे अकेली छोड़कर तुमसे बात भी नही पूछा। यहाँ मृगावती का मानसिक स्तर सामान्य नारी के रूप में उद्घाटित हुआ है।

मृगावती का पत्नी रूप स्पृहणीय है कुवंर के आने पर वह – समर्पिता नारी के रूप में प्रस्तुत है।

"रानी देखु कुवंर जा आई, उतरी सेज सईं परू सोहराई
परग चारि चलि किहेसि जोहारू, आवहु स्वामि करहु अहारू
तहिया भुगुति दिहेउ तोहीं, सेजिवँसि अब भुगतउ मोंही।[2]

कथावस्तु में वह अन्तर्मुखी नायिका के रूप में प्रस्तुत है वह अपने प्रेम का प्रदर्शन सखियों से भी नहीं करना चाहती है।

मृगावती में विव्वोक भाव का रूप स्पष्ट परिलक्षित है। वह

1- मिरगावती पृ0 80 , छ. 403

2- मिरगावती, पृ० 260, छ० 230

कुवॅर के योगी रूप में क्रोधित हो उठती किन्तु अन्दर से प्रसन्न है।

"अबहुँ ढीठ बात तुम करहू, अवक होइ के न चुप रहहि।[1]

अस मैं ढीठ न देखि भिखारी, मारि न जाइ नहिं दइ गारी।

कथानक में मृगावती वियोगी रूप में भी दृष्टव्य है।[2]

अति वियोग किकली वह दुखी, भवॅर माँझ मालति पुनि सुखी।

कुवॅर को राक्षस द्वारा उड़ा ले जाने पर वह अत्यन्त विहवल हो उठती है। उसका वियोग हृदय से संभल नहीं पाता, वह उसी मार्ग पर अपनी दृष्टि टिकाये अपलक निहार रही है जिधर उसके प्रिय गये हैं।

"अति रे वियोग वियापी रामा, विसंभर कहु न सभार[3]

लाइ नैन दुइ भारग राखिसि भूली पंथ निहार।"

कथा के उत्तरार्द्ध में मृगावती का चरित्र सामान्य नारी के रूप में अवतरित हुआ है इस रूप में उसका प्रेम पुरैइनि के पत्ते सदृश फैल गया है वह दो शरीर एक प्राण हो गई है।[4]

वह नारी जनित समस्त दुर्बलताओं एवं क्षमताओं से युक्त है। इस प्रकार मान, ईर्ष्या, असूया आदि भावनाओं की भाव-लहरी में डूबती उतराती आदर्श पत्नि के रूप की दिव्य झाँकी सजाती है। भारतीय सती नारी के गरिमा कौर गौरवान्वित करते हुए कुवंर के साथ जलकर सती हो जाती है।

मिरगावती औ रूप मनि रानी लईकै जरी कुंवर के साथ

भसम भइ सब जरि कैं, चिन्ह रहा न जात।

1- मृगावती पृ0 260 छ. 317
2- मृगावती पृ0 316 छ. 293
3- मृगावती पृ0 161, छ. 267, शिवगोपाल मिश्र
4- मृगावती पृ0 318, छ. 296
5- मिरगावती पृ0 383, छ. 408

पद्मावती :

यह पद्मावत् की प्रमुख कथा नायिका है। कथा में इसका विशिष्ट स्थान है यह सिंघल देश के राजा "गंधर्व सेन" की पुत्री है। कथा के पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध की केन्द्र बिन्दु पद्मावती ही है। काव्य में ऐतिहासिकता एवं काल्पनिकता दोनों दृष्टि से पद्मावती महत्वपूर्ण है। अन्योक्ति रूप में कवि पद्मावती को बुद्धि का प्रतीक कहता है। नायिका का प्रेम सुये द्वारा गुण श्रवण से उद्भूत है। पद्मावती चंपावती के कुक्षि से उत्तम नक्षत्र में पैदा हुई है।

चंपावती जो रूप सवांरी पद्मावती चाहि औतारी,[1]

कहीं "कहीं" पाठ भेद के अनुसार बासुदेव शरण अग्रवाल ने इस पंक्ति को इस प्रकार दिया है -

चंपावती जो रूप उतिभांहा, पद्मावती कै जोति मनछांहा।

कवि का अभीष्ट अलौकिक रूपवती है उसके कुरंग नयन, कीर सी नासिका, कमल मुख केहरि-कटि यौवन भार से झुकी नायिका को सम्पूर्ण कलाओं से रच कर बनाया गया है।[2]

पद्मावती का विरही स्वरूप भी उसके चरित्र की विशेषता है। पद्मावती का विरह पार्थिव है। उसका यौवन नये हाथी के समान है

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 70 छ॰ 50

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 766 छ॰ 55

जो निरंकुश है। उसका यौवन गंगा सदृश है, जो लहरें मार रहा है। वह यौवन के अथाह समुद्र में डूबी है। यौवन रूपी बारी को सुरक्षित नहीं रख पा रही है। उसे विरह रूपी हाथी नष्ट कर रहा है।

"अब जोबन बारी को राखा, कुंजर विरह विधंसे साखा,
जोबन मैमंत्त न कोइ ,नवै हस्ति जो आंकुस होई।
जोवन भर भादों जस गंगा, लहरें देई समाइ न अंगा,
परिउ अथाह धाय हौं जोबन उदधि गंभीर
तेहि चितवौं चहुदिसि, जो गहि लावै तीरे।"[1]

पद्मावती के प्राणों को उसका यौवन दग्ध कर रहा है।

"जोबन पंखी विरह वियाधू, केहरि भयउ कुरंगिनि खाधू
कनक पानि कित जोवन कीन्हा और न कठिन विरह मोहिं दीन्हा[2]

पद्मावती की दूरदर्शिता सराहनीय एवं स्तुत्य है। भारतीय नारी की गरिमा एवं दृढ़ता का गोचर उसके चरित्र की विशिष्टता है। यह विशेषता राघव-चेतन के निष्कासन के बाद, गोरा बादल को तैयार करने के समय मिलता है। गोरा बादल को साहस दिलाती है, रोती है, रानी पन भूलकर स्वयं सेवक के द्वार पर जाती है यह सब पद्मावती के चरित्र के उत्कृष्ट पहलू हैं[3] पद्मावती बादल को उसके शक्ति की प्रेरक बनती है।

"तुम बलवीर जैस गंगदेऊ, तुम शंकर और मालदेऊ
जस हनुवेत राघव बंदी छोरी तस तुम्ह छोरि मेरावहु जारी"[4]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 233, छ० 174
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 235, छ० 176
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 516, छ० 49
4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 163, छ० 653

देवपाल दूती को उसका फटकारना उसके एक निष्ठता पतिव्रता के दृढ़ता को[1] व्यक्त करता है। पद्मावती सारी विशिष्टतायें रखते हुए भी नारी जनित दुर्बलताओं से युक्त है सौतिया, डाह ईर्ष्या भाव, रूप गर्व, प्रेम गर्व, उपनायिका के साथ उद्धत होकर वाद-विवाद करना आदि उसके दैवि स्वरूप को ध्वस्त करते दिखाई पड़ते हैं।[2]

पद्मावती में अन्य नारी के आदर्श गुण प्रदर्शित होते हैं वह पतिव्रता, त्याग मयी, आदर्श भारतीय नारी के रूप में सम्पूर्ण काव्य में दृष्टव्य है।

रत्नसेन के युद्ध से आने के पश्चात् वह विहवल हो उठती है अकिंचन बन जाती है उसके पास पति को देने के लिये प्राण के सिवा कुछ नहीं है। उछाह के साथ वह अपने तन, मन यौवन जीवन सबका न्यौछावर करती है।

"न्यौछावर सारौ तन मन जोबन जीउ",[3]

सरवस्व निछावर करने के बाद भी उसे लज्जा आती है वह कौन सी पूजा पति को दे।

> पूजा कौन देउं तुम्ह राजा, सबै तुम्हार आव मोहिं लाजा
> तन मन जोबन आति करहुँ जीवकादि न्योछावर धरउं
> पंथ पूरि के दृष्टि बिछाउ, तुम्ह पग धरहुँ शीश में लावहुँ
> पाँय निहारत पलक न मारौ, बरूनि सेति चरनरज झारौं[4]

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 773
2- जायसी ग्रन्थावली पृ० 560 से 577, नागमती पद्मावती विवाद खण्ड
3- जायसी ग्रन्थावली पृ० 788 छ॰ 19
4- जायसी ग्रन्थावली पृ० 794, छ॰ 683
5- जायसी ग्रन्थावली पृ० 805, छ॰ 693

मान सरोदक खण्ड में सखियों के साथ नैहर सुलभ खेल में प्रवृत्त हो जाना, हार का खोजना, हार के खोजाने पर आंखों में आंसू छल-छला जाना, क्रीड़ा कलाप की स्वच्छन्दता, जल क्रीड़ा के समय की उन्मुक्तता दर्शनीय है। अतः यहाँ पद्मावती की नारी जनित दुर्बलता परिलक्षित होती है।

"लागी केलि करै मझनीरा, हंस लजाइ बैठि होइ तीरा,
पद्मावती कौतुक कह राखी, तुम ससि होहि तराइन्ह साखी
बाद मेलि कै खेलि पसारा हार देइ जो खेलत हारा"[1]

"नैन सीप आंसू तस भरे जनौ मोती बिरही सब ढरे
हार गवांइ सो ऐसे रोवा, हेरि हेराइ लेइ जो खोवा"[2]

पद्मावती का प्रेम मय स्वरूप उसके व्यक्तित्व का विशिष्ट अंग है। रत्नसेन के योग के प्रभाव से प्रेम वश होकर वियोग धारण कर लेती है।

"गही प्रेम वस विरह संजोगा"[3]

"नीद न परे रैनि जो आवा, सेज केवांच जानु कोइ लावा"

किन्तु प्रेमा कुलता में पद्मावती का प्रेम अन्धा नहीं है। हिरामन के द्वारा रत्नसेन की प्रशंसा सुनकर पद्मावती के मन में जगने वाला अभिमान भी विवेक जन्य है। पद्मावती का यह कहना कि कंचन को कांच का लोभ नहीं होता नग ही उसके साथ शोभा पाता है। यह उसकी सजगता एवं दूरदृष्टि का परिचायक है।

"कंचन करी न कांचहि लोभा, जो नग होंहि तो पावहि शोभा"[4]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 90 छ. 65
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 91, छ. 66
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 243 छ. 183
4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 230 छ. 172 रा0ना0 शर्मा

पद्मावती का स्वरूप वहाँ पर बड़ा ही संशय पूर्ण हो जाता है जब "रत्नसेन पद्मावती मिलन खण्ड" में पति से बिछड़ी नारी अपने प्रिय का दुख बड़े मनोयोग से सुनती है, अपने दुख का भी उद्घाटन पूर्ण कारूणिकता के साथ उद्घाटित करती है। उसका कहना कि तुम मुझे महल के वैभव और प्रेम सरोवर के पास छोड़ गये थे किन्तु तुम्हारे सान्निध्य बिना स्नेह सरोवर भी सूख गया, तुम्हारे बिना महलों का वैभव मेरे लिए कोई औचित्य नहीं रखता।

"तुम पिउ आइ परी अस बेरा, अब दुख सुनहु कंवल धनि मेरा,
छोड़ि गयउ सरवर कंह मोहीं सरवर सूखि गयउ बिन तोहीं।
केलिकरत जो हंस उड़ि गयऊ दिनियर निपट सो बैरी भयऊ
गइ तजि लहरैं पुरइनि पाता, मुयेउ धूप सिर रहेउ न छाता,
भयउ मीन तन तलकै लागा, विरह आइ बैठा होइ कागा"[1]

पद्मावती क्षत्राणी बाला है, साहसी है, फिर वह यह कैसे समझ गई कि पति से यह बात कहना उचित है और वह भी वीर खुद्दार पति जो अभी अभी बन्दी गृह से छूट कर आया है, जो अपनी प्रिया के लिए दर-दर भिखारी योगी बना, वही प्रिय यदि यह सुनेगा कि कोई राजा उसकी अनुपस्थिति में उसकी प्रिया से प्रेम सन्देश दे, यह स्वप्न में भी सहन नहीं कर सकता। यहाँ तो प्रत्यक्ष पद्मावती प्रिय से मिलन की ऐसी दशा में कह रही है, जहाँ प्रिय का उद्वेलित होना अवश्यंभावी है। और वही हुआ भी, वह युद्ध किया और वीरगति को प्राप्त हुआ।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 179, छ. 86 रा0ना0 शर्मा

"दूती एक देवपाल पठाई ब्राहमनि वेश छरै मोहिं आई,

कहै तोर हौं आइ सहेली, चलि लेउ जाउ भंवर जहं वेली

तब मैं ज्ञान कीन्ह सत् बाधा, होंहिं कर वोल लागि विषबाधा[1]

यहाँ पद्मावती "मति हरण" नारी के रूप में दृष्टिगत होती है।

पद्मावती के सती रूप का ~~औज्ज्वल्य~~ सत् एवं पतिव्रता भारतीय नारी के आदर्श स्वरूप का दिग्दर्शन है। उसने "जिउ न्योछावर" करने की जो वाणी मुख से कही, उसे कर्तव्य के द्वारा प्रतिपादित भी करती है, निराकार भाव से कोई हल-चल नहीं, राज्य वैभव की कोई आकाँक्षा नहीं। वह प्रिय मिलन के लिये जितनी व्याकुल थी वह व्याकुलता भी समाप्त प्राय हो जाती है। अपने वचन को अन्तिम रूप देती है "न्यौछावर करितन छह रावों, छार होई संग बहुरिन आवैं[2]

"दीपक प्रीति पंतग जेउं जनम निबाह करेउ

न्योछावरि चहु पास होई, कंठ लागि जिउ देउं"[3]

यह है पद्मावत के पद्मावती के चरित्र का वैशिष्ट्य वह एक सम्पूर्ण भारतीय ललना है प्रिय के मिलन के पूर्व वह अवश्य यौवन दग्धा, रूप मुग्धा एवं कुट्टमित भावनापूर्ण थी किन्तु प्रिय मिलन पश्चात् वह एक समर्पिता, एक निष्ठता, पतिव्रता, सतधर्म, गृहणी, दूरदर्शी, प्रेम विहृवल एवं नारी के सम्पूर्ण भावनाओं की तरंगिणी पद्मावती सूफी साहित्य की ऐतिहासिक

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 798, छ॰ 687

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 803, छ॰ 69।

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 803, छ॰ 69।

नारी है जिसे जायसी ने भाव तूलिका के रंगों से रंग कर हिन्दी साहित्य में नारी जाति का सम्मान दिया है। उसे ऊँची भाव भूमि पर बैठाया है। विलास एवं आध्यात्म की लौकिक से पारलौकिक के शिखर पर सुरूचि एवं सम्पन्नता से संवारा है। अंततः उस पतिव्रता नारी का पर्यवसान पति के कंठ से लगकर होता है, जो स्वर्ग को रतनार करती है।[1] जो उसे मन से नहीं चाहा उसके हाँथ में छार के अलावा कुछ नहीं प्राप्त हुआ।[2]

मधुमालती :

मधुमालती सूफी काव्य की आदर्श नायिका है। कथा में उसका विशिष्ट स्थान है। उसका प्रेम प्रत्यक्ष दर्शन से उद्भूत है। यह महारस नगर की राजकुमारी विक्रम की पुत्री है, कनक गिरि के राजा सूर्यभानु के पुत्र कुंवर से प्रेम करती है।

कथा में यह दो रूपों में प्रस्तुत है प्रथम स्वरूप इसका पक्षी रूप है इसमें यह विरहिणी नारी के रूप में व्यंजित है। दूसरे रूप में वह लौकिक नारी के रूप में प्रस्तुत हुई है। कवि ने उसके अलौकिक रूप का निरूपण किया है। इस रूप में सौन्दर्यमयी दिव्य विराट रूप में प्रस्तुत है।

"मधुमालती मूलतः ब्रह्म के विराट रूप सौन्दर्य का प्रतीक[3] है उसके सौन्दर्य में ब्रह्म का विराट प्रभाव लक्षित होता है। इसमें संदेह नहीं कि मधुमालती का सौन्दर्य वर्णन अलौकिक धरातल पर टिका हुआ है। परन्तु उस अलौकिक धरातल के मूल में परम सौन्दर्यशाली अलौकिक सत्ता का ही चित्र अंकित है।"

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 805, छ• 693
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 806, छ• 694
3- दर्शन लाल सेठी, मधुमालती का पुर्नःमूल्यांकन, पृ0 28

मधुमालती में रूप वैभव का विलास भी है, आस्वाद की अमर[1] गरिमा स्पर्श की तीव्र अनुभूति एवं गन्ध की भापकता की है। सबसे महत्व-पूर्ण बात यह है कि उसमें अतृप्त दमित इच्छाओं और सर्व कालिक सत्य का उद्घाटन किया गया है। मधुमालती का विम्ब एक ऐसा दर्पण है जिसमें वैराग्य सुख-दुख, हर्ष-विषाद, उल्लास वैभव सब कुछ प्रतिबिम्बित होता है।

सुनौंकुवंर एक बचन हमारा, धरम पंथ दुहु जग उजियारा[2]
जाके हिरदय धरम गा जागी, सो कस परै पाप के आगी।

दूसरे रूप में मधुमालती पक्षी रूप में है इस रूप में वह अत्यन्त विरही है मधुमालती कष्ट सहिष्णु है माता द्वारा पक्षी रूप पाने पर निराकार भाव से उड़ जाती है। प्रिय रट लगाते हुए संसार के सारे कार्य को त्याग गिरि, पर्वत, कदंराओ, सागर, समस्त सृष्टि में अपने प्रिय को खोजती फिरती है। मधुमालती का प्रेमिका स्वरूप काव्य में अत्यन्त विशिष्ट हो गया है।[3]

पक्षी रूप में मधुमालती अपने भाषा, विचार, भाव व्यक्त नहीं कर पाती उस परिस्थिति में उस प्रिय-हीन प्रिया का मानसिक अंर्तद्वन्द कितना कष्ट साध्य है, वह पागल पक्षिणी कजली बन गोदावरी मथुरा, प्रयाग निःशब्द होकर उड़ती हुई[4] अपने प्रियतम को अविराम, अविकल होकर ढूढ़ रही है उसके प्रेम की तीव्रता सराहनीय है जिस बाला ने मात्र

1- दर्शन लाल सेठी मधुमालती का पुर्न मूल्यांकन पृ0 28

2- मधुमालती पृ0 106 छ. 127

3- मधुमालती पृ0 307, छ. 354

4- मधुमालती पृ0 308 छ. 355

रात्रि के कुछ प्रहर जिसके साथ बिताये वह भी स्वप्न सदृश उसके लिए कितनी अधीर है।

मधुमालती की भावना अपने लिये ही नहीं दूसरों के लिए भी सौहार्दपूर्ण है तारायन्द मधुमालती को पक्षी रूप में पकड़ लेता है। मधुमालती तारायन्द के द्वारा दिया गया आहार ग्रहण नहीं करती, वह देखती है तारायन्द भी उसके न खाने से निराहार है। वह करूणा हो उठती है।

> मोहिं तोहिं/दह कौन पिरीती, पंछी मानुज कौन पैरीती,[1]
>
> मैं पंछी जिउ जोबन दै करि, यह दुख लियेहु बसेहि।

वह मधुमालती जो पक्षी रूप में पूरे वर्ष वनों में भटकती रही दुख सहे, पानी में भीगती रही और तारायन्द के सहयोग से अपने पक्षी रूप से मुक्त होकर मानवी रूप में आती है तो उच्छृंखल नहीं होती, माँ से प्रतिरोध नहीं करती, गृह त्याग नहीं करती बल्कि धीर-गम्भीर रहती है अपने पूर्व स्वरूप को पाकर वह विनय के साथ दोनों हांथ जोड़ती है अपना शीश नवाती है। यह नारी की महानता का अनन्य उदाहरण है। वह विनम्र हो उठती है मालिन से हांथ जोड़ती है।

> "पहिल रूप आपन जब पावा, हांथ जोर विधिकहं सिरनावा[2]
>
> "बारिन्ह सेंउ विनवाकर जोरी"[3]

मधुमालती के चरित्र का विशिष्ट पहलू उसका कृतज्ञता ज्ञापन है वह राजकुमारी है, किन्तु अपने अस्तित्व का समापन कर देती है। तारा चन्द के पावों पर गिर पड़ती है। कहती है, तुम मेरे उद्धार कर्त्ता हो

1- मधुमालती पृ0 316, छ॰ 364
2- मधुमालती पृ0 350 छ॰ 394
3- मधुमालती पृ0 350 छ॰ 401

माता-पिता तो मात्र जन्म दिये तुमने तो मेरे प्राणो की रक्षा की है। मधुमालती अपने नेत्रों में जल भरे हुए तारायन्द से उसके किये हुए उपकारों को रो-रो वर्णन करती है।

"मधुमालती लोयन जल भरी,तारायन्द के पाँयन्ह परी
मधुमालती रोइ-रोइ कहबाता तै मोर जनम-जिउकर दाता।"[1]

सामाजिक व्यवहार एवं पारिवारिक क्षेत्र में भी मधुमालती कुशल एवं व्यवहार पटु है। वह सभी से प्रेम करती है वह सजीव वस्तुओं से तो प्रेम करती ही है निर्जीव वस्तुएं भी उसके स्नेहिल भावों की दृष्टि में है। ससुराल गमन के समय मधुमालती -

समदै सब परिजन परिवारा समदै फिरि-फिर पौर किवारा,
समदै पालक सेज तुराई समदै राज मंदिल कंठ लाई,[2]

कोमल भाव जगत में मधुमालती हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानक काव्य की प्रमुख नायिका है। जो नायिका निश्चेष्ट वस्तुओं के प्रति भी विदाभाव की सूचना देती है और कंठ लगातती है वह चेष्ट एवं चैतन्य जीव जगत में व्यक्तियों से कितना प्रेम करती होगी सोचने का विषय है।

तारा चन्द के प्रेमावियोग में होशोहवास खो बैठने के बाद मधुमालती विक्षिप्त हो जाती है। वह वीर-वीर करके दौड़ पड़ती है।

1- मधुमालती पृ0 96, छ॰ 523

2- मधुमालती पृ0 454-55, छ॰ 510

और करूण-क्रंदन करती है। उसके ऊपर पानी डालती है। पूछती है तुम्ह अपनी पीड़ा बताओ मैंने तुम्हारी कोई सेवा नहीं की यदि तुम्हें किसी से प्रेम हो तो बताओ।

"जो मै नाव तेहिका सुनिपावौ सरग सुरहिनी अनि मेरावो"[1]

कोमल नारी के रूप में मधुमालती समस्त कथानक को अपनी हृदय की कोमलता से आप्लावित करती हुई दिखाई पड़ती है। उसकी कोमल भावनाएं परिस्थितियों के साथ-साथ घनी भूत होती हैं। इसके दर्शन हमें तब मिलते हैं जब चित्र सारी में कुवंर मधुमालती के रूप सुषमा की ज्योति का दर्शन कर मूर्छित हो जाता है। उस समय वह अपने अंचल से उसका मुख पोछती है।

गहि आंचर पोंछिसि चखु पानी।[2]

समस्त कथानक में मधुमालती मर्यादित रूप में प्रस्तुत हुई है। उसे अपने शील मर्यादा का सतत् ध्यान है। मिलन की मादक घड़ियों में भी उस यौवन-वती कुमारी का मानसिक संतुलन बना रहता है। गम्भीर वाणी से युक्त वह प्रेमांध कुवंर को समझाती है।

हालाकि की आलोचकों का मत है कि यहाँ इस प्रकार के निरूपण में रसभाव की क्षति होती है। किन्तु कुछ भी हो मधुमालती के इस लोक मर्यादा की रक्षिका का रूप सराहनीय है वह कुवंर से कहती है।

कहेसि कुवंर अकरम का कीजै, मतापिता अंकलक नहीजै[3]

तिलएक सुखके कारन, सरवस कौन नसावा

1- मधुमालती पृ0 423, छ॰ 478
2- मधुमालती पृ0 93, छ॰ 111
3- मधुमालती पृ0 104, छ॰ 125

और इस प्रकार मधुमालती स्नेह, दया, करूणा, ममता एवं अन्य गुणों से युक्त असूया की वृत्ति से मुक्त एक आदर्श नारी के रूप में कथावस्तु में प्रस्तुत हुई है।

§2§ चित्रावली :

चित्रावली काव्य की मुख्य नायिका है यह चित्रिनी नारी है, काव्यों की अन्य नायिकायें पद्मिनी जाति की है। चित्रावली उन सब में अलग है। चित्रावली का प्रेम सुजान के चित्र दर्शन द्वारा होता है।

अतः चित्रावली का प्रेमिका स्वरूप अनन्य है वह एक उन्मादिनी प्रेमिका के रूप में व्यंजित हुई है। चित्र सारी में कुवंर के चित्र को देखने मात्र से वह चेतना खो बैठती है प्रेम बंधन में बंध जाती है, वह चित्र उसके नेत्रों में समा जाता है चेतना जगत से अचेतन, कल्पना एवं स्वप्नों के संसार में विचरण करने लगती है वह मूर्ति सहस्त्रों कला रूप होकर उसके हृदय में समा गयी है वह उस चित्र को निर्निमेष, अपलक, टकटकी लगाये हुए ऐसे देख रही है मानो, चांद को चकोरी देखती हो।

"एक टक लाइ रही मुख ओरा, चित्र चांद भये कुंवरि चकोरा
नैन लाइ मुरति सो रही, डोलि न सकी प्रेम की गहीं
सहस कला होई हिये समाना, निरखि हिये चित चैत भुलाना।[1]

इस प्रकार चित्रावली की चरित्र सृष्टि कथावस्तु में एक भाव प्रवण, कल्पना-शील तथा मुग्धा के रूप में हुआ।

यह अत्यन्त ज्ञानवती है अमरकोष, गीता, चौदह विद्याओं की ज्ञाता है, कलाकार है।

अमर कोष गीता पुनिजाना चौदह विद्याकेर निधाना।[2]

1- चित्रावली पृ0 30 छ. 122
2- चित्रावली पृ0 40 छ. 160

जब सुजान के यहाँ परेवा को भेजती है तो अपना संदेश देते हुए कहती है कि यह दर्पण देना और कहना कि इसे स्वच्छ रखे, इस पर काई की पर्त न जमने पाये अपनी दृष्टि इसी निर्मल दर्पण पर लगाये रखे तभी मेरे रूप की ज्योति जो बारह सूर्यों की ज्योति मिलकर भी नही समता करते तुझे दिखाई पड़ेगी। इस प्रकार के गूढ़ संदेशे में चित्रावली का आध्यात्मिक स्वरूप कवि ने व्यंजित करने का प्रयास किया है।

मोरे रूप आहि सो जोती, बारह भान किरन की जौती[1]

माता द्वारा चित्र धुलवा जाने पर उसका वियोगी रूप निखर कर आया है। बारह महीने वियोगिनी रूप में चित्रावली दुखी रहती है उसे चंदनहार चोली सभी दाहक लगते हैं|कवि बिहारी की नायिका को भी "विरह अगिनि"[2]एवं "विरह ज्वाल जरिबो लावे" की तरह लगती है।[3]

पवन चित्रावली की व्यथा कथा पत्तो से कहता फिर रहा है। वृक्ष के सारे पत्ते हिल रहे हैं वे यही कह रहे हैं कि हे प्रिय तुम्हे चित्रावली की जरा भी परवाह नहीं उसके उपर जरा भी दया नहीं है।

कहत फिरत मारूत व्यथा, पातन सौं वन माहिं[4]

धुनत सीस सुनि-सुनि सबै, पिया दया तोहि नाहिं।

चित्रावली का वियोग प्रखर एवं दाहक है। भ्रमर उसके हृदय से उड़ते हुए लगा मात्र था, और उसका वर्ण श्याम हो गया।

इसी प्रकार असूया भाव के अन्तर्गत वह अन्य नायिकाओं से इतर है इस रूप में वह अत्यन्त कठोर है। अपने प्रिय के सानिध्य में है किन्तु वहाँ

1- चित्रावली पृ0 108, छ. 44।
2- हिन्दी काव्य में श्रृंगार प्रथा और महा कविबिहारी, पृ0339, छ. 110
3- ,, ,, ,, ,,
4- चित्रावली पृ0 107, छ. 43
5- चित्रावली पृ0 119, छ. 29

भी वह कठोर रूप में निरूपित है।

बिनती कै रहहु सुजाना चित्रनी कही एकौ नहिं माना[1]

गहु न हांथ रे वावर जोगी, तासो लाग होइ गरभोगी।

चित्रावली का चरित्र कथानक में एक कुलवन्ती नारी का है। वह गुप्तरूप से अन्तर में सुलगती है वह लाजवन्ती है उसके पैर में बेड़ी पड़ी हुई है, कुल-जाल की डोरी से बंधी है।[2]

चित्रावली व्यावहारिक जगत में भी कुशल है वह माता-पिता को प्रेम करती है उनके पांव स्पर्श करती है।[3] सौत से अथाह द्वेष रखने वाली चित्रावली उसे अपनी बहन मान लेती है।

इस प्रकार चित्रावली कोमल भाव रखती है कहीं कहीं अत्यन्त कठोर हो गई है वह अपने प्रेम का भेद खोलने वाले को अग्नि कुण्ड में डलवा देती है।[4]

काव्य में चित्रावली असूया भाव के अन्तर्गत खण्डिता एवं कलहन्तारिका के भाव-भूमि में प्रस्तुत होती है। वह कहती है कि तुम्हारे संग मुझे सुन्दर स्त्री प्रगट दिखाई पड़ती है। वह नायक को उपालम्भ देतती है।

"तुम संग सुन्दरि नारि एक परगट सूझे मोहिं[5]

मोहिं देख नौ सात बनायों, तजि सो नारि आनि कंठ लगायो।

1- चित्रावली पृ0 119, छ॰ 530

2- चित्रावली पृ, 58, छ॰ 226

3- चित्रावली पृ0 142, छ॰ 583,

4- चित्रावली पृ0 132, छ॰ 541

5- चित्रावली पृ॰ 130, छ॰ 531

कवि बिहारी ने भी खाण्डता नारी का रूप वर्णन किये है।

पलक पीक अंजनु अधर धरे महावर भाल।[1]
आजू मिले सो कलि करि, भले बने हौ लाल।

बाल कहां लाली भई, लोईन कोई ना भांह[2]
लाल तुम्हारे दृगनु कीपरी दृगनु में छांह।

इस प्रकार नारी जनित क्षमताओं एवं दुर्बलताओं से युक्त चित्रावली समस्त काव्य में अपनी चरित्र पताका को कहीं शिखर पर लहराती है, कहीं नीचे झुकाती, कहीं स्थिर किये हुए, समस्त नारी गत भावना से भरी पात्र है।

जवाहर :

यह चीन देश के राजा आलम शाह की पुत्री है। यह कथा की मुख्य नायिका है। कथा वस्तु में यह एक विह्वल प्रेमिका के रूप में आई है। जिसका प्रेम "गुण श्रवण" एवं "स्वप्न दर्शन" से उद्भूत है। यह "बलख नगर" के "सुलतान" के पुत्र हंस से प्रेम स्वप्न दर्शन के द्वारा करने लगती है। इसका संयोग स्वप्न में हंस से तीन बार होता है। प्रथम बार स्वप्न में हंस को देखती है स्वप्न में ही उससे बात करती है प्रेमा-लाप के प्रारम्भ होते ही उसका स्वप्न टूट जाता है। दूसरी बार विवाह पश्चात् एवं तीसरी बार पति हंस के बलख नगर चले जाने के पश्चात् |

1- हिन्दी महाकाव्य में श्रृंगार परम्परा महा कविबिहारी डा० गणपति चंद्रगुप्त पृ० 318-19

2- हिन्दी महाकाव्य में श्रृंगार परम्परा, महाकवि बहारी, डा० गणपति चन्द्रगुप्त, पृ० 318-19

इस नायिका के साथ दुर्घटनायें नाटकीय रूप में घटती है इसका विवाह दूसरे पुरूष से होता है किन्तु अलौकिकपरियों द्वारा अभीष्ट प्रिय "हंस" से इसका विवाह होता है इसके पिता इसका विवाह कहीं अन्य करते हैं जो सहेली शब्दपरी के सुझाव एवं स्वप्न दर्शन से उद्भूत प्रेम के कारण वह पिता द्वारा खोजे गये वर से विवाह नहीं करती उसके प्रिय संयोग में परियाँ सहयोग करती है।

जवाहर पूरे काव्य में विरही नायिका के रूप में व्यंजित है। नायिका जवाहर अपने प्रिय-वियोग का उद्घाटन विवाह पश्चात् हंस के रूप चले जाने के बाद करती है अपने आपको ही वह प्रिय-विरहिणी भूल जाती है। उसके अस्त व्यस्त वेश उजड़ी मांग सभी उसके वियोगी एवं बावली होने के लक्षण हैं। वियोग जन्य स्थिति में नायिका अपने लाज-संकोच खो बैठी है। वह मानव जगत के संवेदना से अदृष्ट होकर परियों के संसार में वनवासी होकर अपने विचारो को देने आई है। अपने कष्ट को सुनाने आई है।

रोवत भइ जोगन के भेसा, उधरागात टूट गये केसा[1]
लाज खोय निकरी बनवारी, बनपांखी ते करै विचारा।

कथावस्तु में नायिका मानसिक अर्न्तद्वन्द से उलझती हुई सी है माता-पिता के द्वारा गौना देने के लिए दबाव डाला जाता है किन्तु पति कोई और है इस प्रकार उसके जीवन में अनेकश: कष्टकारी परिस्थितियां आतीहै।

1- हंस जवाहर पृ0 202

जवाहर के चरित्र का उत्कर्ष उसके हरण के पश्चात् काव्य में दृष्टिगत होता है। इस व्यंजना में उसके सत् बल की तीव्र पराकाष्ठा है। अपने सतीत्व बल से नायिका जवाहर समस्त जादू-टोना पढ़ने वालों को प्रस्तर प्रतिमा बना देती है और स्वयं सत्य के सत्बल टिकी हुई अडिग है।

"रह गई सत्य टेक सत् साची"[1]

कथावस्तु में कथा प्रवाह क्रम को बनाते हुए जवाहर का भाव जगत अनेक रंग चित्रों भरा है। असूया भाव के अन्तर्गत जलन, द्वेष, क्रोध और भय भी व्यंजित है संयोग काल में वह एक उद्दाम प्रेमिका के रूप में पति को विलास सुख देती है।

दिवसहिं खेल और पिउ संगा, रैन सेज विहुरै नहीं अंगा।"[2]

जवाहर के दुख की तीव्रता पूरे काव्य में व्यंजित हैं वह दुख के वेदना से जल रही है अपने आपको पापिन कहती है।

मैं पापिन कस जानहुँ बिछड़ गये सरताज।[3]

विवाह पश्चात् हंस से बिछुड़ने पर वह डरी हुई मृगी समान है वह अपने नेत्रों से चारो ओर भयभीत हुई देख रही है,उसे कहीं उसका सम्बन्धी नहीं, वह नितान्त अकेली बाला है।

खोले नैन मिरग अति लोने, चखु उनीद चितवै चहुँ कोने।[4]

वह प्रिय को ही जानती है उसके अलावा संसार में कोई नहीं है। जो उसके हृदय रूपी अँधेरे गृह में दीपक जलाये।

1- हंस जवाहर पृ0 203
2- हंस जवाहर पृ0 201
3- हंस जवाहर पृ0 775
4- हंस जवाहर पृ0 192

तुमसो दीप जोत घर बारा तुम बिन कौन करे उजियारा।[1]

जवाहर की चरित्र सृष्टि वियोगिनी नायिका के रूप में कवि ने किया है। वियोगिनी वेश धारण कर केश खुला, शरीर अस्त-व्यस्त राज्य छोड़कर निकल पड़ती है।[2] यह विरही रूप में कुमारी है दुलार से पली किशोरी बाला है। जिसका पति समाज के सामने कोई और है अन्तर में कोई और।

यद्यपि जवाहर का जन्म स्थान विदेश है। फिर भी यह भारतीय आदर्श से सम्पृक्त नायिका है। वह वियोग विहवल है किन्तु उसे सत् की चिन्ता है। वह कहती है कि मैं अज्ञानी हूं मेरे सत् की तुम रक्षा करो।

हौं बिनु ज्ञान अहौं सठ भौरी, सत् रखाव सहाय करु मोरी[2]

वह स्वप्न के माध्यम से प्रिय के अधिक निकट आती है। जिससे वह कल्पनाओं की संत रंगी संसार में विचरती प्रतीत होती है। प्रिय का प्रेम वह प्राणों से भी ऊपर समझती है। प्रिय के बिना वह प्राणहीन है, उसका समस्त शरीर प्रिय के अभाव में स्पदंनहीन है।

पिउ कर मर्म आज मै जाना, पिउ बिनु नेम न और सुहावा[3]

पिउ की प्रीत प्रान उपराही, पिउ के बिना प्रान तन नाहीं।

सतीरूप में भी उसकी चरित्र सृष्टि श्रेष्ठ है। जवाहर अन्य नायिकाओं की भाँति अग्नि में जल कर अपने प्राण उत्सर्ग नहीं करती बल्कि अपने प्राण वह

1- हंस जवाहर पृ0 10

2- हंस जवाहर पृ0 135

3- हंस जवाहर पृ0 202

तेज हथियार से देती है।

यह प्रेमाख्यानक काव्य की ऐसी नायिका है जिसके ऊपर मिट्टी डालकर उसे इस दुख भरे संसार से सदैव के लिए मुक्त कर दिया गया है। वह अपने प्रिय के साथ चिर-निन्द्रा में लीन हो गई है।

"पढ़त मन्त्र ऊपर माटी दीन्ह",
चंद काटिवे मान छिपावा, ऊपर देहं कपूर का लावा,[1]
पातिहिं पांति सोवाय के, देत उपर ते छार।
पातिहिं पात ओढ़ाय के अंत छार की छूर।
अस्तु कवि इसका अंतिम संस्कार मुस्लिम रीति से करता है।

मैना : उपनायिका,

मैना चंदायन की उपनायिका है। यह अत्यन्त शालीन एवं गम्भीर है पति गृह में रहकर सास एवं पति की आज्ञाकारिणी पत्नी के रूप में मैना के चरित्र की सृष्टि हुई है। मैना एक आत्म स्वाभिमानी नारी है। उसे जब ज्ञात होता है कि चांदा उसके पति पर अनुरक्त है वह तभी चांदा के मालिन को बुलाकर चांदा की शिकायत करती है।

मैनहिं मालिन तउहिं बुलाई, उरहन देइ महरीनी पठाई
चांद भुंवगिनी राइ कर धीया, अइस न कीज जइस वह कीया।[2]

मैना पति को समझाती है कहती है कि 'फूल न बीनि पराई बारी' और

1- हंस जवाहर पृ0 27।

2- चंदायन पृ0 262, छ. 269

पति लोर के युद्ध यात्रा पर जाते समय उसका व्यक्तित्व संकुचित हो उठता है कि वह व्यक्तिक भाव से सोचने लगती है। और कहती है कि "जाकरि नारि सो जूझ न जाई, बावन वन खण्ड रहा लुभाई"[1]

मैना पतिव्रता, सत् धर्म, सपत्निदाह, आक्रोश मान आदि नारिजनित गुणों एवं दुर्बलताओं से युक्त है।

वह यह जानती है कि उसका पति दूसरे पर अनुरक्त है फिर भी पति का शुभ चाहती है मैना अत्यन्त भावुक नारी है वह अत्यन्त दुखी है।

नीर समुद जस उलथहि नैना

चुइ चुइ बूंद परहिं थनहारा, जनु टूटहिं गज मुक्ता हारा।[2]

मैना में एक सुगृहणी कुशल पत्नी एवं आदर्श वधू के समस्त गुण सन्निहित हैं।

काह कहौ खोलिन माई, हउं फुनि आहहु धीय पराई

धियके जाति आही सब केरी, हउं फुनि भई तेहि कई चेरी[3]

मैना अन्तर्मुखी नारी है - वह लोरक से बात नहीं करती उसकी ओर दृष्टि भी नहीं डालती है।

"नारि अन्तर पटु अन्तर दीन्हा"

"निस्सासति रहहिं न पाइह सैना, दिष्टि न करहि बकति नहिं बैना"[4]

1- चंदायन पृ0 106, छ. 108
2- चंदायन पृ0 106, छ. 102
3- चंदायन पृ0 222, छ. 230
4- चंदायन पृ0 229, छ. 226

ऐसी बात नहीं की मैना रोना या चुप रहना ही जानती है वह तेज तर्रार है चांदा सामाजिक परिवेश में उससे ऊँची है वह चांदा के उद्दण्डता को कुछ समय सहन तो करती है, किन्तु जब उसका स्वाभिमान जगता है तो वह चांदा की दशा अस्त-व्यस्त कर देती है। वह वस्त्र हीन हो जाती है। उसके केश बिखर जाता है।

> तजेसि चीर चांदा भइ नांगी, परहाँथ गई फाटि पतांगी
> दस नखलागि दुइ थनहारा, औ देवता भैरगत मंझारा
> केस छूटि दहु दिसि छहराये, जनु नाबित अभुवा फिरिआयें
> घालि रूप बांगरी कई मैना गई सिरानी।[1]

मैना प्रिय लोरक के चतुरता को समझती है -

> "तजिमारग जो कुमारग जाई, सो कस मुख दरसावहि आई
> शुद्धशान्त जनु कहव न जानई, माँगत पान-त-पानी आनइ।"[2]

चांदा के प्रमुख नायिका होने पर भी मैना गुणों में नायिका से श्रेष्ठ है। वह पति व्रता स्त्री के रूप में सशक्त उदाहरण है। वह पति के रहने पर अन्य सूफी-उपनायिकाओं की तरह गृह त्याग नहीं करती है नहीं रोती विसूरती है, बल्कि भारतीय वधू की गरिमा को बनाये हुए वह शीलवती नारी गृह के भीतर रहती है।

मैना की दृष्टि सूक्ष्म है वह जानती है कि लोरक कहीं अन्य रात्रि व्यतीत करके आया है। वह सचेष्ट हो उठती है उसमें आत्मविश्वास

1- चंदायन पृ0 254, छ. 261

2- चंदायन पृ0 229, छ. 226

भर उठता है, वह लोर की इस दशा से क्षुब्ध हो उठती है और कहती है जो बुरे मार्ग पर अग्रसर हो चुका है वह अपना मुख कैसे दिखा रहा, उसे लाज नहीं आती है।

तजि मारग जो कुमारग जाहीं, सोकस मुख दरसावहि आही।[1]

मैना सामाजिक एवं मानसिक दोनों प्रकार से पुष्ट है। वह भाव विह्वल होकर आँसू नहीं गिराती बल्कि चांदा के अशोभन कृतित्व पर उसे क्षोभ होता है, ऐसी नारी के लिए जो पर पुरूष पर आकर्षित हो वह देव मंदिर में देवता के समक्ष विनती करती है और कहती है देव ऐसी स्त्री का भक्षण कर लो जो रात्रि में अपनी शैय्या त्यागकर दूसरे के सानिध्य के लिये भागती फिरती है।

अहो देवतेहि खायेहु, जो पर पुरूष हेराव,[2]
सेज छाँड़ि निसि अनितइ, फिरि फिरि धाव।

नागमती :

यह कथावस्तु में पद्मावती की सौत के रूप में व्यंजित हुई है। तथा रत्नसेन की पूर्व व्याहता पत्नी है। इसे जायसी ने दुनिया धंधा

के संकेत से व्यंजित किया है। इस अभिव्यंजना से नागमती के अनेकशः रूप काव्य में निरूपित है, काव्य में इस नायिका का स्थान

1- चंदायन पृ0 229, छ. 226

2- चंदायन पृ0 442, छ. 249

एक वियोगी नारी है। यह उपनायिका के रूप में दृष्टव्य है।

"नागमती पद्मावत की रूप गुण सम्पन्न श्यामवर्णा नायिका है[1] पद्मावती ही पूरे कथा साहित्य में नायक के साथ है। एक पति-परायणा हिन्दू स्त्री के रूप में कथा में उसके प्रेम की मार्मिक व्यंजना हुई है। अतः प्रति नायिका के दृष्टिकोण से कथा में उसका स्थान गौड़ नहीं होने पाया है। अपनी सहज स्वाभाविक विशेषताओं एवं दुर्बलताओं के कारण पद्मावत की कथावस्तु को अनुप्रमाणित किया है।"

नागमती का व्यक्तित्व पद्मावत् कार ने तीन रूपों में व्यंजित किया है। सर्वप्रथम उसका स्वरूप रूप गर्विता का है "नागमती"सुवां संवाद खण्ड में तदंतर इस रूप वृत्ति के दर्शन होते हैं।

कै सिंगार कर दरपन लीहा, दासन देखि गरब जिउ कीहा[2]
भलेहि सो और पियारी नाहां, मोरे रूप कोई जग मांहा।

दूसरे स्वरूप में वह प्रेम गर्विता के रूप में दृष्टव्य है। यहाँ पति परायणा स्त्री का पति-प्रेम गर्व स्वाभाविक है अतः प्रेम गर्विता रूप में भी उसके सामान्य स्वाभाव का ही परिचय मिलता है। उसे डर है कि कहीं रत्नसेन सूर्य के सदृश है, और तोता से पद्मावती का सौन्दर्य वर्णन सुनकर, उसे त्याग कर, उस सौन्दर्यवती के सान्निध्य में न चला जाय।

जेहिं दिन कहं मैं डरति हौं रैना छपावो सूर[3]
लैचँह दीन्ह कवंल कह, मों कह भुइ मयूर।

1- हिन्दी महाकाव्यों में नारी चित्रण पृ0 126
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 117, छ. 85
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 118, छ. 86

तीसरा स्वरूप उसका "नागमती पद्मावती विवाद खण्ड" के अन्तर्गत सामान्य नारी सुलभ ईर्ष्या वृत्ति के दर्शन होते हैं। "हिय विरोध मुख बाते मीठी" होती है बातों बातों में सौन्दर्य रूप का बखान करना, एक दूसरे को नीचा दिखाना, जली-कटी कहना, ये सभी नागमती के नारी जातिगत स्वाभाव का ही दिग्दर्शन करते हैं।

नागमती का सबसे शक्तिशाली पहलू उसका प्रिय वियोग जनित विरहोद्‌गार है, यह विरह उसके पतिपरायणा एवं हिन्दू नारी का सशक्त स्वरूप अभि-व्यंजित करते हैं। सर्वप्रथम तो उसे शंका है कि उसका पति कहीं किसी नागर नारी के वश में तो नहीं हो गया धीरे-धीरे उसकी शंका विश्वास में बदल जाती है।

नागर काहु नारी वस, परा तेई मोर पिउ मोसो हरा
सुआ काल होई लेइगा पिऊ, बिनु न जात जानवर जीऊ

वह सुये को ही काल समझती है- नागमती के चरित्र में स्त्री[1] सुलभ छल एवं चालाकी का भी भाव मिलता है सुये को बिल्ली द्वारा मरवाने का बहाना, तदुपरान्त दासी के पास जाकर पशोपंज में पड़ना ये सभी नारी जनित दुर्बलता का पद्मावत् कार ने बड़े कौशल के साथ निरूपण किया है।

नागमती विरहिणी है "पिउ वियोग अस बाउर जीउ" हो गई है उसका हृदय सूख गया है जिससे उसके हृदय पर हार भारी[2] लग रहा है।

1- हिन्दी महाकाव्यों में नारी चित्रण, पृ0 12, छ. 27

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 139, छ. 364

सखियां उसे उसके अस्तित्व का बोध कराती है "पाट महादेई हृदय नहारू" कहकर किन्तु नागमती तो प्रिय वियोग में रोती फिरती है मानव जगत से हार कर वह पक्षी जगत की ओर बढ़ती है[1] पक्षी उसके दुख से जल जाते हैं उसके पास नहीं जाते हैं। उसने पक्षी से संदेश दिया कहा कि मुझे भोग से कोई काम नहीं, मैं तो प्रिय को देखना चाहती हूँ।

"मोंहि भोग जो काज नवारि, सौंहदीठिको चाह न वारी"[2]

पद्मावत् की चरित्र भूमि में नागमती पूर्ण रूपेण पत्नी है उसे अपने प्रेम पर गर्व है। एक प्रेम मय पत्नी जो पति से जीवन पर्यन्त दूर रहती है और विरह ज्वाला में जलती रहती है।

उसका वियोगी रूप अत्यन्त दाहक है उसके वियोग में तीव्रता है। वह कहती है मेरे शरीर की राख वहाँ पड़े जहाँ मेरे प्रिय अपने पाव रखें[3] वह चित्तौड़ के पथ को अनवरत निहारती रहती है।[4] वह मनुष्यों से रत्नसेन का पता पूछते पूछते हार कर पक्षियों के देश में जाकर उन्हें अपना संदेश देती है।[5] वह भ्रमर और कौये से कहती है कि मेरे प्रिय से जाकर कहो कि तुम्हारी प्रिया की विरह अग्नि ने मुझे काला कर दिया है।[6]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 142, छ. 265
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 472
3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 375
4- जायसी ग्रन्थावली पृ0 364
5- जायसी ग्रन्थावली पृ0 380
6- जायसी ग्रन्थावली छ. 372

इस प्रकार नागमती, कथावस्तु में पद्मावती की अपेक्षा अधिक सशक्त चरित्र की स्वामिनी है। रत्नसेन बिना किसी आधार के उसे इस अपार संसार सागर में छोड़ गया है। जिसमें वह डूबती उतराती है।

अतः नागमती लौकिकता एवं आध्यात्मिकता के बीच खोई होने के कारण बहुत रमणीय प्रतीत होती है। नागमती को त्यागकर पद्मावती के प्रेम में आकंठ डूबे रहने पर भी वह पति के साथ चिता में सहर्ष प्रवेश कर सती हो जाती है और इस दुख भरे संसार में अलविदा दे समस्त नारी जाति का आदर्श बन जाती है।

"नागमती पद्मावती रानी दुवौ महासत् सती बखानी"[1]

§2§ रूपमनि :

यह सुबुध्या नगर के राजा देवराय की पुत्री है जिसे एक राक्षस उठाकर ले आता है और वहीं उसका कुंवर से साक्षात्कार होता है कुंवर उसकी राक्षस से रक्षा करता है। उसका विवाह उसके पिता उसकी इच्छा के विपरीत कुंवर से कर देता है। कुंवर की वीरता एवं राक्षस द्वारा मुक्ति सब मिलाकर रूपमनि के अन्तस् में कुंवर के प्रति प्रेम का अंकुर प्रस्फुटित हो उठता है। वह यह जानती है कि कुंवर मृगावती नाम की किसी राजकुमारी से प्रेम करता है।

वह प्रथम रात्रि में कुंवर के द्वारा उपेक्षित रहती है। उसके प्रिय के हृदय में मृगावती ही बसी रहती है वह कातर हो उठती है। उसका पति

1- जायसी ग्रन्थावली, छ. 992

उसे छोड़कर चला जाता है।

रूपमनि पूरे वर्ष विरहिणी रहती है। विरह उसे सौ सौ बार झुलाता है। उसके नेत्र के आंसू गंगा सदृश है। बिना केवट के उसकी नाव डूबती प्रतीत होती है उसके यौवन रूपी फल को विरह रूपी सुवा खाना चाहता है वह विरह से जर्जर और कमजोर हो गई कि अपने सत् की भी रक्षा करना कठिन हो गया है।

यहाँ रूपमती एक विरह विकल असहाय एवं विवश नायिका के रूप में अभिव्यंजित हुई है। रूपमनि पतिव्रता बड़ों का आदर करने वाली आदर्श नारी के गुणों से समाहित एक आदर्श पत्नी के रूप में प्रस्तुत हुई है। रूपमती में भी कुछ दुर्बलताएं हैं जैसे ईर्ष्या द्वेष, मान आदि रूप में प्रगट हुई इसके अन्दर असूया प्रवृत्ति अंश है।

नव तिय देख आदरस खाई, मरिहौं तिहं पर हत्ये लाई।[1]

यह उपनायिका कथावस्तु में वियोगिनी के रूप में व्यंजित हुई है।

बादल की पत्नी :

बादल की पत्नी की सृष्टि प्रासंगिक रूप में ही हुई है। उसके स्वरूप के दो रूप अभिव्यंजित हैं प्रथम नव वधू, द्वितीय क्षत्राणी के रूप में। नव वधू के रूप में वह सामान्य नारी के रूप में व्यंजित है। वह अत्यन्त

1- मृगावती पृ0 300, छ. 336

सौन्दर्य वती है वह सम्पूर्ण श्रृंगार से युक्त है, उसके श्रृंगार को सराहने वाला उसका पति बादल युद्ध में जाने को उद्यत है जिसमें या तो वह वीर गति को प्राप्त होगा अथवा विजयी होगा? यह स्थिति संदेहास्पद है कि भविष्य में क्या होगा।[1]

और ऐसी युद्ध यात्रा की स्थिति, तैयारी एवं प्रिय युद्ध गमन के समय गौना आना, और उसके पति का बिना मिले चले जाना, उसके सौन्दर्य का ध्यान भी नकरना एक भारतीय नव वधू की अवहेलना ही है।

"बादल गवन जूझ कर साजा, तैसेई गवन आई घर बाजा"[2]

और वधू अनुपम सौन्दर्य चंद्रमुखी वधू ने रच-रचकर और श्रृंगार किया है माँग मोतियों से पूरी है भौंह वृताकार धनुष समान है मस्तक पर कृत्तिका के नक्षत्र समान बेंदी सुशोभित है, कर्ण कुण्डल पति के जाने के शोक में हिल रहे हैं, ऐसा प्रतीत होता है। मानों वे अपना शीश धुन रहे हों।

चन्द्रबदनि रच किये सिंगारू
माँग मोति भर सिंदुर पूरा, बैठ मयूर बाँक तस जूरा
भौंहें धनुख टट्कोर परीखे, काजर नैन भार सब तीखे
धाल कचपची टीका सजा, तिलक जो देख ठाँव जिउ तजा
मनि कुण्डल डोले दुई सूवना, सीस धुनहि सुनि सुनि दिनु गमना।[3]

1-हिन्दी महाकाव्यों में नारी चित्रण पृ0 126, श्याम सुन्दर दास

2-जायसी ग्रन्थावली, पृ0 769

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 769, छ. 658

वधू लज्जाशीला है वह गौने की रीति समझ कर लज्जा युक्त होकर अपने मुख पर अवगुंठन डाल लेती है, किन्तु नारी मनोविज्ञान यही है कि उसके प्रिय उसकी ओर देखे उल्झे यहां, वह उल्टा ही पाती है, वह स्वयं हंसकर घूंघट के ओट से बादल को देखती है बादल पीठ फेरकर खड़ा हो जाता है।

यहाँ भी बादल की पत्नी सामान्य से भी निम्न धरातल पर उतर जाती है, जायसी ने उसका स्वरूप विदेशी श्रृंगारिकदृष्टिकोण से अभिव्यंजित किया है। बादल की पत्नी पदमावत की कथा वस्तु में एक खण्ड चित्र के समान है गवनोपरान्त आने वाली वधू के रूप में वह एक भावना पूरित नारी है, परिस्थिति जन्य वातावरण के मध्य एक जन्म जात क्षत्राणी है।[1]

मानि गवन सो घूंघट काढ़ी, विनवै आई बार भई ठाढ़ी
तब धनि बिहँसि कीन्ह सहु दीठी, बादल ओहि दीन्ह फिर पीठी[2]

वह उद्वेलित हो जाती है। अपने शील संकोच समाप्त कर देती है वह बादल को कमर से पकड़ लेती है, और यौवन युद्ध का आमंत्रण देती है। अधर से अधर जूझने का सुझाव अन्य विनती के पश्चात् जब उसकी अश्रु भीगी चोली, अछूती रही कतं ने उसे नहीं खोला, काजल मण्डित नेत्र प्रियतम को नहीं पिघला सकें।

"भौंहें धनुख नैन सर साधे, काजर पनच बरूनि विषबांधे
जनु कटाछ सो सान संवारे, नखसिख बान सेल अनियारे
अलक फांस गिउ मेल अजूझा, अधर अधर सो चाहिय जूझा

1- हिन्दी महाकाव्यों की चरित्रभूमि डा० श्याम सुन्दर व्यास
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 770 छ॰ 659, 2 राजनाथ शर्मा

कुंभ स्थल कुच दोउ मैमंता पेत्यों सौंहु, सम्हारहु, कैता
कोपसिंगार विरह दल टूटि दोउ दोउ आध
पहिले मोहि संग्रह करि काहु जूझ के साथ"[1]

उसकी समस्त विलास प्रक्रिया, यौवन उद्दाम एवं सौन्दर्य बाण पति के कर्तव्य के आगे क्षीण एवं मृत प्रायः हो गये, तब – उसके नारी हृदय ने अपने कर्तव्य बोध का ज्ञान किया तत्पश्चात् वह क्षत्राणी के गौरव एवं दृढ़ता से परिपूर्ण हो उठती है। क्षत्राणी सुलभ भाव उसकी वाणी से व्यक्त हो उठता है। वह सती का बाना पहन लेती है दोनों स्थितियों में मिलाप का संकेत उसके हृदय के दृढ़ता को प्रगट करता है।

"तुम्ह पिउ साहस बांधा, मैंदिय मांग सिंदूर
दोउ सम्हारे होउं संग बाजै मादर तूर"

कुछ स्थानों पर जायसी अपनी विलास दृष्टि के कारण बादल की पत्नी के चरित्र में अस्वाभिकता ला दियें है जैसे युद्ध रूपक के श्रृंगार जनित होने में कुचतुम्बी को पीठ से डुलाना, चौंके हुए पति को रसमग्न करना, जूझने का खुला आमंत्रण देना, बादल की पत्नी की वाणी से कराया गया है यहां भारतीय नारी के गरिमामय स्वरूप का ह्रास होता जान पड़ता है। प्रथम बार गृह प्रवेश करने वाली नव वधू और वहीं भी भारतीय इतनी काम मुखरा कभी नही हो सकती। इस प्रकार की भावाभिव्यंजना मनोयौनिक, और सांस्कारिक दोनों ही दृष्टि से नारी सुलभ नहीं कही जा सकती, लड़ाई चाहते हो तो पहले मुझसे संग्राम करो, इस प्रकार की अश्लील वाणी बादल की पत्नी का स्वरूप ध्वस्त कर देते हैं किन्तु वह नारी

1– जायसी ग्रन्थावली पृ0 773, छ॰ 662

अपने स्वरूप के अस्मिता को सती होने का दृढ़ निश्चय लेकर अपने नारी स्थान का गौरव प्राप्त कर सकी है इसमें कोई संशय नहीं।[1]

प्रेमा : मधुमालती की उपनायिका प्रेमा है काव्य में यह मधु मालती की प्रतिनायिका के रूप में न होकर इसका स्थान एक संवेदनशील सहेली के रूप में निरूपित है। यह ताराचन्द की प्रेमिका है कथा के अन्त में दोनों का विवाह हो जाता है। प्रेमा के चरित्र की विशेषता यह है कि वह अकेली विरान सूने जंगल में है किन्तु भय एवं शंका से सर्वथा मुक्त है, जबकि उस घने जंगल में न कोई सखी है न सहेली अतः वह एक साहसी बाला के रूप में कथावस्तु में दृष्टव्य है।

> और न कोई संग सहेली, बन निकुंज किमि रहसि अकेली[2]
> निभरम चित्र अकेली, बन महं रहसि निसंक।

यह राक्षस द्वारा अपहृता बाला हैं कुवंर के द्वारा वह राक्षस से मुक्त होती है यह असूया भाव से सर्वथा मुक्त है इसे ब्रह्मा ने पैदा किया है इसका सौन्दर्य विकराल है यह चन्द्रमा के समान शरीर वाली है।

> ससि बदनी यौवन विकरारी[3]
> निःकलंक विधि नै औतारी।

वह दार्शनिक भी है वह विरह को श्रेष्ठ बताते हुए कहती है सबको विरह नहीं होता यह विरह करोड़ों में किसी एक को प्राप्त होता है जैसे स्वर्ण

1- हिन्दी महाकाव्यों में नारि चित्रण, डा० सुन्दर व्यास पृ० 128

2- मधुमालती पृ० 193, छ॰ 162

3- मधुमालती पृ० 184, छ॰ 155

की सारी बूँदे मोती नहीं हो जातीं

सरग बुंद सम होहि न मोंती, सम घट विरह देदिन हिं जोती[1]

कोटि मांह विरला जन होही, जाहिं शरीर विरह दुखः होही

मधुमालती की प्रति नायिका प्रेमा में नारी जनित मानसिक जलन असूया भाव नहीं है क्योंकि उसका प्रिय ताराचन्द एक मात्र प्रेमा को ही चाहता है प्रेमा की कोई सौत नही है अतः उसके चरित्र में नारी जनित दुर्बल भावनाओं का अभाव है।

वह बुद्धिमती है राक्षस के मारने के लिए वह कुवंर से बताती कि वृक्ष का नाश आवश्यक है।

जौ लहि विरिक्ख पतन नहिं होही, कैसेउ मारि जाइ नहि सोई

अम्बृत फल चलि हम तुम्ह मिलिके बारहि।[2]

कुवंर का विजय राक्षस के ऊपर होने के लिये वह गौरी मन्दिर में जाती है और देवी से प्रार्थना करती है हे देवी कुवंर को जय दो। वह धर्मपरायणा है–

"पेमा मंदिल दण्डवत् परी, दुइ कर गौरी मनावै हरी

सीस पुहुमि धरि विनवै बाला, कुवंरहिं तोहिं जै देहि दयाला"[3]

वह कुवंर के विजय पर प्रसन्न होती है वह उसके ऊपर अपने प्राण न्योछावर कर देना चाहती है, वह कुवंर को अपना भाई मानती है भातृ प्रेम की अधिकता से सराबोर हो जाती है उस पर अपना आँचल वारने लगती है। एक भारतीय नारी बहन का सुन्दर निदर्शन प्रेमा के चरित्र में कवि ने समाहित किया है।

1– मधुमालती पृ० 232, छ॰ 195

2– मधुमालती पृ० 239, छ॰ 228, 3॰ मधुमालती पृ० 264, छ॰ 24

"दौरि कुवंर पद अँधर वारा, अति मरोह लैहिय उरसारा
कहेसि कहाँ न्यौछावर सारौ, सहज जीव घट होई सो वारौ"[1]

बचपन की सहेली के रूप में ससुराल जाते समय भी प्रेमा का हृदय मधुमालती के लिए स्वच्छ है। कहीं भी ईर्ष्या दाह की झलक नहीं, मधुमालती के साथ ताराचन्द की निकटता से वह ईर्ष्या भाव नहीं रखती, यह उसके चरित्र का विशिष्ट पक्ष है।

विदा के समय वह यौवन को दोष देती है। इस भाव भूमि में वह प्रियतम से अधिक सखियों के निकट लगती है, सखियों से बिछुड़ते हुए उसके अन्तर के प्रेम को और प्रगाढ़ कर देता है।

कुवंरि दोउ रोवहि गिय लागी, आही प्रीत विछुरत फिर जागी
कहहि आज हम मिलन निबेरा, आज उदधि हम विरहा बेरा[2]

इस प्रकार उपनायिका के स्वरूप में प्रेमा बुद्धिमती है व्यवहार कुशल है एवं एक संवेदन शील सहेली के रूप में उत्कृष्ट है। मधुमालती एवं कुंवर के मिलन में प्रेमा का अपार सहयोग है इस प्रकार कथावस्तु में वह एक आदर्श सखी के रूप में अभिव्यंजित है।

§4§ कौलावती – यह चित्रावली की उपनायिका है। कथावस्तु के प्रवाह क्रम को सतत् बनाए रखने में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। फुलवारी में विश्राम करते समय कुवंर सुजान के प्रत्यक्ष दर्शन से इसके हृदय में प्रेमोदय होता है कथा में इसका स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

1- मधुमालती पृ0 276, छ0 234
2 - मधुमालती

यह ऐसी उपनायिका है जो प्रेम के लिए अपने ही प्रेम पात्र को हार की चोरी लगाकर निकट लाने के लिए कारावास में डलवा देती है। किन्तु सोहिल नरेश की चढ़ाई के समय वह अत्यंत चतुरता के साथ रात्रि के समय रात्रि सदृश कृष्ण काली सारी पहन कर अत्यन्त चातुर्य एवं सजगता से कुवंर को बंदी गृह से बंधन मुक्त करने जाती है। इस प्रकार इस नायिका की चरित्र सृष्टि यहाँ एक स्वार्थी नारी के रूप में हुआ है जो अपने स्वार्थ के लिए एक निष्कपट, सीधे सरल व्यक्ति को सबके सम्मुख चोर बनाकर सबकी आँखों से गिरा देती है तदुपरान्त अपने अस्मिता को खतरे में देख पुनः अपने स्वार्थ के लिये उसे बंधन मुक्त करती है।[1]

किन्तु इसका प्रेम एकांकी है कुवंर के सुदर्शन व्यक्तित्व को देखकर "रही अचक होई ठाढ़ी" और जम होई, हिये समाइगा लिहेसि जिउ जनु काढ़ी[2] ने ही उसे यह सब उपरोक्त क्रियाकलाप करने के लिए प्रेरित किया होगा।

कौलावती की सपत्नी चित्रावली बड़ी कठोर है कौलावती नारी जनित भावना से बाध्य होकर कहती है।

बैरिन सवति कुफुत उपराजा,

तहं राखि प्रिय मोर छिपाई, जहां संदेशन पहुँचै जाई[3]

कौलावती का विरहिणी स्वरूप अत्यन्त कातर एवं करूण है पति सुजान चित्रावली के साथ विवाह करके संयोग सुख प्राप्त कर रहा है, और यहाँ

1- चित्रावली पृ0 81, छ॰ 331

2- चित्रावली पृ0 77, छ॰ .135

3- चित्रावली पृ0 243, छ॰ 343

कौलावती को दिन में –

दिवस उसास पवन अधिकावै,

रैनकला निधि धिउ बरसावै[1]

वह प्रिय के वचन के आधार पर जी रही है अन्यथा उसका प्राणांत कभी हो जाता, वह यादों की लहरों में डूबती उतराती है, उसे दूर दूर तक किनारा दृष्टिगत नहीं होता, जो उसे बचा सके, उबार सके, उसका सूर्य रूपी प्रिय सुजान तो उससे दूर है वह बिना उसके सूख रही है, शरीर से प्राण निकलने को व्याकुल है, यहाँ कौलावती अत्यन्त विवश है, निरीह है कवि ने उसके विरह की मार्मिक व्यंजना की है।[2]

कौलावती सरल नारी है उसमान ने उसका चित्रण एक समर्पिता नारी के स्वरूप में किया है वह जानती है कि उसका प्रिय चित्रावली के प्रेम में पगा है फिर भी वह अपने मानक्रोध, ईर्ष्या का उद्घाटन नहीं करती है उसे यह ज्ञान ही नहीं है कि मान कैसे किया जाता है।

लोयन राखौ घूंघट केरी, अंत मान को राखै फेरी

मोहि मुदित चखु सकलतन, दीन्ह अगिनि जनुवारि[3]

सरलता के साथ कौलावती साहसी है, वह कुवंर से, बंदीगृह में रात के एकान्त में मिलने जाती है रात्रि के समान काली सारी उसके ऊपर ऐसी लगती है जैसे रात्रि में उसका अंकवार हो रहा है।

1- चित्रावली पृ0 133, छ० 245

2- चित्रावली पृ0 132, छ० 243

3- चित्रावली पृ0 98, छ० 402

पहिरि अपूरत सांवरी सारी, तन मंह मिली दिये अंकवारी,

जानहुं चखु लुक अंजन दीन्हा, कोई न भेम्र देखतन कीन्हा,[1]

कौलावंती में धैर्य है वह सेवा मनक्रम बचन से रात्रि दिन करके कुवंर को अपने पक्ष में करने की प्रतिज्ञा करती है - वह विनम्र है वह चित्रावली की चेरी बनने में भी अपनी हेठी नहीं समझती

मनक्रम वचन अब जो रहे सेवकक निसि बार

सेवा हुत पाहन हिया मकु होइ जाई पहार[2]

विनती एक करूँ कर जोरी, इहै हियै अब इच्छा मोरी,

जो तू इच्छ पुराव गोसाईं, मोहि जनि जाउ कैत दे बांही

जौ संग लेहू मया मखु हेरी, रहौ होई चित्रावली चेरी

सपथ देइ जो करहू पयाना, सपथ आस घटि रहहि पराना,[3]

कौलावती का चरित्र कथा के उत्तरार्द्ध में धैर्य, विनम्रता, समर्पण त्याग आदि नारी के आदर्श गुणों से आप्लावित होता है।

वह प्रण करती है कि मन क्रम वचन से मैं रात दिन प्रिय की सेवा करूंगी शायद प्रस्तर हृदय पिघल जाय,[4] वह विनय करती है कि मुझे छोड़कर मत जाओ यदि तुम मुझे सहारा दोगे तो मैं चित्रावली की दासी होकर रहूँगी।[5]

1- चित्रावली पृ0 84, छ॰ 443

2- चित्रावली पृ0 94, छ॰ 383

3- चित्रावली पृ0 94, छ॰ 384,

4- चित्रावली छं॰ 383, पृ0 94

5- चित्रावली पृ0 94, छं॰ 384

यहाँ कौलावती के व्यक्तित्व का सबसे सशक्त चित्रण है प्रिय जिसमें प्रसन्न रहे वही करना, प्रिय के लिए सौत की दासी तक बन जाना, यह भारतीय पति-व्रता नारी का गरिमा मय उज्ज्वल आदर्श है।

कौलावती प्रिय समर्पिता है उसमें मान नही है, वह कहती है जब चित्रावली तुमको प्राप्त हो जाये तो तुम मेरी ओर मात्र हंस के देख लेना, और प्रेम भरी दृष्टि डाल देना यही मेरेलिए लाख, करोड़ के समान है। क्योंकि मैं इससे ज्यादा तो जानती नही हूँ मैं तो प्रेमरस इतना ही मानती हूँ ?

कौलावती मानवती नायिका नहीं है, हाँ अवगुंठन में चन्द्रमुख अवश्य तिरोहित है क्योंकि तरुणियां स्वभाव गत मानवती होती है :-

वह सहर्ष अपने को समर्पित करती है -

अधर रदन, छद उरज, उधसि गई पुनि मांग
प्रथम समागम जनु लियो, सिथिल भयो सब आंग [1]

वह सौत चित्रावली के आगे भी नत मस्तक होती है - और पति के आगे पांव की पदत्राण भी बन जाती है। सीता समान अनुगामिनी, इस प्रकार कौलावती, का अपना अलग कोई अर्थ नहीं वह पति को लिए सर्वस्व त्याग की धारणारखती है।[2] इस प्रकार कौलावती नारी जनित दुर्बलताओं एवं क्षमताओं से युक्त आदर्श नारी है।

कमोदनी : कथा वस्तु में यह जवाहर के सौत के रूप में प्रस्तुत है यह

1- चित्रावली पृ० 99, छ. 406
2- चित्रावली पृ० 98 छ. 468

बटमारों के देश की है इसकी माता माहिताम है यह हंस के योगी वेश पर मुग्ध होती है और उसका विवाह हंस के साथ हो जाता है यह नारी जनित समस्त दुर्बलताओं से युक्त है। यह स्पष्ट वक्ता है जवाहर के यह कहने पर की तुम्हारा मन्त्रबल मेरे ऊपर नहीं चलेगा वह कहती है।

तुम्ह जस अहौं मूल उजियारी जग जानौ का कहौ उघारी[1]

बारहि पढ़ौ वेद कहिज्ञानी, घर बैठ्यों डार्यो जगछानी।

कुमुदनी के अन्दर सौत दाह है वह जवाहर को कटूक्तियों से बेधती है। कहती है कि कभी तो तुम भ्रमर को लुभाती हो कभी अपनी निशानी शब्द जैसी चतुरा के हाँथ भेजती हो, एक बारात बुलाती दूसरे पुरूष को घर में बिठाती हो।

कबहुं भवंर पतंग लोभायो, अपने कुलहि कुली कहायो[2]

काई दीन्हो छाप निसानी, कबहुं पठ्यो शब्द सयानी

एक बरात बुलायो बारा, दूसर रखियों माँझ सो नारा।

इस प्रकार कुमोदनी काव्य में रूढ़ि पालन के अन्तर्गत ही व्यंजित हुई है। इसका आना मात्र जवाहर के सौत रूप में हुआ है यह सामान्य नारी है जवाहर द्वारा ही उसका विवाह हंस से होता किन्तु वह जवाहर के प्रति उपकृत नहीं होती है। उसकी सृष्टि परिस्थिति सापेक्ष से हुई है। कथानक में उसके चरित्र वैशिष्ट्य पर कोई प्रकाश नहीं पड़ा है। हाँ उसका सौत रूप अवश्य उद्घाटित है। वह जवाहर को कहती है।

तुम आपन मुख रह्यो संभारी, नहिं मुखते मुहिं आवत गारी[3]

1- हंस जवाहर पृ0 261
2- हंस जवाहर पृ0 261
3- हंस जवाहर पृ0 262

अन्य स्त्री पात्र

चांदा की सास :

यह चंदायन की कथा में नायिका की प्रथम सास के रूप में अवतरित हुई है कथा में इसका स्वरूप एक कुटिल सास के रूप में व्यंजित हुआ है सर्व-प्रथम तो यह कोमलता का व्यवहार करती है। किन्तु जब वह यह समझती है कि बहू चंदा अधिक चतुर है तो वह उस पर क्रोधित हो उठती है अपने अधिकार का दुरूपयोग करती है और कहती है कि तुम्हारे मायके को आग लगा दूंगी और अभी संदेश भेज दूंगी तूँ मायके जाना चाहती है, कथा में यह प्रारम्भ में ही आई है कथावस्तु में इसका आना अल्प समय के लिए है।

खोलिन : कथानक में खोलिन कुंकलोर की माता एवं उपनायिका मैना की सास है, इसमें एक माता, सास एवं अन्य नारी जनित सारे गुण समाहित हैं। यह बधू वत्सला है, वह मैना को देखकर कहती है तुम्हारा वर्ण श्याम क्यों है? वह अपने पुत्र को कहती है, लगता है लोर किसी अन्य नारी पर अनुरक्त है। वह वधू मैना को सांत्वना देती है, सास का यह स्वरूप आदर्श एवं नारी मनोभावना को समझने वाली है।[3]

बरन रात सांवर तोरकाहें, बरन तोर रात होई चाहे,

मोहिं कहीं सुनी, कहुं तई बाता, लोर वीर बहुयरि कही राता,

वह पुत्र की जिह्वा काटकर देश से निकालने की बात करती है[3] इतने से उसका पुत्र के ऊपर क्रोध नही शान्त होता, वह पुत्र के "केस गहे करि मांथ औनायसि[4] । तत्पश्चात् वह लोर से कहती है, लोर! मैना का हृदय जल रहा

1- चंदायन पृ0 44, छ. 45
2- ,, पृ0 162 छ. 158
3- ,, ,, 222 छ. 222
4- ,, ,, 232 छ. 239

है उसे प्रेम रूपी अमृत छिड़क कर शीतल करो।[1]

फूलारानी :

यह गोबर के महर सहदेव की पत्नी एवं नायिका चंदा की माता है। फूलारानी का चरित्र कथावस्तु में एक गम्भीर एवं आदर्श नारी का है वह सरल नारी है मालिन के द्वारा जब यह सुनती है कि उसकी पुत्री चांदा किसी लोर नामक पुरूष पर अनुरक्त है वह लज्जा से ऐसे भर उठती है। मानों किसी ने उसके उपर सहस्त्रों घड़ों पानी डाल दिया, या पुरइन की हरी भरी पत्तियों पर तुषार पड़ गई हो, ऐसे ही रानी लाज से सिमट कर मालिन की बातें सुन रही थी चाहती तो मालिन को अपने दबाव से चुप भी करा सकती थी।

"सुनतहिं फूला महरी लजानी धरी सहस जनु मेला पानी
जइस तुषार पुरइन परी, तसहोई महरी बात सुनि रही"[2]

इस प्रकार फूलारानी भी पुत्री की अपेक्षा सामाजिक मर्यादा को अधिक ध्यान देती है।

मुक्ताहर :

यह चीन देश के राजा आलम शाह की पत्नी एवं जवाहर की माता है। प्रथम रूप में कठोर है किन्तु पुत्री की वियोगी दशा देखकर वह कोमल हो उठती है।[3] पुत्री व्यथा उससे देखी नहीं जाती वह स्पष्ट

1- चंदायन पृ0 232, छ. 239

2- चंदायन पृ0 272, छ. 265

3- हंस जवाहर पृ0 63

वादी एवं खुले विचारों की है।

सखी द्वारा सूचना प्राप्त होने पर वह क्रुद्ध हो जाती है[1] मर्यादा शीलता एवं लोक लाज के भय से वह शब्द को बुलाती है। उसे फटकारती है, अपनी पुत्री को, बुरे गुणों को सिखाने की बात कहती है।

बारि सिखावसि औ गुने, जासि कहां केहि पास[2]
सत्य कहसि तोहि जारहुं मैं तोहिं कत करसि निरास

यह कथा वस्तु में क्रोध माता के रूप में शब्द को झकोरती है उसे ताड़ना देती है इस रूप में वह अत्यन्त कठोर दृष्टिगत होती है। अन्वेषी दृष्टि रखते हुए शब्द से कहती है।

"तुम अपना सब भेद बताओ जरत अगिनिसे बरत बुझाओ" और फलतः अपनी पुत्री के अलौकिक परी को बंदी बना देती है।

माहताब :

कथावस्तु में यह एक ऐसी मां के रूप में प्रस्तुत हुई है जिसके बेटे की बारात तो सजती है किन्तु बेटे का विवाह नही होता, न ही, बधू बिदा होती है।

यह बटमारों के देश की है तन्त्र मन्त्र टोना टोटका आदि जानती है। यह अपनी दूतियों के साथ चीन आती है साथ में अभिमंत्रित

1- हंस जवाहर पृ0 336

2- हंस जवाहर पृ० 63

टोना पढ़ा हुआ ताम्बूल मेवे थाल में भर कर लाती है यदि एक ताम्बूल कोई खा ले तो वह बावली हो जायेगी।

खैर सुपारी पान सब लोना पढ़त पढ़ाय[1]
बावंर होइ लागे सब एक पान जो खाय

इस प्रकार उसका मन्तव्य है कि, किसी भी प्रकार से, प्रेम, कल, बल, छल टोना, टोटका से वधू जवाहर को अपने देश ले जाना चाहती है।

कथा में इसका स्वरूप दो रूप में उद्घाटित हुआ है। एक तो यह जवाहर के बिन ब्याहे पति की माँ है। दूसरे रूप में यह जवाहर की सौत, कमोदनी की माँ है।

वह चीन आकर मुक्ताहर के गले लगाती है, उसका हृदय अपार दुख से भरा है[2] वह मुक्ताहर से कहती है मेरे मंडप में अग्नि भर दी गई मेरा पुत्र बिनब्याहे लौट गया मैं पापिनी हूँ जिसने वनवास नही लिया।[3]

इस प्रकार विभिन्न मानसिक संघर्ष से युक्त एक दुखी माँ के रूप में यह कथानक में उपस्थित हुई है।

कल-बल से हारने के पश्चात् वह अपने गम्भीरता को समाप्त कर अपने दूतियों द्वारा मन्त्र पढ़वाती है।

वह जवाहर को कोसती है कहती है तुम अपने मुख पर कालिख पोतो फिर चाहे जहां विचरण करो।[4]

1- हंस जवाहर पृ0 123
2- हंस जवाहर पृ0 124
3- हंस जवाहर पृ0 124
4- हंस जवाहर पृ0 142

गंगा :

गंगा, सागरगढ़ के राजा, सागर की पत्नी एवं "कौलावती" की माता है।

उसे अपनी पुत्री कौलावती पर गर्व है वह कहती है कि -

"मोरी कोख सो कौल विगासा, चहुँ खण्ड पसरी जेकरवासा"[1]

वह एक सरल एवं भोली भाली माता के रूप में कथानक में प्रस्तुत हुई है। जब वह सखियों के द्वारा सुनती है कि कंवल अचेतन अवस्था में है, उसे योगी ने ही कुछ किया है। "कहा सबन मिलि निहचै यह जोगी कछुकीन्ह"[2]

तब पुत्री कष्ट देखकर वह स्वयं अर्धविक्षिप्त हो जाती है वह अपनी पुत्री को गले से लगाकर उसे चूमने लगती है। गंगा की चरित्र-सृष्टि कथानक को मोड़ देने के लिए हुई है, इसका स्वरूप सरल है, इसके हृदय में पुत्री के शुभ की ही धारणा है, उसे अपनी पुत्री पर अथाह विश्वास है वह अन्य सूफी माताओं की भांति पुत्री पर अविश्वास नहीं करती। वह कहती है -

"नित गाँनति खेलति फुलवारी, आजु विकल भई काहे बारी"[3]

वह पुत्री के शुभाकांक्षा के लिए शिव की आराधना करती है, जोगियों का ज्योनार करती है, उसका सोचना है इससे उसकी कन्या को स्वास्थ्य लाभ होगा।

बोलहि गंगा सांचहिं महादेव कर भाव

जोगिह आह जेवावहु जाँहि कौल अरसाव[4]

1- चित्रावली पृ० 99, छ. 396 जगन मोहन वर्मा

2- चित्रावली पृ० 81, छ० 3, लेखक- सत्यजीवन वर्मा

3- चित्रावली पृ० 78 छ. 119

4- चित्रावली पृ० 78, छ. 119

और जब चित्रावली स्वस्थ होती है तो माता बड़े स्नेह पूर्ण ढंग से प्रतिहारियों को आगाह करती है कि कौलावती को अब बाहर नही जाने देना। इस प्रकार गंगा के हृदय की समस्त ममता का कोष पुत्री के लिए है।

रूप मंजरी :

यह महारस नगर के राजा विक्रम राय की पत्नी एवं मधुमालती की माता है। कथा में इसका स्वरूप कोमल, कठोर, दिव्य शक्ति वाली, कन्या पर कठोर अंकुश रखने वाली एक आदर्श माँ, के रूप में हुआ है।

इसकी चरित्र सृष्टि कथा में गति प्रदान करती है प्रथम रूप इसका कोमल रहता है किन्तु पुत्री के प्रेम रहस्य प्रगट हो जाने पर यह कठोर हो उठती बहुत समझाने पर भी मधुमालती नहीं मानती तो यह पात्र अभिमंत्रित जल लेकर अपनी एक मात्र पुत्री को मानवी से पक्षिणी रूप में कर देती है।[1]

रूप मंजरी को अपने कुल की प्रतिष्ठा के आगे पुत्री का कोई महत्व नही। वह कहती है कि यह जन्म लेते ही क्यों नहीं मर गई।[2]

किन्तु पुत्री गमन के पश्चात् उसका मातृ-हृदय चीत्कार कर उठता है। उसके कुक्षि की अग्नि उसे दहाड़ मारकर रोने के लिए विवश कर देती है।

देखि डफार छांड़ि कैरोई कोख अगिनि की झार[3]

1- मधुमालती पृ0 305, छ. 352
2- मधुमालती पृ0 304, छ. 251
3- मधुमालती पृ0 340, छ. 390

कोमल रूप में वह अपने रानी पन को भूलकर नग्न पांव से[1] मालिन के घर जाती है पिंजरे को बार बार अपने हृदय से लगाती है उसका करूणा विगलित रूप उसको अश्रुओं से उसकी कठोरता तरल कर देती है। उसके अश्रुजल परनाले की भांति निरन्तर प्रवाह कर रहे हैं। यहां माता का द्वन्दात्मक चित्रण है इस स्वरूप में रूप मंजरी भावोद्रक से भरी हुई निरूपित है।

पुनि पिंजरा लायेसि उर धाई देखि दुहिता गति भरोवाई[2]
खिन खिन निरखि गति बारी, नैन नीर नहिं रहहि पनारी

रूप मंजरी की आदर्श चरित्र भूमि उस समय परिलक्षित होती है जब वह मधुमालती को विदा करती हुई शिक्षा देती है, उसकी शिक्षा अत्यन्त शीलपूर्ण है।[3]

इस प्रकार रूप मंजरी के चरित्र में कोमलता एवं कठोरता का सुन्दर परिपाक हुआ है, कुल की रक्षा के लिए अपनी सन्तान को कठोर दण्ड देना यह आवश्यक था किन्तु सन्तान के कष्ट से विह्वल होकर करूण रूदन करना, एक कोमल मां के वास्तविक स्वरूप को उद्घाटित करता है। अतः रूपमंजरी एक आदर्श माँ के रूप में अवतरित हुई है।

1- मधुमालती पृ0 338, छ० 39।

2- मधुमालती पृ0 341, छ० 39।

3- मधुमालती पृ0 449, छ० 504

हीरा :

यह नायिका चित्रावली की मां है कथानक में यह सरल मां के रूप में अवतरित है किन्तु स्वयं निर्णय नही लेती न हीं पुत्री पर कड़ी निगाह रखती है।

यह अपनी पुत्री के प्रेम का उद्घाटन अपनी सखी द्वारा पाने पर एवं उसके यह कहने पर कि यह उचित नही है कि कुमारी चित्रावली किसी पर पुरूष का चित्र अपनी चित्र सारी में रखे इस बात से मां हीरा मानसिक अर्न्तद्वन्द से भर उठती है। वह जैसे जैसे चित्र पर पानी डाल रही है उसे ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो चन्द्रमा को राहू ने ग्रस लिया है, वह अपने आपको अपराधिनी समझने लगती है - किन्तु जीत कुल मर्यादा के धारणा की होती है अन्ततः रानी हीरा चित्र धोकर मन को विषाद से भरते हुए, चित्रावली की चित्रसारी से प्रस्थान कर जाती है।

"जिमि-जिमि चित्र जाई कहु धोई, राहू गरासि जानु ससि होई
जिमि-जिमि मिटै रूप मनियारा, होत आउ नैनन्ह अंधियारा"
"मेटि चित्र रानी चली हिये दुन्द दुख होई
रतन न जाना विधि मेटि सकै ना कोई" [1]

चित्रावली की प्रति नायिका कौलावती की मां गंगा भी पुत्री कौलावती को अथाह प्रेम करती है वह सुनी की कौलावती दुखी है उसकी ऐसी हालत देखकर ही उसका हृदय पीड़ा से भर उठा वह अश्रुओं के जल में सिर से पांव तक डूब जाती है वह पुत्री को कंठ से लगाती है, चूमती है, वह वैध एवं योगियों को बुलाने का उपक्रम करती है।

1- चित्रावली पृ० 33, 1, छ० 13।

सुनतहिं लहर चढ़ी चित गंगा, होइ गइ विकल सकल सुख भंगा
देखि अवस्था धीय की, उठा करेजे पीर। बुद्धि गई नख-सिखर
लौं, दुहु लोचन भरे नीर।।

कंठ लाई मुख चुंभि रानी छौवे बदन नैन के पानी
पुछि कहै प्रान कहो मोरा, काहे बुद्धि गयो जिउ तोरा।[1]

हीरा परिवार की एकता को ध्यान में रखती है वह ननद सास की आज्ञा पालन करने की शिक्षा देती है सभी के आगे शीश झुकाकर रहने को कहती है-

वह अत्यन्त कोमल एवं भाव प्रवण है वह मात्र इतना सुनना ही की चित्रावली का गौना होने वाला है पछाड़ खाकर गिर पड़ती है। वह ससुराल की कठिनता और पुत्री की कोमलता को सोचकर दुखी हो जाती है -

रानी धिय सुनी गौन विचारा, विसुधि गिरि भुई खाई पछारा[2]
फूल तोरी मोती छितराई लोचन मोती माल पुराई।

अब तुम्ह कहा कह गौन, जहं के संदेश नयावहिसौन।
कठिन अहि ससुरारि के रीति, सोई जानि जाहि सिर बीती[3]

इस प्रकार माता हीरा अत्यन्त सरल एवं आदर्श माता के रूप प्रस्तुत है।

1- चित्रावली पृ0 132, छ॰ 58।

2- चित्रावली पृ0 142, छ॰ 28।

3- चित्रावली पृ0 141, छ॰ 578

सुजान की माँ :

यह नेपाल नरेश धरनी धर के पुत्र सुजान की माँ है इसे कोई सन्तान नहीं थी शिव पार्वती की आराधना के पश्चात् पति द्वारा अपना सिर काटकर अर्पण करने पर भगवान शिव प्रसन्न होते हैं और सुजान जैसे गुणी पुत्र का आशीर्वाद देते हैं।

"शिव आशीष विधि भयो भ्यारा, धरनीधर घर सुत औतारा"[1]

और रानी को इतनी तपस्या के पश्चात् पुत्र प्राप्ति हुई वह भी चित्रावली के प्रेम में अचेत पड़ गया है। माता यह समाचार सुनती है वह विकल हो उठती है। कथा में यह एक सामान्य माता के रूप में अवतरित है काव्य में इसका कोई नाम नहीं है। यह एक पुत्र वत्सला माँ के रूप में व्यंजित हुई है।

आई धाय कुवंर जहां आवा, रोई सुखासन लेइ कंठ लावा[2]

उसका स्वरूप पुत्र की स्थिति देखकर विक्षिप्त माँ का है वह "बार-बार कंठ लगावहिं पुछहि बाता उतर न देई विरह-मदमाता" माँ अपने पुत्र के शोक में करूण रूदन करती है। उसे यह चिन्ता है कि मेरे कुल का एक ही दीपक है जिसके न रहने पर मेरा संसार अंधकार मय हो जायेगा।

पूत पीर कहु कस जिउतोरा नैन खोलु कर जगत अंजोरा।[3]

माँ को चिंता है कि दोनों संसार की आशा मेरा पुत्र आस तोड़कर निराश कर रहा है।

दुहुजग माँही तुही एक आसा आस, तोरिका करत निराशा[3]

1- चित्रावली पृ0 14 सत्य जीवन वर्मा, एम.ए.
2- चित्रावली पृ0 27 ,,
3- चित्रावली पृ0 28 ,,

सास का स्वरूप -

वधू आगमन पर वह हर्षातिरेक से भर उठती है प्रसन्नता का उद्घाटन वह मोतियों, मणियों के भरे थालों से करती है।

कन्या की माताएं ही नहीं वरन् पुत्र की मातायें भी पुत्र वत्सला है, कोमल हृदय की है। वह पुत्र के दुख में दुखी हो उठती हैं अपने आपको उसके दुख का कारण समझती है, पापिन कहती है।

सुजान चित्रावली वियोग में कंथा पहन के निकलता है तो माता विहवल हो उठती है। पुत्र वियोग में वह सूखी सी प्रतीत होती है, अपने सिर कोध्र से चुनती है -

तोरी केस औ सीस उधारा, को ले गई मोरभो बारा
निकट होत अस होत नभंगा, जोगिन होई जाति हौ संगा,
मैं पापिन कहु जिय न विचारा, बारे दिनन झुरि के डारा,
पूत वियोग भरन हौं झूरी, छुछे जानू मेलिसिर धूरी,
को अस आह देखावै पंथा जोगित होही पहिरी के कंथा, [1]

रानी को पुत्र कष्ट सुनकर वज्राग्नि पड़ जाती है उसके कुक्षि में अग्नि जलने लगती है वह कुवंर के पास आती है उसे अपने अंक में लेकर कंठ से लगाती है। यहां कवि ने माता का रूप वियोग वत्सला अभिव्यंजित किया है।

"रानी सिर सुनि पड़ी विजागी, सुनतहि जरी को जमी आगी,
आई धाई कुवंर जहं आवा, रोई सुखासन लेइ कण्ठ लावा, [2]

1- चित्रावली पृ0 55, छ. 222

2- चित्रावली पृ0 33, छ. 693

ये माताएँ पुत्र पुत्री वत्सला ही नहीं अपितु सती नारी भी हैं। कष्ट एवं परेशानी के समय पति का साथ भी देने को तत्पर हैं, वे जब देखती है कि राजा की स्थिति शत्रु पक्ष से अविजित होने की है तो वे कहती हैं-

रानिन उतर कहा सुनु राजा, सौंह करत आवत है लाजा[1]

लागिन्ह हम तुम्ह गाँठि आहि सो जोरी, मुएं जियत जो छूट नछोरी।

वह सौभाग्य शालिनी है वह अत्यन्त प्रसन्न हो उठती है वधू रूप में वह चन्द्र एवं सूर्य को ही अपने महल में उतारती है। वह मणियों मोतियों सेभरी थाल को न्योछावर रूप में सर्वत्र वितरित करवाती है।

मानिक मोती भरि-भरि थारा, नेवछावरि साजे परिवारा

चित्रावली लै मंदिल उतारी, औ पुनि संग कौलावती बारी

फिरि फिर आँचर डार रानी चंद्र सूर्य अपनी घर जाती[2]

इस प्रकार कथा में इसकी स्वरूप सृष्टि अनेक रंगों में हुई कहीं यह शांत रस से भरी शिवाराधिका के रूप में कहीं पुत्र विह्वला, पुत्र के कंथा पहन कर निकलने पर यह अपने सिर धुनने लगती है, वह भी पुत्र के साथ कंथा पहन कर योगिनी हो जाना चाहती है। पुत्र वियोग में वह मर भी जाना चाहती है।

तोरी केस औ सीस उघारा, कोई लेइ गयो मोर सो बारा

मैं पापिन कहु जिउ न विचारा, बारेदिन निडर करिडारा

पूत वियोग मरन हौ झूरी, दुहै जासु मेलिसिर धूरी

को अस आह देखावै पंथा, जोगिन होंहि पहिरी के कंथा[3]

इस प्रकार यह पात्र सास एवं माता दोनों रूप में निरूपित है जो अत्यन्त सरल एवं उदार है इसमें कठोरता नहीं है।

1- चित्रावली पृ0 92, छ. 376
2- चित्रावली पृ0 126 सत्यजीवन वर्मा
3- चित्रावली पृ0 114.

नायिका एवं उपनायिका की सखियां

सूफी काव्य में सखियों की सृष्टि काव्य का प्रमुख अंग है सखियां ही कथानक को मोड़ देती है प्रेमी युगल विचार, भाव एवं मिलन समय को निश्चित करती है। ये नायिका के साथ प्रतिक्षण साये समान रहती है। इनसे नायिका का कोई क्रिया-कलाप छिपा नहीं रहता, सखियां कुमारी कन्याओं के साथ-साथ इनकी माताओं की भी सखियां होती हैं जो इन कुमारियों के प्रेम के रहस्य का पटाक्षेप उनकी माताओं के समक्ष करती हैं।

सूफी काव्यमें कुमारियों की सखियां झूले पर चित्र सारी, विवाह के समय, परिहास विदाई, देव मंदिर, श्रृंगार, सखियां का जमघट लगभग पूरी कथावस्तु में रहता है। ये सखियां मुखरा, चतुरा, विदास, एवं बुद्धिमती होती हैं। मृगावती की सखी में तो उड़ने की, स्वरूप बदलने की भी क्षमता है।

"मानुज हमहूँ पाउं दहु कहा, जाहहि उड़ि याही चि जहां"[1]

वे मृगावती से संदेह प्रगट करती हैं कि हम सभी वर्ष में एक बार सरोवर में स्थान करने अवश्य आती है किन्तु कभी मनुष्य नहीं दिखाई पड़ा। वे मृगावती से कहती हैं कि तुम अपने आपको संभालों,

"बरिस देवस हम एक बार आवहिं, कबहुं चांद नमनुषै पावहिं
कै गियान मन बुझउ समरहहु, उठउ चलहु सेज साथ
जो कहु होई कहां तो कीजइ, कुछहु न लागै हाथ"[2]

1- मृगावती पृ0 141, छ• 48
2- मृगावती पृ0 140 छं० 47

मृगावती राजकुमारी है उसकी सखियां उस पर तीखी दृष्टि रखती हैं वे शंका व्यक्त करते हुए कहती है।

"उनमहं एक सयानी अही, मनसंकाइ वै बात जो कही"[1]

पद्मावती की सखियां दार्शनिका है - वे कहती है कि तुम घर में ही उदास रहकर सासों की सिंगी साजकर योगिनी बन सकती हो।

"घर हीं मंह रहहु उदासा, अंजुरी खप्पर सिंगी सासा"[2]

चित्रावली की सखियां अत्यन्त सहृदय है। वे चित्रावली की सुखागार में जाकर देखती है चित्रावली प्रसन्न है। वे भी प्रसन्न हो उठती हैं वे अपनी प्रसन्नताओं को रोक नहीं पाती माता हीरा के पास प्रसन्नवदना होकर जाती है और कहती हैं।

"सुख साजा सखियाँ मिल गईं, सेज विलोकि अनदित भई
सखी एक हीरा पहं आई, विकसे अधर दसन चमकाई
कहेसि आव देखु पिय साजा, मोहिं कहत मुख आवै लाजा"[3]

चित्रावली किसी बात पर तेजी से जाते हुए गिरने जैसी स्थिति में आती है। तो उसकी सहेलियां उसे तुरन्त सम्हालती हैं -

"सुनतहि चली धाय बरनारी, गिरी रही पैसखिन्ह सम्हारी"[4]

सखियां चित्रावली से परिहास के अन्तर्गत पूछती है वे कुंवर को देखने को लालायित हैं।

1- मृगावती पृ0 140, छ 147
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 248, छ.
3- चित्रावली पृ0 275, छ. 68
4- चित्रावली पृ0 296, छ. 72-73

हंसि पुछिते सखी सयानी, चित्रनी भेद बात जिय जानी

सो पुनि हमहुं देखावहु आनी जेहिंबिनु तुम जुग रैनि विहानी[1]

सखियां चित्रावली को ढाढस भी देती हैं -

'वह सो भौर तुम पंकज कली'

फूल फूल करि मधुकर फेरा, आई कौल पुनि लेई बसेरा

औतेजीव आहिं परछेवा, आइहोय पर घिरनी परेवा।[2]

पद्मावती की सखियां मुखर एवं परिहास प्रिय हैं। पद्मावती से परिहास करके पूछती हैं कि तुम हृदय पर हार नहीं संभाल सकती तो प्रिय के भार को कैसे सम्हालोगी इसमें वचन वक्रता के साथ साथ किलोल पूर्ण भाव है।

सहिन सकहु हिरदय पर हारू कैसे सहुहु कैत के भारू[3]

पद्मावती की सखियां उद्दृंखलता को हद तक पहुँच जाती हैं। सिंहलद्वीप में संयोज-सुख के पश्चात् पद्मावती की उड़े रंग और अस्त-व्यस्त अवस्था का वर्णन गोपनीय न रखकर सर्वत्र सूचना दे देती हैं।

आजु निरंग पद्मावती बारी, जिउ न भानेउ पवन अधारी

कुसुम फूल अस मर दिये, निरंग दिख सब अंग।[4]

सिंघल दीप की सखियां अमर्यादित हो उठती हैं -

"तरकि तरकि गयो चन्दन चोली, धरकि धरकि हिय उठै नबोली

आदि जो करी कंवल रसपूरी, चूर चूर हो गई सो चूरी[5]

1- चित्रावली पृ० 69
2- चित्रावली पृ० 74
3- जायसी ग्रन्थावली छ. 42 पृ0 130, 3, 4 रामचन्द्र शुक्ल
4- " " छ. 42/5

किन्तु चित्तौर गढ़ की सखियां बुद्धिमान दार्शनिक एवं गम्भीर हैं। 'बादशाह दूती खण्ड' में बादशाह के द्वारा भेजी गई दूती जब पद्मावती को बहकाकर योगिनी बनने के लिए तैयार करती हैं तभी सखी कहती है -

सखिह कहा सुनु रानी करहु न परगट भेस
जोगी जोगवै गुपुत मन, लेइ गुरूकर उपदेश[1]

कुमुदनी : यह कौलावती की सहेली है जो इसकी हित चिंतक है। प्रति-नायिका कौलावती की सखी सूक्ष्म दृष्टि वाली है वह कुवंर सुजान को प्रथम दृष्टि में ही पहचान लेती है।

निहचै यही विदेसी जोगी, परगट जोगी गुपुत कोई भोगी
निहचै यही सूर उजियारा, जहिं बिनु कौल आदि विकरारा[2]

अपनी सखी की शुभ चिंतक है कुमुदनी कुवंर सुजान को फटकारती है और अपनी सखी कौलावती के करुण दशा का वर्णन करती है। वह कहती है -

घायलपरी पुहुमि तलफाई प्रान रहे पुनि कंठहि आई
एक बोल लगि सवन निरासे, अधर सुखि तुअ अधर पियासे[3]

कुमुदनी संवेदन शील है -

"कौलकिथा सुनि कुमुदनी रोई, असदुख दुखी कहिये जग कोई"[4]
अबदिन बैठि रहसि रस लीन्हा, भौर वियोग आनि विधि दीन्हा।

कौलावती को प्रबोधन देती है-

उपनेउ प्रेम हिये जो आई, करउन चिन्त हम करत उपाई
पीतम नेह अगिनी जनु डरिये, एकहि बार धाई नहिं परिये[5]

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 756, छ० 647 राजनाथ शर्मा
2- चित्रावली पृ० 80, छ० 326
3- चित्रावली पृ० 92, छ० 278
4- चित्रावली छ० 332, पृ० 79

उसे अनुभव एवं ज्ञान है शीघ्रता, तत्परता एवं जल्दबाजी का खण्डन करते हुए धैर्य, गम्भीरता एवं शान्ति की शिक्षा देते हुए कहती है कि -

धरै धीर दुख सहै जो बारी, ताहि सों अगिन होई फुलवारी[1]

कुमुदनी अपनी सखी को प्राण से चाहती है। वह उसकी अंतरंग सहेली है।

रंगमती :

यह अत्यन्त दार्शनिक है। यह चित्रावली को दिलासा देती है। और कहती है जिसे एकाग्र चित्त होकर खोजा जाये तो वह अवश्य दूर होते हुए भी अपने अत्यन्त निकट हो जाता है।

जेहिं काहू खोजे एक मन एक टक चित लाइ[2]

होहिं दूर जो अति तउं नियरहि मिले सो आइ

चित्रावली को प्रिय वियोग में विकल देखकर वह एक अनुभवी स्त्री की तरह कहती है- सुनि सुन्दरि अब बचन सोहावा, विनुखोजें कहुं हाथ न आवा[3]

नियरै जानि न चीहै कोई, जानेसि कोस सहस दस होई

यह पात्र अत्यन्त ज्ञानवती है चित्रावली से चित्र के विषय में कहती है। यदि इस चित्र का कुमार कहीं है तो अवश्य मिलेगा। नहीं तो कोई बात ही नहीं है किन्तु यदि यह चित्र है तो इसका अर्थ संसार में वह कहीं अवश्य है।

करि गियान चित चेतौ माहीं, आह सो आह नाहिं सोनाहीं[4]

आहि कोउ जो एहि संसारा, जेहिक चित्र यह काहू सवांरा।

1- चित्रावली पृ0 35 छ0 139

2- चित्रावली पृ0 35 छ. 138

3- चित्रावली पृ0 141 छ. 35

4- " " " " "

इस प्रकार वह अध्यात्म वादी विचार धारा की भाव भूमि पर चिंतन शील है चित्रावली के व्याकुल हृदय को वह अपने शान्तिपूर्ण वार्तालाप से स्नेह लेप देती है और उसकी विरही आत्मा को शान्ति प्रदान करती है-

इस प्रकार रंगमती एक आदर्श सखी के रूप में काव्य में प्रस्तुत हुई है।

जौना मालिन :

यह मधुमालती की मालिन है जो काव्य में अल्प समय के लिए आई है। इसकी सृष्टि कथानक में पक्षिणी मधु को रूप मंजरी से मिलाने के लिये हुई है। यह अत्यन्त संवेदनशील है मधुमालती के पक्ष रूप होकर उड़ जाने के पश्चात् यह माला गुथना, हार बनाना छोड़ देती है। उसका सोचना है कि जब इसे बांधने वाली ही नहीं है तो इस हार बनाने का क्या औचित्य है। इस प्रकार वह भाव प्रवण रूप में दृष्टिगत होती है।

मैं तेहिं बिन हुत फूल न गाथों, फूल गूंथ बाधौं केहि मारे[1]
केहिं विधि माँड़ौ फूल की मारी, विधि हर लीन्ह सो वहि रतन हारी।

जौना मालिन मधुमालती के मिलने पर उसके पिंजरे को चूमती है नेत्रों से नीर बहाती है। वह अत्यन्त करूणं होकर मधुमालती का पिंजरा अपने कंठ से लगाती है।

"तब जौना पिंजरा कंठ लावा रोइ-रोइ नैनन सलिल बहावा[2]
मधुमालती पुनि गहबरि रोई रूप मलिन और कुटुम्ब विछोइ।

इस प्रकार जौना मालिन अत्यन्त कोमल है। समष्टि गत ममता का अथाह ज्वार अपने हृदय में समेटे फूल गूंथने वाली मालिन भावना के क्षेत्र

1- मधुमालती पृ0 333,-34, छ. 383

2- मधुमालती पृ0 334-35, छ. 384

में नायिका की माँ से अधिक आगे है। वह थोड़े समय के लिये काव्य में आकर अधिक सोचने पर विवश करती है।

धाय :

"धाय" उसे कहते हैं जो माता के समान ही पालन पोषण करती है बस वह पैदा नहीं करती किन्तु उससे बढ़कर स्नेह एवं प्रेम का खजाना अपनी पोषक सन्तान पर लुटाती है। वह अपनी संरक्षण में संतान के प्रति मातृगत भावनाओं से ओत-प्रोत रहती है वह उसी के नींद सोती एवं जागती है। पन्ना धाय इतिहास में अपने त्याग एवं बलिदान से स्वर्णाक्षरों में अंकित है -

इसी प्रकार चंदायन की धाय वृहस्पति, पुत्री वत्सला धाय है वह चांदा को अच्छे भले का ज्ञान कराती है, मार्ग दर्शन देती है। वह एक कुशल परिचारिका की भांति उसके स्वास्थ्य की कामना करती है।

वह लोरके दर्शन के पश्चात् चांदा की स्थिति देखती है कि वह दुर्बल हो गई है उसकी चेतना लुप्त हो गई ऐसा लगता है तपते हुए सूर्य का दाह लग गया है -

"कहेसि विरस्पति चांद सभारू सुरजिलाग कस करसि खमारू
हाथ पाव समेरसि नहिं करी, बांधि केस ओदि लई सारी"
"जनु तोहि लाग सुरूज के झारा, कई खण्डवानी पियाव दुबारा"[1]

1- चंदायन पृ0 136, छ. 139

धाय पद्मावती :-

यह पद्मावती की धाय है, कथावस्तु में इसकी सृष्टि नायिका के यौवन जनित अविवेक को समाप्त करना है। यह गम्भीर एवं ज्ञानी है। युवती बाला पद्मावती के यौवन जनित आवेग को अपने ज्ञान पूर्ण बातों से रोकती है।

पद्मावती यौवन भार से बोझिल है। वह पद्मावती से पूछती है

पूछै धाय बारि कहु बाता, तुइ जस कवल फूल केरंगराता[1]
केसर बरन हीया भा तोरा, मानहुं मनहिं भरउ किछु तोरा।

धाय पद्मावती के अस्तित्व का ज्ञान कराती है। वह कहती है तुम समुद्र हो, गम्भीर नदियां आकर समुद्र में समाहित होती है और यदि समुद्र ही अमर्यादित हो गया तो वह कहां जायेगा, तुम्हारा यौवन मतवाला हाँथी सदृश हो रहा है ज्ञान के अंकुश से इसे वश में करो।

पद्मावती ई समुद्र सयानी, तेहि सर समुद न पूजै रानी[2]
नदी समाइ समुद महं आई, समुद्र डोलि कहु कहा समाई
अबहिं कवल करी हिम तोरा, आइहिं भौंर जो तुम कहँ जोरा
जोबन तुरिय हांथ गहिलिजइ जहां जाइ तहं जाय न दीजए
जोबन मात गज अहै, गहहु ज्ञान आकुश जिमिरहै।

इस प्रकार धाय एक बुद्धिमती है, पद्मावती को ज्ञान देकर उसे सच्चे पथ की ओर अग्रसर करती है।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 232, छ. 173

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 234, छ. 175

धाय, दामिनी नागमती

यह नागमती की धाय है इसकी सृष्टि कथानक में नागमती सुवा संवाद में होती है। नागमती सुये द्वारा अपेक्षित होती है उसके यह कहने पर कि जिस सरोवर में हंस नहीं आता वहाँ बगुला ही हंस कहलाता है वह अत्यन्त क्रुद्ध हो उठती है।

जेहिं सरवर महं हंस न आवा, बगुला तेहिं पर हंस कहावा[1]

दइ किह अस जगत अनूपा, एक एक ते आगर रूपा

नागमती सुये द्वारा अपना अपमान सहन नहीं कर पाती, फलतः वह सुये को मारने का आदेश देती है।

दामिनी का स्थान कथानक में बुद्धिमती नारी के रूप में हुआ है वह अत्यन्त चतुर है। नागमती द्वारा सुआ के मारे जाने के आदेश से वह विचार करती है। कि यदि मैं इस सुये को मार डालती हूँ तो यह सुया राजा का मनोरंजन करता है और जिसे स्वामी प्यार करे उसे मारा नहीं जा सकता वह नागमती को नागिन बुद्धि वाली कहती है।

धाय सुवा ले मारै गइ, समुझि गियान हिये मति भइ[2]

सुवासो राजा कर बिसरामी मारि न जाइ चहे जेहिं स्वामी

यह पंडित खण्डित बैरागू, दोष ताहि नहिं सूझ न आगू

जो तिरिया के काज न जाना, परै धोख पीछे पछताना

नागमती नागिन बुद्धि ताउ सुआ मयूर होहि नहिं काउ

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 118, छ॰ 86

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 120 छ॰ 88

जौन कंत के आयुसमाहीं कौन भरोस नारि के वाहीं

वह कहती है कि दो बातें नहीं छिपती एक हत्या और दूसरा पाप[1]

अंतहि करहिं विनास लेइ, लेइ साखी देइ आप।

वृहस्पति धाय :

यह चांदा की धाय है यह प्रेमी युगल के मिलन के लिए प्रत्यनशील है। यह चांदा की अत्यन्त निकटस्थ दासी है। कथावस्तु में प्रेमी युग्म के विचारों को एक दूसरे से आदान-प्रदान करती है। यह अत्यन्त कोमल भावभूमि की है, किन्तु चातुर्य सजगता एवं परिस्थिति सापेक्ष है। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी सरल रहती है। लोर के दर्शन के पश्चात् चांदा विचलित हो उठती है। वह अचेतन अवस्था में आने लगती है उस समय दासी विरस्पति उसे पथ्य देती है। कहती है कि सूर्य रूपी लोरक के दर्शन का ताप उसे लगा है अतः शीतल पथ्य देने पर वह स्वस्थ हो जायेगी।[2]

उधर वह नायक लोर को भी युक्ति बताती है कि चंदा तुम्हे कैसे मिलेगी।

तपा रूप होइ बैठहु अंग भभूत चढ़ाय[3]

दरसन तहं निकट जउं विगतहिं देखहु नैन अधाय

उसका स्वरूप कथानक में दयालु एवं करूणामयी है वह चांदा के साथ परछाई के समान रहती है।

चांदा लोर मिलन के पश्चात् यह बात राजा महर तक पहुंचने की स्थिति आती है उस समय वृहस्पति निडर होकर झूठा बहाना बनाती

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 120 छ० 66
2- चंदायन पृ0 136, छ० 139
3- चंदायन पृ0 133, 136

असत् पात्र

बादशाह की दूती -

यह एक नर्तकी है जो बादशाह के द्वारा पद्मावती को बरगलाने के लिए भेजी जाती है इसका स्थान काव्य में असत् पात्र के रूप में हुआ है। यह यौवनवती होते हुए भी कंथा धारण कर भभूत रमाये हुए है वह वैरागिनियों की भांति अपने कंधे पर जटायें डाल रखी है उसका स्वांग वास्तविक सा लगता है वह पति वियोगिनी के रूप में पद्मावती के समक्ष आती है।

स्रवन छेद मुख मुद्रा मेला, सबद ओनाउ कहा पिउ खेला[1]
तेहि वियोग सिगीं नित पुरौ, बार-बार किंगरी लेइ झुरौ,

यह नर्तकी मक्कार है वह अत्यन्त प्रगल्भ एवं झूठी है, वह अपनी भूमिका में पूर्ण उत्कर्ष पर है बुद्धिमती पद्मावती भी उसके धूर्तता पूर्ण परिवेश को नही समझ पाती वह अत्यन्त वाक्य पटु है। उसका कहना है कि नवखण्ड सारे संसार में मैंने बन बन घूमकर अपने स्वामी को खोजा मैं दिल्ली पहुंच कर वहाँ तुर्कों के सारे घरों को ढूढ़ डाला और बादशाह के बंदी खाने में गई वहां मैंने रत्नसेन को कैद खाने में पड़े देखा वह धूप में जलता रहा। इस प्रकार की करूण दशा सुनकर किस स्त्री का दिल अपने पति के लिए नहीं पसीजेगा और यही दूती का अभीष्ट था जिसमें वह पूर्ण हुई।

बन बन सब हेरउ बन खण्डा, जल जलनदी अठार हगण्डा[2]
चौसठ तीरथ के सब ठाउँ, लेत फिरउ ओहि पिउकर नाउँ

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 753, छ० 644
2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 755, छ० 646

दिल्ली सब देखेउ तुरकानू, औ सुलतान केर बंदी खानू
रतनसेन देखेउ बंदी माँहा, जरै धूप खन पांव न छांहा।[1]

पद्मावती के हृदय - अग्नि में मानो घृत पड़ गया हो वह विकल हो उठी, किन्तु सखियों के बुद्धिमानी से[2] नर्तकी दूती के बातों पर असर समाप्त हो गया।

ये पात्र कुटिल, स्वांगपूर्ण एवं धूर्त-चरित्र वाली है। इस प्रकार यह दासी अत्यन्त चतुर प्रगल्भ एवं स्वछंद विचार की है।

वह यौवन को महत्वपूर्ण मानती है उसकी बातें ऐसी लगती है मानो यथार्थ हो अतः वह वाक्य पटु है, उसका कहना है जब यह यौवन ढल जायेगा तो तुम्हें सब बूढ़ा कहेंगे यह यौवन खोजने से नहीं मिलेगा।

जोबन हेरत मिलै न हेरा, खोजै जाई करै नहिं फेरा
हो जोकेस नग भवँर जो बसा, पुनि बग होन्हि जगत सब हंसा।[3]

इस प्रकार यह अत्यन्त बाचाल, कुटिल है कल - बल-छल के साथ पद्मावती के समक्ष प्रस्तुत होती है किन्तु अपने अभियान में सफल नहीं हो पाती।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 757, छ० 647

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 757, छ० 647

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 144, छ० 635

है और कहती है कि चंदा के उपर रात में बिल्ली कूद पड़ी थी।

जाइ विरस्पति महरि जुहारी, कइ जुहारि फुनि बात कुमारी[1]
रइनि तुरानी चांद दुलारी, विसवई उपर परी मंझारी

इस प्रकार कथानक में यह बुद्धिमान दासी के रूप में प्रस्तुत हुई है।

कुमुदनी :

यह कुंभलनेर के राजा देव पाल की दूती है इसके चरित्र की सृष्टि पद्मावती को छल के साथ देवपाल के पास ले जाने के लिए हुआ है यह असत् पात्रा के रूप में प्रस्तुत है। यह एक वृद्धा कुटनी है यह जाति की ब्राहमणी है।

कुमुदनी में मन्त्र पढ़ने की शक्ति है उसके मन्त्र के आगे बड़े बड़े पंडित भी हार जाते हैं। वह विशेष दूती है उसके मन्त्र पढ़ने से देवता भी वश में हो जाते हैं।

कुमुदनि कहा देखु मै सो हौ, मानुज काह देवता मोहों[2]
जस कांवरू चमारिन लोना, कौ नहिं छरा पढ़त के टोना
विसहर नाचहि पाढ़त मारे, औधरि मुदंहि घालि पेटारे
विरिछ चलै पाढ़त कै बोला, नदी उलटि बह परवत डोला।

कुमुदनी पद्मावती से यौवन की क्षण मंगुरता का विवेचन करती है उसे

1- चंदायन पृ0 215, छ॰ 222

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 735, छ॰ 625

अपनी बातों में फांसना चाहती है कहती है कि यौवन रूपी जल जब तक है तब तक उस स्त्री का सम्मान है किन्तु उसके शनैः शनैः घटने से जल भंवर का उद्दाम वेग समाप्त हो जाता है और हंस की सी मंद चाल से वृद्धावस्था की शिथिलता के साथ चलने लगता है। यौवन के ढलते ही भ्रमर जैसे तुम्हारे श्याम केश हंस जैसे श्वेत हो जायेंगे।

जोबन जल दिन दिन जस घटा भवंर छपान हंस परगटा[1]

सुभर सरोवर जौ लहिनीरा, बहुआदर पंखी बहुतीरा।

वह पाश्चात्य विचार वाली है वह कहती है तू दूसरे पुरूष का रस अभी नाहीं चखी हो वही जानता है जिसने उस रस को प्राप्त किया हो।

दूसर पुरूष न रस तुई पावा, तिह जाना जिंह लीहं परावा[2]

एक चुल्लु रस भरै न हीया, जौ लहि नहिं फिर दूसर चीया

दूती :

ये दूती बटमारों के देश की है। वीरनाथ तांत्रिक है जिसके कहने पर ये, समुद्र में ध्वस्त नौका जो इन्हीं बटमारों के मन्त्र से होता है, अचेत जवाहर का हरण करती है। पुनः वीरनाथ के पास ले जाती है।

लीन्ह उठाय जो सोवत नारी, कीन्हे सूरत चन्द उजारी[3]

पलक भारत ले आई ताहाँ, योगी भाल जपै पुनि जाहाँ

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 7[illegible], छ. 6[illegible]

2- हंस जायसी ग्रन्थावली, पृ0 746, छ. 337

3- हंस जवाहर पृ0 127

वे जवाहर को समझाने में प्रयत्नशील होती है एवं उसके बारात वाले दूल्हेके साथ जाने के लिये बाध्य करती है।

> जो दुल साज बिआहन आवा तेहिं हित कौन सो कंतकहावा[1]
>
> तुम अस निठुर होहि मत बेटी, पिउ आयसु का डार्यो मेटी

ये अत्यन्त चतुर है। वह जानती है कि जो कुमारी एक बार ससुराल जाती है उसे कुमारी नहीं कह सकते वह किसी की पत्नि हो जायेगी इसी भावना से वह जवाहर से कहती है।

> "दिन दस मंदिर पाँव दे फिर नैहर को आउ "

यह दूती माता के समान स्वयं को कहती हुई कहती है मुझे माता ही समझो तुम प्रसन्न रहो इत्र फुलेलआदि द्रव्यों का उपयोग करो आदि उसे लालच देकर बरगलाती है।

> मोहिं माता छूट न जानो, चीन कोई जनि दूसर जानो[2]
>
> अमरन करो फुलेल मोड लेई, खेलों हंसों सोग बजि देही।

1- हंस जवाहर पृ० 127

2- हंस जवाहर पृ० 127

अलौकिक पात्र :

इनका कार्य और कथा में इनकी सृष्टि प्रेमी युगल को मिलाने के लिए होती है इस प्रकार ये अपना कार्य करके प्रस्थान कर जाती है किन्तु कुछ अलौकिक पात्र ऐसे हैं जो नायिका के साथ भी रहती है इनमें "शब्द परी" हंस जवाहर में एवं "लक्ष्मी" पद्मावती में ऐसी ही अलौकिक पात्र हैं।

लक्ष्मी :

पद्मावत में लक्ष्मी समुद्र खण्ड में इस पात्र की सृष्टि हुई है। वह पद्मावती की रक्षा समुद्र में डूबते समय करती है। वह अपनी सहेलियों से कहती है कहीं इसकी मृत्यु न हो जाये अतः सब इसे सम्हालो इससे उसके संवदेनशीलताका पता चलता है।[1]

वह पद्मावती के रूप पर मुग्ध हो उठती है वह पद्मावती से कहती है तुम्हारे रूप को देखकर मेरा मन ललायित हो उठा है। तुम कहां की हो तुम्हारा क्या नाम है। यह उसकी जिज्ञासु प्रवृत्ति का द्योतक है।

"देखि रूप तोर आगर लागि रहा चित मोर,
केहि नगर के नागरी काह नाव धनि तोर"[2]

यह पात्र पद्मावती के लिए "खट्बाट्" लेने के लिये उद्दत है। खट्बाट एक प्रकार की हठ है जो बिना खाये पिये रहना है।

वह पद्मावती को राजपाट एवं सुहाग देने का वचन देती है।[3]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 518, छ॰ 226
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 552, छ॰ 431
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 443, छ॰ 335

पार्वती :

यह पद्मावती की दूसरी अलौकिक पात्र हैं कथा वस्तु में इस पात्र की सृष्टि रत्नसेन के सत् की परीक्षा लेना है।

तुलसी के "मानस" में पार्वती ने राम के ब्रहम रूप की परीक्षा ली थी सीता के रूप में किन्तु यहां भिन्नता है सीता ने शारीरिक स्वरूप ही बदला था वाणी से कुछ कहने का समय ही नहीं मिला था।

किन्तु यहां पार्वती रत्नसेन से विहंसते हुए कुवंर का पाटाम्बर खीचती है और कहती है कि मैं स्वर्ग की अप्सरा हूँ इन सबका मात्र यही उद्देश्य है कि रत्नसेन क्या एक निष्ठ होकर पद्मावती को चाहता है।[1]

पारबती मन उपना चाउ, देखौ कुवर केर सत भाउ[2]
ओहि एहि बीच की देवहि पूजा, तन मन एक की मारए दूजा
हौ अछरी कविलास कै जेहि सर पूजि न कोउ
मोहिं सवरेसि ओहि मरसि, कौन लाभ तोहिं होहि

इस प्रकार वह रत्नसेन की परीक्षा लेकर पद्मावती के प्रति रत्नसेन के प्रेम की प्रखरता ज्ञात करती है।

यह पात्र भी मानवीय संवेदना से युक्त है इसकी प्रवृत्ति जिज्ञासु है।

और अन्ततः लक्ष्मी उसे मंगलमय आशीर्वाद देती हैं, पद्मावती को भेटती है उसे अपनी पुत्री सदृश कहती है यह देवी पात्र पूर्णतः मानवीय

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 540, छ. 542

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 276, छ. 214

भाव से युक्त है। वह पद्मावती को पुत्री समान मानती है। वह उसे विदा देते हुए पान का बीड़ा रत्नों एवं पदार्थों से भर कर देती है। जो इस देवी पात्र के मानव जनित व्यवहार का दिग्दर्शन कराता है।

लक्ष्मी पद्मावति सौं भेंटी, औ तेहि कहा मोर तू बेटी,
दीन्ह समुद पान कर बीरा, भरि कै रतन पदारथ हीरा[1]

इस प्रकार यह पात्र है तो अलौकिक किन्तु सारे क्रिया-कलाप मानवीय जैसे हैं।

अप्सरायें :

मधुमालती में अप्सराओं की सृष्टि हुई है यहाँ अप्सरायें प्रेमी युगल को मिलाने के लिये प्रयत्नशील है। वे कुवंर को देख उस पर मोहित हो जाती है। किन्तु यह सोचकर कि यह मनुष्य तो मेरे किसी भी काम का नही है। इसके लिये योग्यकन्या खोजना चाहिए।

कहनि की यह मानुष मैं अछरि और नहमरे काज[2]
यह लखि तिय बरहि बर, कामिनि उदै-अस्त जेत राज

इस प्रकार आपस में विमर्श करके वे कुवंर सुजान को उसकी चित्रसारी में सेज पर सुला देती है। तत्पश्चात् दोनों के संयोग हो जाने पर उन्हें वहां से उठा ले जाती है। ये अप्सरायें मानवीय भावों से युक्त हैं ये तुरन्त निर्णय नहीं ले पाती है।

कोई कहै कुवरहिं ओहि लेजाइह, कोइ कहै कुवरहि इहा लैआइह[3]
जनी एक पुनि कहा बुझाइ, जातहि आवत रैनि सिराइ

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 542, छ॰ 540
2- मधुमालती पृ० 56, छ॰ 68
3- मधुमालती पृ० 59, छ॰ 62

उन्हें अत्यन्त चिंता है कि यदि ईश्वर इन्हें मिला दे तो तीनों लोक प्रसन्नता से भर उठेगा ये प्रेमी युग्म के मिलन में अनेक भावनाओं से भर उठती है इनका कार्य प्रेमी युगल को मिलाने के पश्चात समाप्त हो जाता है।

शब्द परी :

यह एक संवेदन शील अलौकिक पात्र है, यह कथा में मानवीय रूप में अवतरित है। वह देखती है कि उसका विवाह उसके अनुसार यथेष्ट नहीं हो रहा है, तो वह जवाहर के विवाह के लिए बलख नगर के शासक बुरहान शाह के पुत्र हंस को वर के रूप में खोजने में सफल होती है। यह प्रेमी युगल को मिलाने में प्रयत्नशील है। जवाहर के यह कहने पर कि मैं विष खाकर मर जाऊँगी वह उसे सान्त्वना देती है।

"दिन दस प्राण रखौ तुम गाता जब लै आवें बर बरिआता"[1]

वह विवश है, उसका चीर छिपा दिया गया है।

"जो मोंहि चीर न देनु विधाता देई प्राण तो देखि बराता"[2]

माँ मुक्ताहर जब पुत्री कष्ट से दुखी है और शब्द को बन्दी गृह से बुलवाती है उस समय शब्द स्पष्टवादी हो जाती है।

"तव दुख देखि शब्द सिर नावा, तुम आपहिं यह रोग बढ़ावा,
दीन्हों मोर चीर जस खोई, तस अब देउ प्रान तुम रोई"[3]

1- हंस जवाहर पृ० 135
2- हंस जवाहर पृ० 136
3- हंस जवाहर पृ० 137

वह कर्मठ है - कहती है -

"अबहीं चीर मिले तो जाऊँ"

"मैं तो परी परी की बारी, तोये कमल बाता बारी

मात पिता छाड़्यो यहि लागी जो देखत तन आवै आगी"[1]

शब्द परी संवेदनशील है, बटमारों के द्वारा प्रेमी युगल का वहाँ के राजा द्वारा बन्दी बना लिया जाता है। वहाँ जवाहर के प्रति उसकी संवेदन शीलता और चतुरता दृष्टव्य है। वह कामाख्या का रूप धारण करती है, आकाशवाणी करती है कि उन्हें बन्धनमुक्त करो -

"कीन्हेसि रूप कामाख्या केरी"

जीभ चढ़ाइ फूल वह लीन्हेसि मुख मेलि"[2]

और अन्तिम विदा करके, शब्द मृत हंस एवं जवाहर के चरण छूकर कारूणिक हो उठती है।

"देखा शब्द जो चन्द्र सिधारी, छुये चरन और भई भिखारी।

नयन काढ़ि चरनन दोउ पूजा, देखि लोथ का देखौ दूजा"।[3]

परियाँ -

चार परियाँ ऐसी हैं जो मानवीय भावों से ओत प्रोत हैं। इनका कार्य कथानक में प्रेमी युगल को मिलाना है। यह हंस को लाकर विवाह करा देती है किन्तु उसे प्रभात में बलख नगर में ले जाकर छोड़

1- हंस जवाहर पृ0 137
2- हंस जवाहर पृ0 165
3- हंस जवाहर पृ0 269

देती है। ये अत्यन्त चतुर हैं। विवाह करने आते हुये दूल्हे को बदलकर पहाड़ पर बांध देती हैं। पुनः वैसा ही वस्त्र लाकर हंस को दूल्हा बना देती हैं।

"तब लगि एक परी बिहँसाई, यह मैं जोगे दई बनाई
आलम शाह चीन पति बारी तेहिं घर अहैं जवाहिर बारी"[1]

वे दूल्हा बदल देती है -

"जस पहिराउ दुल्ह कर देखेसि सब निरथाय
वैसे लाइ साज सब, दूसर वरनि न जाइ"[2]

वे दूल्हे को - "ठगन चली ले मितर बराता"

और जो दूल्हा व्याह के लिए आया था उसे

"जोबर साज व्याहने आवा, सो वन मंह गहि बांह बिठावा"[3]

इस प्रकार ये परियां अत्यन्त चतुरता के साथ जवाहर का विवाह हंस के साथ सम्पन्न करवाती है।

अस्तु समस्त नारी पात्रों के चरित्र वैशिष्ट्य के अन्तर्गत विभिन्न रूप रंग एवं विचार के दर्शन हमें मिलते हैं ये समस्त नारी पात्र विभिन्न परिस्थितियों से जूझते हुए अपने अभीष्ट को प्राप्त करती हैं, तदन्तर इनमें क्रोध, कोमलता, घृणा द्वेष त्याग आदि भावनाओं के दर्शन हमें मिलते हैं।

किन्तु जहां तक मेरा विचार है इन सूफी कवियों ने नारी पात्र के चरित्र वैशिष्य को उभारने की कोशिश नहीं की है उनके ऊपर आदर्श

1- हंस जवाहर पृ0 82
2- हंस जवाहर पृ0 82
3- हंस जवाहर पृ0 82

कहीं कहीं थोपता हुआ चलता है। अन्य नारी पात्र भी कहीं कहीं सरलता के साथ नहीं अवतरित होती है।

कवि इनकी सृष्टि कहीं कहीं अनायास ही कर देता है। जैसे जवाहर की माहताब का कथावस्तु में आना[1] यह कथावस्तु में आती है और नाटकीय ढंग से अपने को व्यक्त करती है। इसी प्रकार बादल की पत्नी का भी कथावस्तु में आना भी एक संयोग सा लगता है[2],

कवि परिस्थितिवश कुछ काल्पनिक पात्रों की भी सृष्टि करता है जिसे प्रसंगानुसार उपस्थित कर अपने काव्य में समाहित किया है।

असत् पात्रों की सृष्टि भी कवि मुख्य पात्र के चरित्र को उभारने के लिए करता है।

इस प्रकार समस्त पात्रों की सृष्टि नायिका उपनायिका को छोड़कर कवि परिस्थिति विशेष में किया है कवि पात्रों के चरित्र वैशिष्ट्य पर ध्यान नहीं देता वह केवल अपना अभीष्ट दैवि रूप का गोचर कराने में अधिक प्रवृत्त दिखाई पड़ता है।

1- हंस जवाहर पृ0 124

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 772, छ० 61 राजनाथ शर्मा

द्वितीय "अध्याय"

सौन्दर्य - चित्रण

(अ) नख-शिख वर्णन

(आ) जल क्रीड़ा वर्णन

(इ) अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन

(ई) अलौकिकता एवं आध्यात्मिक संकेत

सौन्दर्य चित्रण

पूर्व परम्परा -

नखशिख वर्णन अत्यन्त प्राचीन है। सर्वप्रथम यह कालीदास के कुमार सम्भव ' में अभिव्यंजित है। इसमें काव्यकार ने पार्वती के अंग-प्रत्यंग का विस्तृत वर्णन किया है। इसका वर्णन "दण्डी" और "बाण" जैसे गद्य लेखकों ने भी किया है। प्राकृत की नाटिकाओं (कर्पूर मंजरी) तथा अपभ्रंश के चरित काव्यों में भी "नख-शिख" वर्णन की परम्परा का निर्वाह हुआ है।

बाल्मीकि रामायण, महाभारत में भी नख-शिख की योजना मिलती है। आगे चलकर हिन्दी मुक्तक एवं प्रबन्ध में भी नख-शिख की परिकल्पना है।[1]

किन्तु सूफी काव्य के "नख-शिख" का अपना अलग महत्त्व है। "नख-शिख" वर्णन में सूफी अलौकिक सत्ता का पूर्ण सन्निवेश किये हैं। कवि दाउद के नख-शिख वर्णन के आधार पर सभी कवियों ने सौन्दर्य-वर्णन किया है। दाउद का सौन्दर्य-वर्णन कुल 22 छंदों में पूर्ण हुआ है।

"जायसी का समस्त "नख-शिख" अपना आध्यात्मिक अर्थ रखता है। इस रूप में प्रेम का आधार यह रूप वर्णन प्रेम का मूलाधार है। इस प्रकार यह अलौकिक वर्णन आध्यात्मिक प्रेम-व्यंजना को स्पष्ट प्रगट करता है।[2]

1- हिन्दी काव्य में श्रृंगार परम्परा डा० गणपति चन्द्र गुप्त

2- सूफी कवि जायसी का प्रेम निरूपण पृ० 104

सूफी कवि चूँकि विदेशी है अतः ये अपना नख-शिख वर्णन केश या माँग से प्रारम्भ करते हैं। किन्तु भारतीय अपने आराध्य की वंदना चरण से करते हैं विद्यापति ने राधा का नख-शिख वर्णन चरणों से किया है।

> पल्लवराज चरन जुगशोभित गति गजराज कमाने[3]
> कनक कदलि पर सिंह समारल तापर मेरू समाने
> मेरू उपर दुई कमल फुलाएल नाल बिनारूचिपावी

इसी प्रकार सूर ने राधा का सौन्दर्य वर्णन चरण से किया है।

> युगल चरण पर गणवर क्रीड़ति तापर सिंह करत अनुराग[4]
> हरिपर सरवर सर पर गिरिवर, गिरि पर फूले कंजपराग
> रूचिर कपोत बसत ता ऊपर, ता ऊपरा अमृत फल लाग

दैहिक सौन्दर्य चित्रण दो प्रकार से किया जाता है। (1) प्रसंगानुसार सौन्दर्य चित्रण, यह भाव को रसात्मक एवं उत्कर्षपूर्ण बनाने के लिए रूप-चेष्टा चित्रण है। (2) परम्परागत [5] नख-शिख वर्णन, जो परम्परा एवं रूढ़ि से बंधी हो। सूफियों का सौन्दर्य वर्णन परम्परागत है इसमें प्रस्तुत उपमान रूढ़ि से बंधे हुए हैं।

3- विद्यापति पदावली डा0 शुभाकपूर, नखशिख वर्णन, पृ0 22

4- विद्यापति पदावली डा0 शुभाकपूर, नखशिख वर्णन, पृ0 22

5- भक्ति काव्य में माधुर्य भाव का स्वरूप डा0 जयनाथ नलिन पृ0 110

नख-शिख वर्णन

केश वर्णन :

कवियों ने नायिका के केश के लिये विभिन्न अप्रस्तुतों की व्यंजना की है। वासुकी, भ्रमर, विषधर, संसार का दुख, अंधकार कालिमा के लिए, गंध के लिए कस्तूरी, केशों की दीर्घता, श्यामता, सघनता का भी ये कवि सुन्दर वर्णन किये हैं। केशों की अलौकिकता, ज्ञापन के लिए कवि उसकी विराटता की भी व्यंजना किये हैं।

केश के लिये कस्तूरी की कल्पना जायसी की भारतीय नही है। यह फारसी सौन्दर्य चित्रण में प्रयुक्त की जाती है।

जायसी की नायिका अलौकिक सौन्दर्य से युक्त है। अतः उसके लिये जायसी सर्प, नाग की अवहेलना करते हैं। केश के लिये वे बासुकि नाग की अवतारणा करके उसके केश को अपार्थिव बना देते हैं। दूसरी कल्पना जायसी की पद्मावती को मालती पुष्प-समान निरूपित करते हैं एवं भ्रमर-केश जो पुष्प की सुरभि लेना चाहता है इसीलिये लालायित है। जायसी के नियोजन में एक चमत्कार की सृष्टि है। उनकी कल्पना है कि नायिका के केश रूपी विषधर पद्मावती के शरीर को आक्रान्त किये हुए है। वह उसकी पद्म-गंध की सुरभि लेना चाहते हैं। इस प्रकार कवि केश-वर्णन में तीन उपमान नियोजित किया है। प्रथम कस्तूरी, दूसरे वासुकी, तीसरे विषधर। अन्त में कवि श्यामता, कालिमा, कुटिलता की व्यंजना करता है।

प्रथम सीस कस्तूरी केसा, बलि बासुकि और नरेसा[1]

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 137, छं. 10।

भौर केश वह मालती रानी, विषधर परे लेई अरधानी
बेनी छोर झार जो बारा, सरग पतार होही अंधियारा,
कोंवर कुटिल केश नगकारे, लहरै भुंजिग भंवर बैसारे,
बेधें जनु मलयागिरी बासा, सीस धरहि लौटे चहुँ पासा
घुंघर वार अलकै विषभरी, संकरै प्रेम चहै गिउ परी।

कवि दाउद की कल्पना केशों के रंग, दीर्घता, विशालता के रूप को व्यंजित करती है। चांदा के पार्थिव केश को अपार्थिव स्वरूप देता है।

भंवर बरन भई देखई बारा, जनु विषधर लुरि परे भण्डारा[2]
लांब केश सिर पा धुनि आये, जनु सेदुरें नाग सुहाये
जुरा छोर झारि जोनारी, दिवसहि राति होई अंधियारी।[1]

मधुमालती के केश विष भरे हुये हैं। वे सहजता के साथ भूमि पर लहर लेकर विचरण कर रहे हैं। ये हिलते हैं, तो ऐसे प्रतीत होते हैं मानों विषयुक्त हत्यारे सर्प हैं। उसके केश रात्रि की कालिमा की तरह हैं, जिसमें मुख प्रकाश फैला रहा है। उसका केश संसार का दुख बनकर मधु के शीश के पर शृंगार के रूप में सुशोभित है। दिशायें अपना निजत्व भूल गई हैं। सारे संसार में केश ही दिखाई पड़ रहे। नायिका के केश ऐसे मानों कामदेव ने जाल फैला दिया हो। मधुमालती के केश भी विराट के स्वरूप में व्यंजित है।

तेहिं पर कच बिखरंर विष सारे, लोटहिं सेज सहज लुहमारे,[3]
सगबगाहीं परतिख मनियारे, गरल भरे विखधंर हतियारे

2- चंदायन पृ० 63, छं० 65, मा०प्र० गुप्त
3- मधुमालती- पृ० 64, छं० 78,

निस अंजोर मुख बदन देखाये, तस अंधियार दिनक मोकरायें
कच न होहिं विरही दुख सारा, भयहु जाहिं मधु सीससिंगारा
भूली दसौ दिसा निजुताही, चिहुर चिंहार भई जगमांही
छिरके चिहुर सोहागिनी, जगत भये अंधकाल
जनु विरही जन जिय-बध मनमथ रोपा जाल।[2]

कुतुबन की मृगावती के केशों की कल्पना कवि, कुटिलता, नागिन जैसी, और काले भुजंग के रूप में किया है।

"कर सो कुटिल सवांरेसि बारा", [3]
"लट जो लटक गाल पर परै"
जस रे पदम नागिन बस निकरै,
बालहि आहि घुघराले
लहर न लहरै भुवंगम कारे।

उसमान की चित्रावली के केश भी सर्प के समान हैं वे मलयागिरि की सुगन्ध के लोभ से उसके सिर पर लहरा रहे हैं। उसके केश काली नागिन के जैसी है। या उस भ्रमर जैसी है जो समूहों के साथ पुष्प दलों, पर आसक्त हैं। उसके केशों की सुगंधि मृग-मद से युक्त है। जोपवन द्वारा देश-विदेश सर्वत्र संचरित हो रही है। कवि ने नायिका के केशों के विराटता की गूढ़ व्यंजना किया है। उसके केश रूपी नाग के दंशन का कोई गारूड़ी नहीं, कोई मन्त्र-जन्त्र नही चलता नायिका के केश इतने कराल हैं।

2- मधुमालती पृ० 64, छं० 78
3- मृगावती पृ० 144, छं० 54

"पन्नग जनौ मलयगिरी लोभा"

बिथुरी अलक भुवंगिनी कारी कै जनु अलि लुबुधे फुलवारी[1]

कै जनु बदन तरनि जौतघा, सिमटि सुमेरू पाछुतम छुया

दीरघा विमल पीठ पर धरे, लहरे देखि लहर विष भरे

कच-अहि डसा जनम नहि जागा, मन्त्र न लाग मूरि लहि लागा।

मृग-मद बास आहि ते केशा, पौन जाइ लेइ देस विदेसा।

कासिम ने जवाहर के केश को संसार का प्राण कहा है। वे सघन है। उसके केश खोलने पर पाताल के नाग भी हार गये हैं, वे भुजंग हैं।

गुझिने केस भुजंगन कारे, नाग पतार जगत के द्वारे।[2]

मांग वर्णन :-

मांग वर्णन में ये कवि पारम्परिक उपमाये अधिक प्रयोग किये हैं। इसके लिये कवि सूर्य-किरण, मोती भरी मांग, चन्दन भरी मांग की परिकल्पना करते हैं। दाउद की नायिका पूर्व ब्याहता है, अतः उसकी मांग सिंदूर पूरित है जायसी के पद्मावती का मांग-वर्णन दोबार हुआ है। प्रथम नख-शिख वर्णन खण्ड में जो क्वारी है, तोते द्वारा वर्णित है, द्वितीय पद्मावती रूप चर्चा खण्ड में राघव चेतन द्वारा वर्णित है, यहाँ कवि नायिका के अलौकिक सत्ता का बोध कराता है।

1- चित्रावली पृ0 43-44, छं. 176

2- हंस जवाहर कासिम शाह पृ0 49

चांदा की मांग सिन्दूर पूरित है, जिससे सारा संसार फाग खेलता है। मांग की परिकल्पना कवि फारसी प्रभाव के अनुरूप करता है। उसकी मांग सिन्दूर भरी है ऐसी नही लगती, बल्कि जैसे कानखजूरा रेंगता हुआ चल रहा हो, वह मांग ऐसी है जैसी रात्रि में दीपक जलाया गया हो, या उगते हुए सूर्य की किरण नायिका के मांग में प्रवेश की हो, उसकी मांग मोती से भरी सारे संसार को प्रकाशित कर रही है।

"जेहिं राता जग खेलहिं फागु"[1]
मांग न चीर सिर सिंदूर पूरा, रेंगि चला जनु कानखजूरा।
दिया ज्योति रैनि जसि बारी, कारे सीस दीन्ह रतनारी।
मोती पुरइ जउही बइसारा सगरे देश, होहिं उजियारा।
"उवत सूर जनु किरन पईठी"

जायसी ने पद्मावती के मांग की व्यंजना वसन्त के उल्लसित, वातावरण से की है। नायिका के मांग की सिंदूरी रेखा, मणियों से लसित है। वह मांग ऐसी है मानों वसन्त ऋतु में सारा संसार लालिमा से भर उठा हो।

मांग जो मानिक सेंदुर रेखा, जनु वसन्त राता जग देखा,[2]
कै पत्रावलि पाटी पारी, और रचि चित्र विचित्र संवारी,।

पद्मावती के सुये द्वारा वर्णित क्वारी मांग की परिकल्पना कवि जायसी बड़ी सूक्ष्मता से किया है।उपमान भी कवि का मौलिक है। नायिका की बिना सिन्दूरकेश्वेत मांग है, जिसने अपने प्रकाश से अँधेरे मार्ग

1- चंदायन पृ0 62, छं॰ 64 माता प्रसाद गुप्त,
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 610, छ॰ 506 राजनाथ शर्मा।

को प्रकाशित कर दिया है। दोनों ओर कसौटी समान काले केश के बीच मांग खींची हुई स्वर्ण रेखा सी आलोकित हो रही है। कवि ने नायिका की मांग यमुना के मध्य सरस्वती जैसी उपमित किया है। इस प्रकार पद्मावती की मांग अलौकिकता से भर उठी है।

बरनों मांग सीस उपराही सेन्दुर अबहिं चढ़ा सिर नाहीं[1]
बिनु सेंदुर अस जानेहु दीया, उजियर पंथ रैन महं कीया।
सुरूज किरन जनु मांग विसेखी जमुन माँह सुरसती देखी।
खाड़े धार रूहिर जनु भरा, करवत लेई बेनी पर धरा।
तेहि पर पूर धरे जो मोती जमुना मांह गंग की सोती।।

मृगावती के मांग की परिकल्पना कवि की मौलिक कल्पना है। कवि प्राकृतिक उपमानों से उसकी मांग को उपमित किया है। उसकी मांग अनेकों प्राण हरण किये हैं। वह मांग ऐसी है मानों काले बादलों के मध्य बगुलों की उड़ती हुई श्वेत पंक्तियाँ हों। वह मांग तेज तलवार जैसी है।

"देखेउ मांग बहुत जिय मारा"[2]
"मांग सेत जस चन्दन भरे"
बग क- पाँति जस मांग सुहाई, बादर घन कारे महं आई।[3]
"खरग धार भर मांग सराहे"

1- पद्मावत जायसी ग्रन्थावली, पृ0 139, छं. 102 रा0जा0शर्मा
2- मृगावती कुतुबन पृ0 53, छं. 143,
3- मृगावती कुतुबन पृ0 53, छं. 143,

मंझन ने नायिका के मांग की कल्पना बड़ी कुशलता एवं भाव प्रवणता के साथ किया है। मधुमालती के केशों के बीच मांग ऐसी है मानों पथिक उस मांग रूपी पथ में भ्रमित होकर पथ-विस्मृत हो जाता है, कभी तो वह मार्ग पा जाता है §ब्रह्म को पाना व्यंजित है§ और कभी पुनः भूल जाता है। §माया मोह में फंसना§ वह मार्ग सूर्य एवं चन्द्रमा के उदय एवं अस्त होने का पथ है। लोगों के मन प्राण मांग पर इस प्रकार लुब्ध हैं। मानों दीपक पर पतंग का निछावर होना। कवि मांग को पारलौकिता के आवरण से निरूपित किया है।

देखत मांग चिहुर का पावा खिन भुलाई खिन भारग पावा।[1]

× × × ×

सूर किरन सिर मांग सुहाई, सम जग जीति गगन पर आई
मांग न आहि गगन के बाटा, रवि ससि उदै-अस्त कै बाटा
कै जनु अलिय नहीं बहिं आई, बदन चांद नहिं अलियसिराई।

उसमान की परिकल्पना मंझन की कल्पना से साम्य रखती है।

चित्रावली की मांग के लिये कवि की कल्पना गूढ़ है। नायिका ने अपने कुतलों को सुलझाते हुए सूर्य का प्रकाश विकीर्ण कर दिया, सर्वत्र संसार में उसके बाल के झाड़ने से अंधेरा हो गया, और सूर्य प्रकाश समान उसकी मांग आलोकित हो गई। कोई उसके मांग रूपी पथ पर रास्ता भटकने के डर से नहीं जाता।

1- मधु मालती मंझन पृ0 64, छं. 78

सुरज किरन करि बारहिं झारा, स्यामरैनि कीन्ह दुइ फारा।[2]

पंथ अकाश विकट जग जाना, को न जाहि ओहि पंथ भुलाना।

जवाहर की मांग वर्णन में कवि रात्रि में जलते हुए दीपक और बादलों के मध्य चमकती हुई विद्युत रेखा से किया है।

"रैन मांझ दीपक उजियारी"

जस घन मंह दामिनी चमका है, तस वह मांग सीस उपरा है।[3]

इस प्रकार कवि मांग वर्णन में अलौकिता का आभास परिलक्षित कराता है।

ललाट वर्णन :

सूफी कवियों की परिकल्पनायें ललाट के लिये पारम्परिक है। सभी इसे दूज का चांद, स्वर्ण रेखा, विद्युत रेखा, चन्द्रमा से भी उत्कृष्ट ललाट की परिकल्पना की है। ललाट की व्यंजना में इन कवियों ने पारलौकिक सत्ता का आभास कराया है।

चन्दा का ललाट देखकर देवता भी विमुग्ध हो जाते हैं। वह द्वितीया के चन्द्रमा सेसदृश प्रकाशित है। वह खरे स्वर्ण सा है, जो कसौटी पर कसा हुआ है।

"देखिलिलार विमोहे देवा, लोक कुटुम्ब तजि कीतै सेवा।

दुइज का चांद जानु परगासा, कइ खर सवन कसौटी कसा।[1]

1- चित्रावली उसमानकृत, पृ0 44, छं. 177

2- हंस जवाहर पृ0 49

3- चंदायन पृ0 62, छं. 64

मृगावती का ललाट भी द्वितीया के चन्द्रमा जैसा प्रकाश-रेखा विकीर्ण कर रहा है। वह इतना प्रकाशवान है कि दृष्टि धूमिल पड़ जाती है, उस चन्द्रमा को देखने में असमर्थ है। मृगावती के ललाट को देखकर देवता विमुग्ध हो जाते हैं।

दीख ललाट दुइज ससिरेखा, उयेउ मयंक मैन जग देखा,
देखत नैनन्ह दृष्टि घटाई, भानु सरग जनु उदिनल आई,
बदन पसीज बूंद जनु तारा, चांद नखत ले उयेउ अंगारा।[1]

× × × ×

'देखि लिलार विमोहेउ देवा,'[2]

पद्मावती का मस्तक निष्कलंक है। उसके ललाट की ज्योति द्वितीया के चन्द्रमा सदृश है। उसका ललाट सहस्रों किरणों से सूर्य समान प्रकाशित होता है तो शीतलता छिप जाती है।

कहे लिलार दुइज कैजोती, दुइज कहाँ जोती जग ओती।[3]
सहस किरन जो सुरूज दीपाई, देखिलिलार सीउ छिप जाई।

उसमान की नायिका के ललाट की सारा संसार वन्दना करता है, पूजता है। संसार के लिये चित्रावली के लालाट के समक्ष द्वितीया का चन्द्रमा गौण है। नायिका की मांग सौभाग्य से भरी है।

1- मृगावती पृ0 144, छं. 55,

2- जायसी ग्रंथावली, पृ0 38-39, छं. 3 रामचन्द्र शुक्ल।

पुनि ललाट जस दूजि कै चन्दा, दूजि छाँड़ि जगवोकहं बन्दा,[1]

मांग भरा अस दीपै लिलारा, तिनहुँ भुवन होंहि उजियारा।

मधुमालती का ललाट निष्कलंक चन्द्रमा समान है, उसके मस्तक पर स्वेद कण ऐसे प्रतीत हो रहे हैं मानों तारिकाओं के समूह से चांद ग्रस लिया गया हो।

'कचपचिये जनु चाप गरासा'

"निष्कलंक ससि दुइज लिलारा"[2]

हंस जवाहर की नायिका का भी ललाट द्वितीया के चन्द्रमा सदृश है। उसके आलोक से तीनों लोक प्रकाशित हैं।

"तेहिंपर दुइज ललाट उजेरा तीनों लोक उजेर घनेरा"[3]

इस प्रकार समस्त नायिकाओं के ललाट वर्णन में द्वितीया के चांद की परिकल्पना की गई है इसमें सूफी कवियों ने पूर्णतः भारतीय परिवेश की योजना की है।

भौंह :

सूफी कवि भौंहों का वर्णन बड़े कलात्मक रूप में किया है। ये भौंहों के लिये धनुष का उपमान प्रयुक्त करते हैं। इनका भौंह वर्णन शुद्ध भारतीय है। नायिका के भौंहों की परिकल्पना कवि धनुष से करता

1- चित्रावली पृ0 44, छं. 178

2- मधुमालती पृ0 81, छं. 67

3- हंस जवाहर, कासिम शाह, पृ0 49

है, वे धनुष अर्जुन, कृष्ण के हैं। भौंहों को कवि विराट सत्ता के रूप में व्यंजित किया है।[1]

चन्दा की भौंह की बंकिमता का वर्णन करते हुए कवि की कल्पना सूक्ष्म हैं, वे धनुष ऐसे हैं मानों दोनों हाथ से ताने गये हों। उस भौंह-धनुष की विशेषता का निरूपण करते हुए कवि कहता है वह जब संधान करतीं है तो उस धनुष की मूँठ नही हिलती, जिससे यह ज्ञात नहीं हो पाता कि यह शर-संधान किस दिशा में होगा। नायिका बासुरी बजाती थी, किन्तु अब वो धानुष्का नारी बन गई है।

> भौंह धनुख जनु दुई कर ताने, पंनच बान विष पैंचि संधाने,[2]
>
> अर्जुन धनुखं सरग मई देखें, चांद गुन सोई विसेखे।
>
> बसंकार छाँड़ि बाजिर, धानुक भई सोनारी।

मृगावती के भौंह की परिकल्पना भी पारम्परिक स्वरूप में व्यंजित है।

> भौंह धनुक जनु अर्जुन केरा, बान मार जासो फिर हेरा[3]
>
> भौंह फिराही मार सर जाही, तन्त्र न मन्त्र न औखद आही।
>
> "रूहिर न उपर पेखी, हिये साल जो कीज"
>
> कवि ने रूधिर का प्रयोग फारसी शैली में किया है।

1- डा0 गोविन्द त्रिगणायत् जायसी का पद्मावत् काव्य और दर्शन। पृ0 396

2- चंदायन पृ0 65, छं0 67

3- मृगावती। पृष्ठ 44.

पद्मावती के भौंह वर्णन के लिये कविवर जायसी ने अर्जुन, कृष्ण, राम के धनुष की परिकल्पना की है, उसी धनुष ने, राहू का बध किया, रावण को मारा, कंस का वध किया, सहस्त्र बाहु का अंत किया, इन्द्र धनुष भी उसकी भौंह धनुष की अपार मारक-शक्ति के समक्ष लज्जा से छिपा रहता है। कवि भौंह का वर्णन करते हुए भाव-पक्ष की अवहेलना करता है। वह शक्ति के निरूपण में अधिक रम गया है।

भौंहै स्याम धनुक जनु ताना, जसहुहरे भार विष-बाना[1]
ओहि धनुक किरसुन पर अहा, उहै धनुक राघौ कर गहा।
ओहि धनुक रावन संहारा, ओहि धनुख कंसासुर मारा।
ओहि धनुक बेधा हुत राहू, मारा होहिं सहस्त्रा बाहु।

अर्जुन को अग्नि ने अटूट गांडीव-धनुष अक्षय-बाण तरकश के साथ दिया जो अत्यन्त शक्तिशाली और संधान में अनन्य है। जिसका उल्लेख आदि महापर्व में हुआ है। जायसी इसी शक्ति का स्वरूप नायिका के भौंह में आरोपित किये है।

ददानित्येव वरूण:, पावकं प्रत्यभाषत:[2]
नृददभूतं महावीर्य, यश कीर्ति विवर्धनम्
सर्व शस्त्रेना धृष्यं, सर्वशक्ति प्रमथि च
सर्वायुधं महामात्र, परसैन्य प्रधर्षणम्।
एक सहस्त्रेण सम्मितं राष्ट्र वर्धनम्

1- जायसी ग्रंथावली रा0ना0शर्मा पृ0 142, छं॰ 104

2- डा0 श्याम मनोहर पाण्डेय, सूफी काव्य विमर्श पृ0 4-5 भूमिका।

देव दानव गन्धैंव: पूजित शाश्वती समा:

प्रदात्यैव धनु:रन मध्यस्ते च महेषुधी।

चित्रावली की भौंह कुटिल है, और अन्य वर्णन कवि का पारम्परिक है।

कुटिल भौंह जानों धनु ताना, इन्द्र धनुषतेहि देखि लगाना,[3]

जानों काल जगतकहं कढ़ा निस दिन रहे पन च जनुचढ़ा।

भौंह धनुष लखि इन्द्र संकाना सब जग जीति सरज कहं आना।

ज-वाहर की भौंह की परिकल्पना रूढ़ि से बंधी हुई है। कवि ने नायिका के भौंह परअपार्थिवता का आरोपण किया है।

"भौंह धनुख भई जैसे बांकी

जादिन ले वे चढ़ी कमाना, सब संसार भये निसाना।[1]

नासिका वर्णन :

नासिका वर्णन के लिये कवियों ने विभिन्न उपमान प्रयुक्त किये है, तोते की ठोर, खड़्ग की धार, तिलपुष्प आदि।

चंदा की नासिका का सौन्दर्य ऐसा है। मानों समस्त आभरणो में ग्रीवा सदृश हार सुशोभित होती है। उसकी नासिका बेना, कस्तूरी परिमल का वास लेती है।

"जनु अमरन उपरगिउ हारू"[2]

"जनहु खरग सोवन कर अहा"

बेना परिमल पलिल, फूल कस्तूरी समइ बास लेई

तिलक फूल जस फूल सुहावा, पदुमि नाम भाव जस पावा,

3- चित्रावली पृ0 44, छं. 179

1- हंस जवाहर पृ0 49

2- चंदायन पृ0 67, छं. 68

कवि मंझन मधुमालती की नासिका के लिये समस्त उपमान जूंठा एवं अनुपयुक्त समझता है। कवि असमर्थ है उसे तोते की ठोर जैसी नासिका कठोर प्रतीत होती है।

"कीर कठोर और खरग के धारा, तिलक फूल मैं बरनि न पारा"[3]

पद्मावती की नासिका के लिये कवि खड्ग, तोते के ठोर को अनुपयुक्त कहता है। कवि की कल्पना है कि शुक्र तारा उसकी बेसर में लगी नथ के रूप में आकर बैठ गया है। इस प्रकार नायिका की नासिका अलौकिक हो गई है।

नासिक खरग देउ केहि जोगू खरग खीन वह बंदन संजोगू[1]

नासिक देखि लजानेहु सुआ, सुक आई बेसरि होइ उआ।

मृगावती के नासिका के लिये कवि की नवीन कल्पना है। उसकी नासिका संतुलित है उसे विज्ञानियों ने सवांरा है। वह अमृत के शान से संवारी है। अन्य उपमानों का पारम्परिक निरूपण है।

नाक सोमिल सुनहुयह बानी, ईश्वर कहकर धरेहुबिनानी।[2]

कै पथ और दुवो धार रहा। सपूती सपनै महं कहा।

को यह अमिरित सान सवांरी, तिहन संवारी जै औतारी।

तिलक फूल जस उपम दीजै, और कह जगमह शोभन दीजै।

चित्रावली के नासिका प्रकाशवान है। मानों वहाॅ सूर्य-चन्द्र उदय होते हैं। नायिका की नासिका के लिए प्रयुक्त सभी उपमान अनुपयुक्त लगते हैं। कवि ने नायिका की नासिका का निरूपण आध्यात्मिकदृष्टि से किया है।

3- मंझन मधुमालती पृ0 70 छं॰ 85

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 147 छ॰ 107 रा0ना0शर्मा

2- मृगावती पृ0 147, छ॰ 7

ससि सुरमौन जगत उपराहीं, ससि-सूरज जहाँ उदय कराहीं[3]

तेहिं पर द्रोहिं रही मति मोरी, उपमा नहिं केहि लावौं जोरी।

"कहत सोहागिन नासिका, तिहुँपुर पटतर नाहीं"

कासिम पुरानी सभी उपमाओं का खण्डन करते हुए कहता है कि वह खड्ग की तरह है किन्तु मारक नहीं, तोते के ठोर सी है किन्तु कठोर नहीं, तोता नायिका के नासिका से लज्जित हो पर्वत पर चला गया है।

खड्ग धार पर खड्ग नहोई, टोवसुवा पर टोव न होई[4],

सुक सो नासिक देखि जग जाना, का परबत पर कीन्ह बचाना।

बरौनी वर्णन :

बरौनी वर्णन कवियों ने पारम्परिक रूप से व्यंजित किया है। नायिकाओं की बरौनियाँ तीखी है, सघन है, मारक है, सारे संसार को वे अपने पैनी नुकीली बरौनियों से बेध रही है। इन बरौनियों के मारकी स्वर्ग पाताल सर्वत्र चर्चा है। ये बरौनियाँ वन, पर्वत मालाओं, सबको आतंकित की है।

कवि नायिका के बरौनियों की व्यंजना अलौकिक रूप में करता है। इस निरूपण में नायिका के बरौनियों का संसार लक्ष्य बना हुआ है। ऐसी लक्ष्य साध्य पारधी संसार में देखने को नहीं मिला।

पद्मावती के बरौनी की कल्पना कवि राम-रावण की दो सेनाओं से करता है। जिसमें नेत्र समुद्र के रूप में उपमित हैं, वे बाण ऐसे हैं जिनसे

3- चित्रावली पृ0 45, छं. 183

4- हंस जवाहर पृ0 5।

कोई बच नहीं सका, आकाश के सारे नक्षत्र उसी के बरूनि-बाण के आघात से स्थिर है।

यहाँ कवि ने बरौनियों की व्यंजना अपार्थिव रूप में की है।

बरूनी का बरनौ इमिबनी, साधे बान जानु दुई अनी[1]
जुरी राम रावन कै सेना, बीच समुद्र भये दुई नैना

× × × ×

उन्ह बानन्ह को अस जो न मारा, बेधि रहा सिगरो संसारा
गगन नखत सब जोहि न गने, वैसब बान ओहिकेहने।

मृगावती की बरौनी सारे संसार को बेध रही है। वे सघन हैं। सहज रूप से काली है। मानो काजल युक्त है। प्रिय उसी से उसके वश में है। स्वर्ग-पाताल उसकी बरूनि-बेध से बिधें है। कवि बरौनियों केविराटताकी अभिव्यंजना किया है।

रोम रोम बेधानसमम्हारौ, इह कहौं औ कहीं नपारौ,[1]
बरूनि सघन नपारो सेजी, करत सर भेजी।
कर अर्जुन मैं जस देखा, हार्वे करत वह रोवहु बैठा,
सहज बरूनि जनु काजर दिया, यहै सिंगार पिउ आरस किया।
चौदह भुवन पृथ्वी अहि, सात दीप नौखण्ड
सरग पतार बरनि सर बेधा, जियउ पाहन गण्ड।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 39-40, छं. 6

1- मृगावती कुतुबन, पृष्ठ 39-40

चित्रावली के बरौनियों के लिये भी कवि ने वही पुरानी परम्परा का अनुकरण किया है। वे तीखे हैं, घने हैं,वे एक बार में संधानित अनेको बाण से लोगों को आहत करतीं हैं समस्त विश्व में ऐसा पारधी कहीं नहीं है। कवि ने विराट सत्ता की कल्पना की है।

बरूनी बान तीख अरू घने, सोई जानु उदि उर हने,[2]
"जगत आई होई रहा निसाना",
एक मूठ के छोड़े बान अनेक, जग मह ऐसन पारधी दुसर काहु न देख"

जवाहर की बरौनी बावरी है। वे बहुतों को मार चुकी है जो जीवित बचा बैरागी हो गया, नायिका के बरौनी के मार की अभी तक कोई औषधि नहीं उपलब्ध हुई है।

जेहिं-जेहिं हिये बाण तन लागा, जिवित बचा तो भा बैरागा[3]
सागरै जगत वो घाँवह कीन्हा, अबलौ औषध काहू नचीन्हा।

नेत्र :

नेत्र वर्णन के लिए ये कवि विभिन्न उपमानों की योजना करते हैं। जैसे-खंजन, मृग, तुरंग, रक्त कमल, आम्र-फाँक, मोतियों सेभरी हुई, नेत्रों की श्वेतता और पुतली की श्यामता के लिये समुद्र एवं भंवर के उपमान कवियों ने लिये हैं।

चादां के नेत्र श्वेत एवं मकरारे हैं। वे ऐसे प्रतीत होते हैं मानों

2- चित्रावली पृ0 45, छं. 18।

3- हंस जवाहर पृ० 50-51

आम्र-फाँक में मोती भर दी गई हो। वह नेत्र समुद्र अत्यन्त गम्भीर है। उनकी गम्भीरता में कितने नाव डूब चुके हैं। उनका थाह नहीं लग पाया।

अम्ब फार जनु मोंतिन्ह भरे, ते लई मनुसई के तरि धरे।[1]

नैन समुद्र है अति अकगाहा, बोहित्थ बुड़ि परै नहीं थाहा।

कवि कुतुबन का नेत्र वर्णन दाउद के नेत्र वर्णन से साम्य रखता है। कवि की कल्पनाशीलता सूक्ष्म दृष्टि वाली है। उसके श्वेत नेत्र गोलक कमल पंखुड़ी सदृश है जिस पर भ्रमर रूपी काली पुतली संवार कर रखी गई हो। वे चपल है उनकी चपलता का वर्णन कवि बड़े कौशल से किया है, मानों गज मोंतियों से भरी थाल हो जिसमें वे स्थिर नहीं है।

लोयन सेत बरन रतनारी, कमल पत्र पर भंवर संवारी।[2]

चपल बलोल ते थिर न रहाही, जनौ गजमोती थालभराहीं

मधु मालती के नेत्रों का वर्णन साम्य जायसी जैसा वर्णित है। कवि नायिका के नेत्रों की चपलता, तीखापन, विशालता, बंकिमता, की व्यंजना एक साथ करता है। यहाँ नायिका के नेत्रों का मुग्धकारी बिम्ब है। कवि खंजन पक्षी के पलक से ढका हुआ कहकर उसके नेत्रों के सौम्यता का भी उद्घाटन कर देता है। यह कवि की कल्पना चातुर्य का द्योतक है।

सूते स्याम सेत औ राते, लगत हिये निकरी ही जाते[3]

चपल विशाल तीख अति बाँकें, खंजन पलक सेउ पख ढाके

1- चंदायन पृ0 66, छं॰ 68, माता प्रसाद गुप्त

2- मृगावती पृ0 145-46, छं॰ 48

3- मधुमालती पृ0 86, छं॰ 83

परिधि जनु अनगित जिउ हरे, पौढ़ि धनुख सीस तरधरे

सम्मुख मीन केलि दुई करहीं, कै जनु उड़ि खंजन दुइ लरहीं।[3]

नेत्र वर्णन में जायसी की परिकल्पना पारम्परिक होते हुए भी भिन्न हैं। पहला उपमान समुद्र का है। दूसरे पाठ भेदों के अनुसार मानसरोवर को दिया है। जिसमें मानसरोवर की कल्पना अधिक उपयुक्त है। नायिका के नेत्र के कोये लाल हैं, वह कमल सदृश हैं, पुतलियाँ भ्रमर जैसी मंडरा रहीं हैं। कवि नेत्रों की चतुरता एवं चपलता के लिये तुरंगों का उपमान लिया है। पद्मावती मुग्धा बाला है उसके नेत्र किसी सजीव-संघात को ढूढ़ने के लिए बार बार आगे की ओर भाग रहे हैं। किन्तु नायिका उन्हें मर्यादित करती है।

कवि लौकिकता का चित्रण करने के पश्चात् नेत्र के अलौकिक स्वरूप का वर्णन अतिशयोक्ति के माध्यम से कराता है। उसके नेत्र की गति से संसार गतिशील है। पद्मावती के नेत्रों का मृग से साम्य मौग्ध्य भाव की व्यंजना है। पुतलियों के लिये सरोवरस्थ कालभ्रमर का समायोजन किया है। नेत्रों के लिये माणिक मयी तरंगों की योजना अत्यन्त सूक्ष्म है। किन्तु कुछ भी हो कवि के कवित्व शक्ति का सबल प्रमाण तो मिल जाता है; पर पाठक-गण नायिका के सौन्दर्य चित्रण की गणना में ही खो जाता है भाव-आनन्द नहीं ले पाता।

नैन बांक सरि पूजि न कोऊ, मानसरोदक उलथहि दोउ[1]

रातें कंवल करहि अलि भवा, घुमहिं माँत चहहिं अपसवाँ,

1- जायसी ग्रंथावली पृ0 143, छं. 105 राजनाथ शर्मा।

3- मधुमालती, पृ 86 छं 83

उठहिं तुरंग लेई नहिं बागा, चहहिं उलथि गगन कहं लागा
पवन झकोरहिं देई हिलोरा सरग लाई भुइ लाइ बहोरा
जग डौले डोलत नैनाहा, उलटि अडार जाई पलमाँहा
जबहि फिराही गगन गगन गहि बोरा, अस वैभंवर चक्र कै जोरा
समुद्र हिलोर फिरे जनु झूले, खंजन लरहि मिरग जनु भूले।

कवि उसमान भी नेत्र वर्णन निरूपण में अन्य कवियों से साम्य रखता है। नायिका के नेत्र रक्त कमल सदृश है भ्रमर उसके उपर बैठा है। वे भी श्याम-श्वेत है, वे नेत्र खंजन पक्षी के समान हैं, वे नेत्र ऐसे हैं मानो काजर की रेख-रज्जु से बँधे दो मृग आपस में लड़ रहे हों। यह कल्पना कवि की अनूठी एवं मौलिक हैं नायिका के नेत्र-मृगों का काजल से बंधना कवि की कोमल एवं भाव प्रवण दोनों भावनाओं का निदर्शन करती है। यहाँ नायिका का रूप-बिम्ब प्रत्यक्ष साकार हो उठता है। काजल से लसित मृगनैनी, विशालाक्षी नारी की साक्षात् मूर्ति। कवि की उत्प्रेक्षा प्रसंशनीय है।

रातें कवल मधुप तेहिं मांही, कहत लजारहु तेहिं सर नाहीं[1]
स्यामसेत अति दोउ सुहाये, खंजन जानु सरद ऋतुआये।
कै दुई मिरीग लरत सिर नीचे, काजर रेख डोर जनु खींचे।

जवाहर के नेत्र का वर्णन भी कवि ने पारम्परिक रूप से समुद्र-हिलोर आदि के रूप में किया है।

" नैन दोउ जस समुद हिलोरा[2]

1- चित्रावली पृ0 44-45, छं. 180

2- हंस जवाहर पृ० 50-51

अधर वर्णन :

अधर वर्णन में भी कवियों ने पारम्परिक उपमान अधिक प्रयुक्त किये हैं। अधर सुरंगी, अमृत अधर, कुश से चीरे अधर, सुधानिधि अधर, ताम्बूल से भरे अधर, त्रास देने वाले अधर, इंगुर के रंग जैसे अधर, कहीं कहीं कवियों ने अधर-वर्णन मसनवी शैली में निरूपित कर दिया है जिससे सौन्दर्य वर्णन क्षीण हो गया है। जैसे-मनुष्य के रक्त के प्यासे अधर, दाउद कवि का यह वर्णन नारी रूप की कोमलता का खण्डन करता है।

दाउद ने अधर वर्णन में मसनवी शैली का प्रयोग किया है। चंदा के अधर त्रास देने वाले हैं। वे इंगुर से घोले हुए ऐसे हैं मानों मनुष्य के रक्त पीना सीख लिये हों। वे "अधर तरासे" है अर्थात् त्रास देने वाले "जनु मनुसई के रगत पियासे" ऐसा प्रतीत होता है मानो मनुष्य के रक्त के प्यासे हों।

इंगुर घोरि के------के लिखे, रगत पियई मनुसई के सिखे।[1]

जानुतरासा कुश लेइ चीरा, खाड़ें लाइ तेहि उपर खीरा।

जायसी ने अधर वर्णन में आध्यात्मिका का चित्रण किया है। पद्मावती के अधर अमृत से भरे हुए, विम्बाफल जैसे, दोपहर के रक्त फूल जैसे, गुड़हल के फूल के समान रक्तिम। आध्यात्मिक दृष्टि से उसके दांत हीरे के उज्जवल हैं। और अधर मूंगे के समान लाल। इस लाल और श्वेत की ज्योति जब

1- चंदायन, पृष्ठ 68, छं. 70

नोट- उपर्युक्त दोहे के कुछ शब्द मूल पुस्तक में नहीं थे।

संसार में विकीर्ण होती है तो संसार उजाले से भर उठता है। यहाँ पद्-मावती के हँसने का, 'हीरा लेइ सो विद्रुम धारा' की परिकल्पना नवीन एवं मौलिक है।

अधर सुरंग अमीरस भरे, बिम्ब सुरंग लाख वन फरे[2]
फूल दुपहरि जानौ राता, फूल झरहिं जौ कहि बाता,
हीरा लेइ सो विद्रुम धारा, विहंसत जगत सो होइ उजियारा।

अग्रवाल की व्याख्या- है कि दांत रूपी हीरे अधर रूपी विद्रुम (मूंगा) दांत रूपी (हीरा) की कांति को अपनी शुभ्रता से जीत लेते हैं।

गुप्त की व्याख्या- है कि उसके अधरों का प्रतिबिम्ब पड़ने पर हीरा विद्रुम धारा की शक्ल ग्रहण कर लेता है और उसके विहंसते ही जगत में प्रकाश फैल जाता है।

मृगावती के अधर ताम्बूल से रचे हुए हैं, इंगुर जैसे हैं। कवि ने मसनवी शैली में नायिका के अधर को रक्त किया हुआ बताया है।

अधर सुरंगी पान जनु खायी, कै घोर इंगुर के लाई।[3]
रकत हमार अधर सेउं पिया, जासो बसत सो कैसेहु हिया।
अधर चौक बैरागहि हीरा दामिनि चमैंक रैन गंभीरा।

जवाहर के अधर की कल्पना कवि कासिम मुक्ताहल के सदृश्य किया है, वे अधर अमूल्य हैं, रतनारे हैं। कासिम को वर्णन आधुनिक कवि प्रसाद

2- जायसी ग्रंथावली, (रा०श०) पृष्ठ 148, छं० 108
3- जायसी ग्रंथावली, राजनाथ शर्मा, पृ० 148 छं० 108

की स्निग्धता-वर्णन से साम्य रखता है। कवि ने नायिका के आध्यात्मिक स्वरूप का वर्णन किया है।

रक्त किसलय पर ले विश्राम [2]

अरूण की एक किरण अम्लान।

"लाल छपान मनों तन माहां राती मीन सो लौके छाहां"[3]

"अधरामय सा मुक्ता डोले"

कोइ जिव देई औ साधे जोगू, जेहिं पावै अमृत भोगू

जिह्वा वर्णन :

मधुमालती की जिह्वा भी सुधा सदृश है। रसाल वचन बोलती है। अमृत भरे हुए वचन से मृतक भी जी उठते हैं। उसकी रसना दंत पंक्तियों के बीच रस से भरी शत्रुओं के तलवार सदृश है। कवि अलौकिता की व्यंजना करता है।

सुधा समान जीवमुख बाला, औ बोलत मुख बचन रसाला[4]

सुनत बचन वह अमृत बानी, मृतक मुख भरि अमृत पानी

चंदा अमृत वचन बोलती है। कोकिल समान उसकी वाणी है वह चारो वेद बोलती है, उसकी जिह्वा अमृत कुंड है। कमल पंखुड़ी जैसी है।

चांद जीभि मुख अमिरीत बानी, पान-फूल रस पिरीमकहानी,

अमृत कुंड भयी मुखनारी, सहज बात रस बहई सुनारी[5]

2- कामायनी (श्रद्धा सर्ग) पृ० 45

3- हंस जवाहर

4- मधुमालती, पृ0 75, छं० 90

5- चंदायन, पृ0 70, छं० 72

पद्मावती की रसना रस से भरी हुई अमृत वचन बोलती है। कोकिल समान उसकी वाणी है। उसकी जिह्वा चारो वेद को जानने वाली है। उसके एक बोल में चौगुने अर्थ छिपे हुए हैं। कवि पुराणों की व्यंजना करते हुए कहता है कि पिंगल, अमर, भागवत् पुराण उसकी जिह्वा पर है। इस प्रकार कवि ने जिह्वा का आध्यात्मिक चित्रण किया है।

रसना कहौं सोरस कह बाता, अमृत बैन सुनत मनराता।[1]
हरे सो सुर चातक कोकिला, बिनु बसंत यह बैन न मिला।
चतुर वेद-मत सब ओहि पाँहा, रिग,जज साम अथर बन माहाँ
एक-एक बोल अरथ चौगुना, इन्द्र मोह ब्रह्मा सिर धुना
अमर भागवत पिंगल गीता, अरथ बुझि पंडित नहीं जीता।

मृगावती की रसना रसाल है, वाणी पंचम सुर युक्त है। बोलते समय उसकी काकली दृष्टिगत होती है। उसकी जिह्वा अमूल्य कमल कलिका सी है। वाणी से पुष्प झरते हैं। कवि ने जिह्वा चित्रण में माधुर्य-भाव भरा है। मृगावती की रसना भी अपार्थिव है।

"अति रसाल रसना मुख ताँही"[2]
बोल सुहाइ सो कोकिल बानी, काकॅल माँझ लखा सो आनी
जीभ जानु मुखकवंल अमोला, फूल झरहिं जो हंसि-हंसि बोला।

1- जायसी ग्रंथावली पृ0 151, छं. 110, राजनाथ शर्मा।

2- मृगावती पृ0 149, छं. 64

दसन वर्णन-

सूफीकवि दसन वर्णन में पारम्परिक चित्रण किये है। कवियों ने दंत को बैरागरहीरा, विद्युत सदृश, मकोय के समान, स्पष्ट एवं पंक्ति बद्ध दन्त, मिस्सी से युक्त, पान से पके हुए दन्त की परिकल्पना की है। कवि अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन करते हुए आध्यात्मिकता का सन्निवेश नायिका के दसन वर्णन में किया है। नायिका के दंत अंधेरी रात में विद्युत सदृश चमक उठते है। उसके हंसने मात्र से पर्वत श्रृंखलाये प्रकाश से भर उठती हैं।

चंदा के दसन का वर्णन अंधेरी रात में विद्युत शिखा सी है। कवि लोक उपमान सिगड़ी से उसके दांतों को उपमित किया है।

दसन ज्योति बरनि नहिं जाई, चौंधें दिष्टि देखि चमकाही[1]

नेक विगसाई नींद महं हंसी, जानेहु सरग सेउ दामिनी खसी

मृगावती के दसन भी ताम्बूल-युक्त है। आकार में मकोय जैसे हैं। उसके आगे के चार दांत बैरागर हीरा सदृश है। कवि अलौकिकता का निरूपण किया है।

चौक जोत बैरागर हीरा, दामिनी चमके रैन गम्भीरा।[2]

× × × ×

"दसन मकोई तम्बोलहि पाके",

ऊँच नीच बराबर पाती, देखत दसन न होई सांती।

1- चंदायन, पृ0 148, छं॰ 68

2- मृगावती, पृ0 148, छं॰ 64

पद्मावती के दन्त को कवि मिस्सी लगे हुए दांतों से उपमित किया है। वे ऐसे हैं, मानो गंभीर रात्रि में चमकती हुई विद्युत। जिस दिन इस दसन रूपी ज्योति का निर्माण हुआ, उसी समय से सर्वत्र प्रकाश हो गया। सूर्य, चन्द्रमा, नक्षत्र उसी की अलौकिक ज्योति से ज्योतित है। कवि ने यहाँ आध्यात्मिक स्वरूप का चित्रण किया है।

दसन चौक बैठे जनु हीरा, औ बिच बिच रंग स्याम गंभीरा[1]

जस भादौं निसि दामिनी दीसी, चमक उठे तस बनी बतीसी,

वह सुजोती हीरा उपराहीं, हीरा जोंति सो तेहि परछाहीं.

जेहि दिन दसन जोति निरमयी, बहुते जोंति जोंति ओहि भई।

मधुमालती के दंत स्वर्ण में विद्युत शिखा सी प्रतीत होती है। उसके अग्रिम चौके मंगल, गुरू, शुक्र, शनि, जैसे है। उसके देखने मात्र से दृष्टि धुंधला जाती है।

"चौंधे दिष्टि देखि चमकाही"[2]

जानु सरग सेंउ दामिनी खसी

मंगल, सुक, गुरू, सनीचरी, चौक दसन भये राजकुमारी, ।

जवाहर के दसन की उपमा कवि दाड़िम से करता है। वे ऐसे पंक्तिबद्ध हैं, मानों रत्न पिरोये गये हैं। वे दन्त अमूल्य एवं अत्यन्त प्रकाशवान हैं।

दाड़िम दसन कहुँ केंहि भाँति, रतन लाग जनु पांति पांति[3]

चुनि, चुनि रतन दियो बैठारी, अति अमूल दिस चमकारी

1- जायसी ग्रंथावली, पृ0 139, छं. 109, रा0ना0 शर्मा

2- मधुमालती पृ0 73, छं. 88

3- हँस जवाहर , पृ0 52

चिबुक वर्णन :-

चिबुक वर्णन मात्र कवि उसमान ने किया है। कवि की कल्पना अनूठी है। वह चिबुक की गंभीरता, उसके स्वाद, की उत्प्रेक्षा बड़े कौशलपूर्ण ढंग से किया है। चिबुक की गम्भीरता में संजोया हुआ अमृत नीर अधर बिम्ब द्वारा प्रतिम्बित हो रहा है। अर्थात् अधरो ने उस अमृत जल को अपने में समाहित कर संचित कर लिया है। नायिका की ठुड्ढी की गम्भीरता ऐसी है मानो किसी ने पके हुए आम्र-फल उंगली द्वारा दबा दिया हो।

इसी प्रकार की कल्पना रीतिकालीनकवि बलभद्र ने किया है किन्तु वे कपोल के गड्ढे में नायक डूबना व्यंजित करते हैं। कविवर बिहारी चिबुक के गड्ढे में नायक के डूबने की परिकल्पना की है।

"डारे ठोढ़ी गाड़ गहि,नैन बटोही मार"[1]

चित्रावली की ठोढ़ी -

आम्ब सूल जनु ठोढ़ी होई वह आमिल यह इमिरित होई[2]
तेहिं तर गाड़ अपूर ब जोवा, पाक आम्ब जनु अंगुरी टोवा।
चिबुक कूप अति नीर गम्भीरा, बिम्ब अधर संजीव तेंहिनीरा।

1- हिन्दी महाकाव्य में श्रृंगार परम्परा और महाकवि बिहारी पृ० 309

2- चित्रावली पृ० 49

कर्ण वर्णन :-

कर्ण वर्णन के अन्तर्गत कवि की उपमायें दीप, चाँद, सूर्य आदि से उपमित है। वे कर्ण में आभूषण की कल्पना करते हैं। उनमें बिरियां, खूट इत्यादि आभूषण है। सुगंध के लिये चन्दन घिसकर भरा हुआ है। वे कर्ण अमूल्य हैं।

चंदा के कर्ण

"कवल फूल बिरिय अति लोने" [1]

श्रवन सीप चन्दन घसि भरे, कनक कान जनु झरकहिं दीये।

मृगावती के कर्ण संतुलित हैं सीप को सवाँर कर कंचन के समान बनाई हुई है। दोनों कर्णों की लवें विद्युत आभा सी दमकती है वे अग्नि में तपते हुए स्वर्ण समान हैं।

स्रवन सोमेल छोट न लाँबी, सीप सवाँर कंचन जसआपी, [2]

झरकहि दुहुं दिसि दामिनी लवई कैर अगिनी मुख कुंदन तपई।

मधुमालती की कर्णों की परिकल्पना भी अन्य कवियों जैसी है। कवि ने अध्यात्मिक दृष्टि से उसके आभूषणों की व्यंजना की है।

सुझर सीप दुई स्रवन सुहाये, सरग नखत जनु बीरी जराये।[3]

तुखिन हीर रतन नगजरे, शुक्र अदिति शुक्र दुई खुटिलाधरे।

1- चंदायन, पृ० 41, छं॰ 73

2- मृगावती, पृ० 146, छं॰ 60

3- मधुमालती, पृ० 75, छं॰ 91

कासिम भी नायिका के कर्ण की आध्यात्मिक व्यंजना किये हैं।

"रचे अनूप दीप दुइ कोने"[4]

कर्ण फूल डाले तेंहि लोने

जनु कौंधा लौके चहुँकोने

पद्मावती के कर्ण वर्णन में कवि ने अपूर्वता का बोध कराने के लिये उपमानो की झड़ी लगा दी है। जो वस्तुपरक तो है ही भाव साम्य के बोध में भी सहायक है, किन्तु वस्तु परक होने के कारण सौन्दर्य बोध कम हो गया है।

स्रवन सीप दुई दीप संवारे, कुंडल कनक रचे उजियारे[1]

ससि कुंडल झलके अति लोने, जनुकौंधा लौके दुहुकोने

दुहु दिसि चांद सुरूज चमकाहीं, नखतन्ह भरे निरखि नहिं जाईं

तेंहि पर खूट दीप दुई बारे, दुई धुव दुओं खूट बैसारे।

उपर्युक्त वर्णनसभी आभूषणों से सजे कर्ण की है। यहाँ वस्तुपरक चित्रण अधिक है। कवि ने मात्र आधी पंक्ति नायिका के भाव-चित्र का विम्ब खींचा है "खिन-खिन जबहि चीर सिर गहे" अन्य चित्रण तो उसकी पारलौकिक व्यंजना करने में कवि रमा है।

चित्रावली की नायिका के कर्ण सिन्धु सुता सदृश है संसार के सबसे अमूल्य नग चित्रावली के कर्णों की शोभा बढ़ा रहे हैं।

सिन्धु सुता सम स्रवन अमोला, जलसुत वचन लागि विधि खोला[2]

जो अमोल नग जगत बखाने, नारी स्रवन महं सबै बखाने,

4- हंस जवाहर, पृ0 53

1- जायसी ग्रंथावली, पृ0 154, छं. 112

2- चित्रावली, पृ0 188, छं. 46

"कपोल" :-

कपोल वर्णन में भी कवियों की कल्पनायें पारम्परिक हैं। उन्होंने इसके लिये नारंगी ईंगुर से घोंटी हुयी, स्वर्ण से घोंटी हुयी, केसर और ईंगुर मिला कर, कपोल के रंग के पक्ष में। जायसी ने कपोल के लिये नारंगी को काटकर दो भाग में कर उसे कपोल के रूप में सजा दिया है। वे ऐसे है मानों पुष्प-पराग एवं अमृत से गूंध कर लड्डू बाँध दिये हों, यह परिकल्पना छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद के श्रद्धा सौन्दर्य वर्णन में भी परिलक्षित है।

कुसुम कानन, अंचल में मन्द, पवन प्रेरित सौरभ साकार[1]
रचित परमाणु पराग शरीर, खड़ा हो ले मधु का आधार।

जायसी ने पुष्पों के पराग से सने कपोल की लड्डू के रूप में परिकल्पना की है। प्रसाद ने श्रद्धा के शरीर को मधु और पराग से सान कर निर्मितकिया हुआ व्यंजित करते हैं।

पुनि बरनौं का सुरंग कपोला, एक नारंग दुई किये अमोला[2]
पुहुप-पंक रस अमृत साँधें, केहिं यह सुरंग खिरौरा बाँधि।

मृगावती के कपोल संतुलित है, कनक से घोटे हुये हैं, चमकीले हैं, गौरा पार्वती सी चिकनाई है, उसके कपोल पर सुर नर सभी मोहित होते हैं। उसके कपोल को स्पर्श करने के लिये योगी सन्यासी भी विकल हैं। यहाँ कवि ने नायिका के कपोलो का आध्यात्मिक निरूपण किया है।

1- जयशंकर प्रसाद कामायनी, श्रद्धासर्ग। पृ० 123

2- जायसी ग्रंथावली, पृ0 152, छं. 111

गाल सुभर पातर ना मोटी, जनु कपोल कन्क दई छोटी[3]

जनु गौरा पावसि चिकनाई करे काज गालहि लै आई।

xxxx xxxx xxxx xxxx

हौ कपोल धरि रहेउ तवाई,

विरह कपोल पर घरल कपोला, सुरनर नाग सेस फुनि डोला

जोगी जंगम तपसी जती सन्यासी सब

देखि कपोल नारि कै, एक हु रहा न कब।

मधुमालती के कपोल की व्यंजना कवि अलौकिकरूप में किया है।

"देखि कपोल नारि, निहचै टरै महेश धियान।"[4]

चित्रावली में भी पारम्परिक वर्णन कवि ने किया है। चित्रावली के कपोल इंगुर की लालिमा लिये हुए हैं, वे सुभगरंग सुरंगी हैं।

"सुभग सुरंग" [5]

कपोल के लिए कवि कासिम की कल्पना भी पारम्परिक है।

"कपोल विमल रतनारे, फूल कवल दुइ दइ संवारे।"[6]

3- मृगावती कुतुवन पृ० 157, छं. 61

4- मधुमालती मंझन, पृ० 71, छं. 86

5- चित्रावली उसमान, पृ० 45, छं. 182

6 - हंस जवाहर कासिम, छ.

ग्रीवा वर्णन -

ग्रीवा वर्णन भी पारम्परिक एवं वस्तुपरक है। ये कवि ग्रीवा की परिकल्पना कुदं से फेरी हुई चिकनी, खराद पर चढ़ाई हुई, मूर्गे समान तनी हुई मोरनी समान चिकनी, अत्यन्त कोमल, तीन रेखाओं से युक्त, पारदर्शी आदि रूप में किये हैं। जायसी की नायिका पद्मावती की ग्रीवा शंख-सदृश श्वेत और चिकनी है। इस प्रकार कवि ग्रीवा वर्णन में भाव पक्ष की अवहेलना करते हुए वस्तु-परक चित्रण अधिक किया है। अतिशयोक्ति से सौन्दर्य चित्रण को हास्यास्पद बना दिया है। ये आध्यात्मिक पक्ष को उभारने में अधिक सक्रिय हैं।

चांदा ग्रीवा- जानु कुम्हार धरि चाक फिराई[1]

फूंकत नारी कचोरा लावा पियत निरन्तर गह दिखरावा,

"को तोहि लागि देहि अकंवारी"

मृगावती की ग्रीवा-

गिय अनूप कहै सुनु धाई जानु कुंदेरे कुंद भवाई[2]

"गिय मंजूरी कै घिरित परेवा",

तीन रेख जहाँ कंठमाला।

पद्मावती की ग्रीवा-

कवि जायसी ने नायिका के ग्रीवा वर्णन में अनेक उपमायें ऐसी दी है जो हास्यास्पद एवं असम्भव सी प्रतीत होती है जैसे "कंचन तार लागु जनु सीसी" ग्रीवा वर्णन में इस उपमा का कोई औचित्य नहीं लगता।

1- चंदायन, पृ० 74, छं. 76, माता प्रसाद गुप्त।

2- मृगावती, पृ० 149, छं. 6,

डा० गुप्त ने इसे कंज-नार कह कर क्रौंच पक्षी से ग्रीवा की तुलना माना है। नारी की ग्रीवा सारस (क्रौंच) पक्षी की तरह हो हास्यास्पद लगता है। शंख पद्मावती के ग्रीवा सौन्दर्य से ईर्ष्या करता है। अचेतन, जड़ वस्तु में ईर्ष्या का द्योतक अटपटा सा लगता है। यहाँ अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन है।

बरनौ गीव कंबु कै रीसी, कंचन तार लागि जनु सीसी[3]

कुंदि फेरि जानु गिउ काढ़ी, हरी-पुछार ठगी जनु ठाढ़ी

जनु हिय काढ़ि परेवा ठाढ़ा, तेहि ते अधिक भावगिउ बाढ़ा

चाक चढ़ाई साँच जनुकीन्हा, बाग तुरंग जानु गहि लीन्हा

गये मयूर तमचुर जो हारे, उहे पुकारे साँझ सकारे

पुनि तेहिं ठांव पड़ी तीनि रेखा, घूंट जो पीक लीक सब देखा।

मधुमालती की ग्रीवा-

सई विसकरमें चाक फिराई[1]

तीन रेख अति शोभित गीवं सोहागिनी दीख

जवाहर की ग्रीवा-

"वन मयूर भागे तेहिं हेरी"[2]

मनंहु तुरंग बांग बस कीन्हे,

अति निरमल दई बनाई,

पड़ गई लीक पान जो खाई,

3- जायसी ग्रंथावली, पृ० 155, छं० 113, राजनाथ शर्मा

1- मधुमालती, पृ० 76, छं० 92

2- हंसजवाहर, पृ० 53

भुजा वर्णन -

भुजा वर्णन में कवियों उपमायें वहीं पारम्परिक हैं। पद्मावती की भुजाएं कनक दण्ड सी, चंदा की बाहु कमल नाल जैसी है, चित्रावली की भुजाएं दीर्घ हैं, मृगावती की भुजाएं वृक्ष की शाखाओं जैसी छरहरी हैं, कवियों ने हथेली एवं उंगलियों का भी वर्णन किया है।

चांदा की भुजाएं -

"कारिकग्राभ देखेउ जस नाहीं, जनु पउनारि विसेखई बाहीं[3]

मृगावती की भुजाएं-

पेड़ की शाखाओं जैसी हैं। कवि ने कलाई एवं उगंलियों का भी वर्णन किया है उगंलियों को कवि मूंग की फलियों से उपमित करता है। कवि ने मसनवी शैली का अनुकरण किया नायिका की हथेली में मेंहदी रक्त के समान लगती है।

> भूपर आन मरताल सवारी, सुभर पेड़ पालो टहकारी[4]
> अइसन देखो काहि कलाई, बिरिया चर-चर चरहिं सुहाई
> तो वह जान रगत का आही, कै मेंहदी रे सुहागिन लाई
> करपालो जनु मूंग क छही, नख-जोत सत् अधिक न कही।

3- चंदायन, पृ0 74, छं• 76

4- मृगावती, पृ0 149, छं• 67

पद्मावती की भुजाएं कनक दण्ड सी है। वह खराद पर फेरकर बनी हुई है। उसकी हथेली लाल है, मानो रक्त से रंजित हो। उसकी बाहु आभूषण लसित है। कवि ने रक्त से भरी हथेली और हृदय काढ़ कर हाथ पर लेने का चित्रण मसनवी शैली में किया है। इस वर्णन से सौन्दर्य में बाधा आ गई है। सौदंर्य की कोमलता नष्ट हो गई है। विभत्सता का स्वरूप अंकित हो गया है।

कनक दण्ड दुई भुजा कलाई, जानु फेर कुदेंरे भाई[1]
कदली गाभ कै जानो जोरी, औ राती ओहि कवंल हथोरी
जानो रकत हंथोरी बूड़ी, रवि परभात तात वह जूड़ी
हिया काढ़ि जनु लिन्हेसि हाँथा, रूहिर भरी अंगुरी तेहि साथा।

मधुमालती की भुजाएं -

भुजा संडहि बिसकरमै गढ़ी, और अनूप दुइ गढ़ी कलाई[2]
औतिहुं पर दुइ सुघर हथोरी, फटिकसिला जनु इंगुर घोरी।

जवाहर की भुजाएं-भी कमल गंध से संवारी हुई है।

कमल गन्धते सुभग संवारी, मनहुं चक्र पर भवंर भवांई[3]
कवि उंगलीके लिए कवि मसनवी शैली में निरूपण करता है।

"मूंगफली जनु अंगुरी रतन बोर रतनार"

1- पद्मावती, पृ0 157, छं. 114

2- मधुमालती, पृ0 77, छं. 93

3- हंस जवाहर, पृ0 53

कुच वर्णन – (उरोज)

नायिकाओं के कुच वर्णन में सूफी कवि अत्यन्त सूक्ष्म पर्यवेक्षण दृष्टि रखते हैं। ये विभिन्न पारम्परिक उपमाओं से नायिकाओं के कुच को उपमित करते हैं। कंचन के लड्डू, कुदंन, विल्वफल, नारंगी, उलटकर रखे गये कटोरे, कनक–कलश इत्यादि। इसी प्रकार कुचाग्र को भी ये केतकी, कमल, को भेदता भ्रमर, अथवा श्याम छत्र को धारण करे हुए, कवि कुचों को युद्ध में लड़ने वाले वीरो से भी उपमित किया है।

नायिकाओं के कुच वर्णन में कवि कल्पना अत्यन्त स्थूल–परक है, किन्तु कवियों ने बड़े कौशल से उसे आध्यात्मिक आवरण दिया है।

चंदायन–

नांरिग थनहर उठे अमोला, सूर न देखई पवन न डोला,[1]
सुमुद भरा जस लहरे देई, रस भवरहिं लेई,

कवि दाउद ने कुच वर्णन नहीं किया किन्तु।

जब चांदा विरह ज्ञापन सखी से करती है तो कहती है– "जो चंदन लाउं थनहारा अधिक उठै पिरिअकै झारा," इसी प्रकार मृगावती के कुच गहन और कठोर हैं। वह कुम्भ स्थल में "सरल सुहारी" सदृश है कवि एक ओर तो कठोर कहता है, और दूसरी ओर सरल सुहारी कहता है इस प्रकार की वर्णन–स्थिति दुरूह हो गई है।

1– चंदायन, छं० 15

कवि क्या कहना चाहता है अस्पष्ट है।

गहन कठोर पयोधर नारी, जनु कुम्भ स्थल सरल सुहारी[2]

कवल वरन कुच उठे अमोला, तेहिं पर बईठ भवंर एक भूला,

तरल तीख उर लागहि जाके, छाती फूट पीठ महं ताके।

जायसी अपने नायिका के कुचों को हृदयस्थ थाल पर कंचन के लड्डू सदृश अथवा दो कटोरे हृदय रूपी थाल पर उलट कर रख दिये हों। जिन्हें रत्नों से मुद्रित किया गया है। अन्य वर्णन में शालीनता का अभाव है प्रेम मार्गी कवि होने के कारण कवि का वर्णन उत्तेजक है। क्योंकि सूफी प्रेमी अपनी आराध्य को प्राणप्रण से चाहता है। आराधक का आराध्य जब तक उत्तेजक रूप में नहीं वर्णित होगा तब तक आराधक उसे प्राणों से भी अधिक कैसे चाहेगा। सम्भवतः यही भावनावश कवि अश्लील वर्णन कर गये हैं।

हियाथार कुच कंचन लाडू, कनक कचोर उठे जनुचारू[3]

कुदंन बेल साजि जनु कूदे, अमृतरतन मोन दुई मूंदे

वेधें भौर कंट केतकी, चाहिय वेधं कीन्ह कंचुकी।

जोबन बान लेई नहिं बागा, चाहहि हुलसि हिये हठ लागा।

अगिन-बान दुइ जानों साधे, जग वेधि जौ होहिं न बाधें।

उतंग जँभीरी होहिं रखवारी, छुइ कोइ सकै राजा की बारी।

दारिउ दाख फरे अनचाखे, अस नारंग दहु का राखे।

2- मृगावती, पृ0 50-51, छं. 70

3- जायसी, पृ0 158-69, छं. 115

उसमान की कल्पना कुचों के लिये सुन्दर है वे उत्तुंग हैं, एक डाल पर फले हुए, दो नारंगीसदृश, गुणी संयुक्त स्वर्ण कटोरी, जो शिव-अर्चना के पश्चात् उलटकर रख दी गई हो। पारदर्शी परिधान में उसके कुच कमल कीयुगल कलिका सी दृष्टिगत होती है कुचाग्र के लिये कवि छत्र की योजना किया है, वह कुच ऐसे हैं मानों छत्र धारण कर वे छत्रपति हो गये हैं।)

होत उतुंग सिंहन निरमरे, एक डारी दोइ नारंग फरे[1]
कनक कटोरी दहुगुन भरी, शंकर पूजि उलटि जस परी,
छीने पट महं झलकत दीसी, जनु भीतर दुहूं कमल कलीसी,
होत उत्तुंग दोउ अति लोने, जनु दुइ बीर छत्रपति होने।

कवि कासिम की कल्पना है कि नायिका ने अपने हृदय प्रदेश पर अमृत रूपी कुचों की बाग लगाई है। नायिका की साड़ी के ऊपर से कुच ऐसे लग रहे हैं मानो फुलवारी फूली हो।

"फिर अमृत की बाग लगाई"[2]
उपर चीर पहिरी हिय नारी फूल रही जानो फुलवारी
प्रेम भरा वह सागर हीया, तापर नग सेहिं जग दीया।

1- चित्रावली, पृ0 47, छं॰ 119,

2- हंस जवाहर , पृ0 54

पीठ वर्णन :-

कवि नायिका के पीठ के लिए मलयागिरी, सुमेरू पर्वत, शंख से छोटी हुई आदि रूप में व्यंजना किया है। कवियों ने पीठ पर लटकती हुई वेंणी की भी सुन्दर परिकल्पना की है। वेणी नागिन से उपमित है। ये पीठ की पुष्टता की परिकल्पना पर अधिकध्यान देते हैं। नायिका की पीठ घोट घोट कर बैठाई गई है।

पद्मावती की पीठ मलयागिरी सी संवरी हुई है, कवि की कल्पना अतिशयोक्ति पूर्ण हो गई है। रोमावली क्षीण होती है। कवि व्यंजना करता है कि वही रोमावली पीठ के पीछे वेणी रूप में आ गई है। कवि वेणी के उपर चुदंरी की कल्पना सर्प के केंचुली से करता है। अतः सारी परिकल्पनाएं अतिशयोक्ति पूर्ण हो गई है। साथ ही अत्यन्त क्लिष्ट भी है। नागिन की कल्पना कवि कृष्ण द्वारा नथी हुई नागिन से करता है, जो उस समय तो मुक्त हो गई थी, आज पूर्णरूप से पद्मावती की वेणी में बंधी हुई चुटिला द्वारा नाथ दी गई है।

> बैरिन पीठ लीन्ह वह पाछे, जनु, फिर चली अपछराकाछें[1]
> मलयागिरी से पीठ संवारी, बेनी नागिन चढ़ी जोकारी
> लहरे देति पीठ जनु चढ़ी, चीर ओहार केंचुली मढ़ी

1- जायसी ग्रन्थावली, पृष्ठ 162, छन्द 17, रा0ना0 शर्मा।

दहुँ का कहँ अस बेनी कीन्हीं, चंदन बास भुंवँगै लीन्ही

किरसुन करा चढ़ा ओहि माथे, तब तो छूट अब छूटै न नाथे

कारे कवंल गहे मुखदेखा, ससि पाछे जनु राहू बिसेखा।

मृगावती की पीठ भी शंख से घोट कर सवांरी हुई है। साँचे में ढली है, ब्रहमा ने पूर्ण मनोयोग से गढ़ा है। पीठ अत्यन्त प्रकाशित है। कवि वेणी को वासुकि नाग से उपमित किया है।

"साखं घोटि कै पीठ सवांरी, सांचहि ऐसी ढार न जाई"[1]

"विधि अपने उर चित अपनाई"

"पीठ दीपे" जनु झर कहि दहा"

विखम भुवंगभ वेणी भये, वासुकी पूर गांठ तर देखा।

चांदा की पीठ भी घोट घोट कर बैठाई गई है-

"घोटहि घोट पीठ बैसारी करहि बिनान न लावहि ठारी"[2]

पेट वर्णन :-

नायिकाओं के पेट वर्णन के लिये भी कवि की उपमायें पारम्परिक हैं। ये उपमायें कवि ने भोज्य पदार्थों से लिया है। नायिका का पेट घृत में छनी हुई सुहारी सदृश है। दूध में पगी हुई, नवनीत के समान, त्रिबलीयुक्त है।

1- मृगावती, पृ0 150, छं. 68

2- चंदायन, पृ0 77, छं. 79

जायसी की नायिका का पेट चंदन लेपित है। केशर और कुकुंम मिला हुआ हल्का पीला एवं लाली किये हुए है। पेट की सुकुमारता का वर्णन करने के लिये कवि पान फूल के आहार की कल्पना करता है। जो अतिशयोक्ति पूर्ण पान-पुष्प खाकर यथार्थ रूप में कोई स्वस्थ जीवन नहीं जी सकता है।

पेट परत जनु चंदन लावा, कुकुम केसर बरन सुहावा[1]

खीर-आहार न कर सुकुवारा, पान फूल कै रहै अधारा

दाउद की कल्पना चंदा के पेट के लिये, घृत में पकी सुहारी की है। वह ताम्बूल एवं पुष्प जैसी क्षीणकाय है। उसकी क्षीणता के लिये कवि आँत से रहित पेट की कल्पना करता है जो असम्भव है। बिना आँत के नायिका रोगिणी सदृश है, खण्डित अंग है।

जानु सुहारी घिरित पकाई देखत पान फूल पतराई[2]

जानों पेट भहं नाहीं, आतंरिक्ष चांद दीस परछाहीं।

मृगावती का पेट नवनीत मथ कर बनाया गया है। वह इतना पतला है मानों किसी गुणवन्ती ने पूरी पकाई है।

जैनु मथ कर पेट कमावा [3]

पातर पेट कहां विछराई, पूरी जानु गुनवार पकाई।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 160, छं. 116

2- चंदायन, पृ0 76, छं. 78

3- मृगावती, पृ0 151, छं. 71

चित्रावली का पेट भी पतला है। वह इंगुर की लोई से मली गई है। वह ऐसी गुलाबी आभायुक्त है मानों महावर को दूध में पकाया गया हो उसका पेट त्रिबली युक्त है।

पातर पेट कहै का कोई, जनु बाँधि इंगुर की लोई[1]
मनुहुं महावर दूध सो पागा, सतत् रहे पीठ से लागा
तेहिंपर त्रिबली अति सुख देही, गढ़ी विधाता काम पसेई
सोभित तीनो रेख सोहाई, तीन भुवन नहिं उपमा पाई।

जवाहर के पेट के लिए कवि ने पारम्परिक उपमान प्रयुक्त किये हैं। कवि पेट को काम पुरपथ कहता है।

"उदर सो बाट कामपुर केरी।[2]
अति सुकुमारी पान अस बारी, पान फूल कै रहै अधारी।

नाभि वर्णन :-

कटि के बाद नाभि का वर्णन कवियों ने किया है। कवियों के नख-शिख वर्णन में तारतम्यता नहीं है। मृगावती नख-शिख वर्णन में कटि के बाद कुच वर्णन हुआ है, सूफी कवि नाभि सौन्दर्य वर्णनमें दो बातों पर विशेष ध्यान दिया है। प्रथम नाभि की गम्भीरता, दूसरी सुगन्ध की तीव्रता, के लिये कवि कुंड, भवरं, सुगन्ध के लिए कस्तूरी गंध, चन्दन गंध, परिमल गंध आदि।

1- चित्रावली, पृ0 194, छं. 48

2- हंस जवाहर, पृ0 45

पद्मावती की नाभि कुण्ड के समान गम्भीर (गहरी) है। उसमें मलयागिरि की सुगंधि भरी है। उसकी गहराई की व्यंजना करते हुए कवि भँवर की कल्पना करता है। चन्दन के लेप बीच हिरणी के खुर की कल्पना कवि की गूढ़ हो गई है। यहाँ पर कवि नारी के शील को परोक्ष रूप से व्यंजित करता है। जो शालीनता नष्ट करती है। कवि वर्णन करते हुए सदैव इसी भावना से ग्रसित है कि न जाने कौन भ्रमर इसे भोग करेगा, सारे भ्रमर रूपी संसार के लोग उसकी नाभि से निकली सुगंधि से सुवासित होकर नायिका के आस-पास मंडरा रहे हैं। उससे छुटकारा नहीं पाते।

> नाभि कुंड सो मलय समीरू समुंद-भवंर जस भवै गंभीरू[1]
> बहुते भवंर बंवंडर भये, पहुँचि न सके सरग कह गये
> चंदन माँझ कुरगिनि खोजू, दहु को पाउ राजा भोजू
> को ओहि लाग हिवंचल सीझा, का कहं लिखी ऐस को रीझा
> तेहि अरधानि भौर सब लुबुधे तजे न अंग।

चित्रावली की नाभि अत्यन्त गंभीर है। चित्त जब उस नाभि पर चढ़ता है तो प्राण डूबने लगते हैं। यह कल्पना कवि की मौलिक है और नाभि की गम्भीरता भी सहज रूप से प्राण के डूबने पर स्वतः व्यंजित हो जाती है। कवि नाभि की गम्भीरता के लिए मथनी से मथे क्षीर सागर में भंवर के रूपमेंकी है।

> नाभि कुण्ड पुनि अति गहराई, जब चित चढ़ै बुढ़ि जिउ जाई[2]
> सिंधु और जहं पानि फिरावा, तेहिं पर जनम निकर नहिं आवा

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 164, छं० 119
2- चित्रावली पृ० 47-48, छं० 193,

नैनु ते कोमलसोठाउ, जीभ कठोर लेहु का नाऊँ,

मृगावती की नाभि ऐसी है मानो किसी ने कंचन से सोना उंगली द्वारा निकाल लिया हो। उसकी नाभि भी भंवर के समान गहरी है। जो उसमें डूबा वह निकल नहीं सका।

नाभि देखत जाइ न छाड़ी, कनक कोह जनु अंगुरी काढ़ी[1]
कैर भंवर जस नीर बहिराई, जोरे परै उठि निकसि न जाई।

जवाहर की नाभि भी पारम्परिक उपमानों से उपमित है।

नाभि विवर जानै जगमाँही तैसेहि नाभि पेट उपराहीं[2]

मधुमालती की नाभि गहरी है -

नाभि कुण्ड परि जाई, घूमि रहे पर निकसि न जाई।[3]

रोमावली :

रोमावली सौन्दर्य चित्रण में कवि कल्पना का सूक्ष्म निरीक्षण परिलक्षित होता है। नाभि से प्रारम्भ होकर कुचों के बीच में पहुँचने वाली रोमावली के नागिन का उपमान इन्हें अधिक प्रिय है। हिन्दी काव्य के उद्भट्ट कवि विद्यापति ने भी रोमावलि का वर्णन किया है।

1- मृगावती, पृ0 151, छं. 72

2- हंस जवाहर पृष्ठ 54

3- मधुमालती पृ० 80, छं० 96

रोमावली रूपी नागिन अधरों का रस लेने के लिये उपर चढ़ती है वह प्यासी है किन्तु नासिका रूपी खगपति (गरूण) के भय से वह कुच रूपी कंदरा में सिमट जाती है। कविवर विद्यापति की परिकल्पना है।

नाभि विवर सयं रोम तलावलि, भुजंगिनी सांस पियासा[1]
नासा खग पति चंचुमल, भई कुच कंदर गिरासा।

पद्मावती की रोमावली, काली सर्पिणी सदृश है जो नाभि से निकलकर मुख रूपी कमल की ओर बढ़ी किन्तु मयूर रूपी ग्रीवा देख ठिठक गई, यहाँ कवि रूपकातिशयोक्ति उत्प्रेक्षा के भ्रान्तिमान के सहारे उक्ति में चमत्कार उत्पन्न कर दिया है।

साम भुवंगिनी रोमावलि, नाभि निकसि कवलं कहं चली,[2]
आवौ दुवौ नारंग विच गइ, देखि मयूर ठमकि रह गइ।
मनहुँ चढ़ी भौरन्ह के पाँति, चंदन खंभ बास के भाँति

मृगावती की रोमावली स्याही सदृश है। अथवा विरहिणी यमुना नदी की तरह काली है। जो कुच रूपी स्वर्ण शिखर के बीच से बहाई गई है जो नाभि मार्ग तक आई है।

स्याही काली रोमावली, वै कालिन्दी विरहे जली।[3]
कनक शिखर दुहु बीच बहाई, नाभि मार्ग चली कहं आई।

1- विद्यापति पदावली डा0 शुभाकार कपूर, नख-शिख वर्णन, पृ0 30, छं0 15
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 160, छं0 116, रा0ना0 शर्मा
3- मृगावती, पृ0 151, छं0 71

चित्रावली की रोमावली क्षीण है। अभी वह हृदय तक नहीं पहुंच पाई है। ये कवि स्त्री के रूप-चित्रण में सर्प सुमेरू पाहन आदि का वर्णन करके कोमलता का ह्रास कर देते हैं। कवि की कल्पना है कि कुच रूपी सुमेरू की संधि के बीच सोया हुआ सर्प का पोआ शीतल छाया ले रहा है। चीटीयों की चढ़ती हुई पंक्ति है, जो अमृत अधर के वास से मत्त होकर धीरे-धीरे आगे बढ़ रही है। कवि की कल्पना चीटीओं का मंद गति से बढ़ना व्यंजना, नायिका के रोम का अभी निकलने का भाव ज्ञात कराता है। यहां कवि की सूझ शक्ति तीव्र है। उत्प्रेक्षा का प्रयोग कवि ने सुन्दर किया है।

रोमावलि अबही उर छीनी, बरनि न सकै दृष्टि मति छीनी,
संधि सुमेरू लही अहि-पोवा, शीतल छाँव पाव जनु सोवा[1]
अमृत अधर बास सुनि माँती, जनहु चली भौरन्ह की पाँती
सौंरत रोमावली सुहाई, हेवर जाइ दर लीसी खाई
पाहन हिये जोरे वह दीसी, होई लीक वह पाहन कीसी,

यही कल्पना जवाहर के लिये करता। कवि कासिम भी करते हैं।

"पाँति पिपिल अमित बजाई"[2]

मधुमालती की रोमावली विषयुक्त है। कवि की उत्प्रेक्षा है कि वह रोमावली रूपी नागिन अभी नाभि-विवर से निकल रही है। कवि यहाँ पर नायिका के अभी यौवन के प्रारम्भ का भाव व्यक्त करने के लिये विवर से निकल ने की कल्पना की है।

"रोमावलि नागिन विष भरी, जनु कटि हुते विवर अनुसरी"[3]

1- चित्रावली, पृ0 47, छं० 192

2- हंस जवाहर पृ0 80,

3- मधुमालती, पृ0 80. छं० 96

कटि वर्णन :-

कटि सौन्दर्य वर्णनमें सूफी कवियों की उड़ान बड़ी ऊँची है। उनकी कल्पनायें उहात्मक हैं। कटि व्यंजना पारम्परि उपमानों से उपमित है। सिंहकी कटि, बरैया की कटि, कमलनाल के टूटने पर उसके तार जैसी कटि, इस प्रकार कटि वर्णन अतिशयोक्ति पूर्ण हो गया है। कही सिंह नायिका की कटि से पराजित होकर वन में चला जाता है। यहाँ पर सूर द्वारा रचित राधा के कटि सौन्दर्य से पराजित होकर सिंह वन-वासी हो गया था। किन्तु राधा के मलिन होने पर गहवर से निकल आया है।

"गहववर ते गजराज आईके अंगहि गर्व बढ़ायो"

बरैया नायिका की कटि से पराजित होकर डंसती है किन्तु नायिका को नहीं जिससे वह पराजित हुई है।

चंदा की कटि -

बरइ लंक विसेखई पाना, अउर लंक पातर को गुना[1]

"फूकत होइ टूट दुई आधा"

मृगावती की कटि-

"जनु के हरि से कीहेसि उचोरी", [2]

चलत डोल जनु बेगर अहा, लागत पवन टूटि न रहा,

नायिका की कटि मुट्ठी में आ जाती है "कर बारक मूठ समाई" इस प्रकार

1- चंदायन पृ0 77, माता प्र0 गु0।

2- मृगावती, पृ0 150, छं 69

वर्णन करने के बाद कवि आध्यात्मिता की व्यंजना करते हुए नायिका की अलौकिता प्रदान कर देता है। "देखत लंक विमोहे देवा"।

जायसी की नायिका की कटि जैसी संसार में किसी की कटि नहीं है। बर्रैया ईर्ष्या से भर उठी है, उसकी कटि हार गई और उसी चिंता में वह पीली पड़ गई है, पद्मावती की कटि कमनाल दो खण्ड करने के बाद उसके तार सदृश क्षीण है वह हृदय के भाव. परिवर्तन पर भी गतिशील हो जाती है। यहाँ कटि के संवेदनशीलता की कवि व्यंजना करता है। वह तागे समान है। सिंह पराजित होकर मानवरक्त पान करने लगा, इस प्रकार के भाव से लगता है कि नायिका की कटि संसार के लिए दुख का कारण बन गई है। सौंदर्य सुख के लिए है दुख के लिए नहीं।

> लंक पुहुमि अस काहिं न काहू केहरि कहाँ ओहि सरि ताहू[1]
> बसा लंक बरनै जग झीनी तेंहि ते, अधिक लंक वह खीनी
> परिहंस पियर भये तेंहिं भँसा, लिये डंक लोगन कहँ डसा
> मानहुँ नाल खंड दुइ भये, दुहुबीच लंक-तार रहि गये
> हियके मुरै चलै वह तागा, पैसदेत कित सहित सक लागा
> तेहिरिस मानुस-रकत पिय खाय मारि के माँसू।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 163, छन्द- 118, राजनाथ शर्मा।

चित्रावली के कटि की कल्पना कवि कोमलता के रूप में किया है। यहाँ दृष्टि पड़ते ही वह और क्षीण हो जाती है। देखने वाला संकोच करता है कि कोमल कटि कहीं टूट न जाये। कवि का वर्णन अतिशयोक्ति पूर्ण है।

अति सुकुवार लंक पुनि छीनी, दृष्टि परै बारहु ते खीनी,[1]

देखत सकुचै देखनि, हारा टूटि न परै दृष्टि के भारा।

जवाहर की कटि की क्षीणता के लिए कवि भ्रमर के उपमान प्रयुक्त करता है नाभि की कटि की कृषता ने केहरि, चीता की कटि को जीत लिया है।

"बीच जानहु हुइ दुइ आधी, केहिं विधि चलें ठाढ़ी सत् बांधी[2]

केहरि सिंह हार पुनि चीता, सब मिलि लंक नारी वह जीता।

जाँघ वर्णन :-

इस अंग के लिये कवि कल्पना पारम्परिक है कवि जांघ के स्वरूप चित्रण के लिए, कदली खंभ, का उपमान अधिक प्रयुक्त किये हैं। कविवर विद्यापति भी कदली खंभ की परिकल्पना किये हैं किन्तु वह कल्पना "विपरित" अर्थात् उलट कर रखी हुई स्वर्ण कदली खंभ, जैसी जंघाएं।।

1- चित्रावली, पृ0 48, छन्द 195

2- हंस जवाहर, पृ० 54

"जंघा विपरित कनक-कदलि पर, सोभित थल पंकज के रूपरे!"

मृगावती की जाँघ के लिए-

"कदली खम्भ दोइ जगत सुहाइ, दुखिन क चीर आनि पहराई।[2]
देखेंउ जंघा पार न पावा कनक चीर सेंदूर जनु लावा।
कै मलयागिरि केर सवाँर सुहर पेड़ पालो तटकारी"

मधुमालती की जांघ-

" केरा खम्भ फेरि जनु लाये" [3]

चित्रावली की जाँघ-

पुनि जंघा अति सुन्दर साजी, युगल जंघा तिहु लोक विराजी[4]
केरा खंभ कलश कर हेरी, जांघ निकट वे दोउ उकेरी,

चंदा की जांघ-

"गरूर खम्भ दोउ चीर फिराये"[5]

1- विधापति पदावली, पृ0 24, डा0 शुभा कपूर।

2- मृगावती पृ0 151, छ॰ 73

3- मधुमालती पृ0 44, छ॰ 19

4- चित्रावली, पृ0 49, छं॰ 48

5- चंदायन, पृ0 78, छ॰ 80

नितम्ब वर्णन :

कवियों ने नितम्ब वर्णन पर कम ध्यान दिया है ये नितम्ब वर्णन के बाद सीधे जांघ वर्णन करने लगते हैं। पद्मावती के नितम्ब शोभा रूप हैं।

बरनौ लंक नितम्ब के शोभा, औंगिज गवहि देखि मन लोभा,[1]

मधुमालती के नितम्ब विशाल हैं उनकी विशालता से कामिनी के दो खण्ड होने का भय था; यदि त्रिबली पेटकी रेखा का दृढ़ बंधन न होता।

टूटि परति ~~करू~~ कामिनी गरूव नितम्ब के भार[2]

जौन होत दृढ़ बंधन लीन्हे त्रिबली तासु अधार।

चित्रावली के नितम्ब–

शुभ नितम्ब जितम्बनि केरे, गये हेराइ सोइ जनु हेरे,

जनु संगम दुइ परवत अहहि, एक बार के बाधे रहहि,[3]

चरण वर्णन :-

सूफी कवि अंत में नायिकाओं के चरण सौन्दर्य का वर्णन करते हैं। चरण-शोभा वर्णन करते समय कवि उसकी कोमलता, रक्तिमता, अलौकिकता, का निरूपण करते हैं। रक्तिमता के लिए-इंगुर, महावर एवं रक्त को उपमान, कोमलता के लिए कमल चरण। अलौकिकता का संकेत देने के लिए कवि, देवताओं द्वारा चरणों का हाथ में लेना, नायिका के पग जहाँ-जहाँ पड़ते हैं वहाँ लोगों का शीश झुकाना, नायिका के पाँव स्पर्श करने से पुरूषों के पाप नष्ट हो जाना आदि। कवि का चरण वर्णन नायिका के ब्रहमत्व की पूर्ण प्रतिष्ठा का निरूपण है।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 44 , छं॰ 20

2- मधुमालती छं॰ 96, पृ0 80

3- चित्रावली छ 194, पृष्ठ 48

पद्मावती के चरण-

कवल चरण अति रात विसेखी, रहै पाई पै पुहुमि न देखी[1]

देवता हाँथ हाँथ पगु लेहीं जहं पग धरै सीस तहं देहीं,

माथे भाग कोइ अस पावा, चरन कवंल लेई सीस चढ़ावा।

चंदा के चरण-

जउं ओहि देख चलन पा लागी, पाप केत पुरूषन्ह के भागी।[2]

मृगावती के चरण-

चलत अंत तरूवन्ह के पावा, जानु घोर महावर लावा[3]

मन महं अस सर भुई लागेउ, पाँव धरै सिंह रस चाखौ।

चित्रावली के चरण-

चरन कवंल पर मन बलिगये, जेहिं मग चले तहां रज भये[4]

तलुवां उघेरख शुभ बाची, सुन वर हिये लीख जनु खाँची

जेंहि-जेंहि पंथ चरण के चले, केते हिये पाँव तर मले,

चलत चरन भुइ परे न देई, सुर-नर मुनि नैन्हन पर लेई।

जवाहर के चरण-

"रतन जड़ी गुजरी चमकारी, पाँव धरत चमकै उजियारी"[5]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 44, छ॰ 20

2- चंदायन, पृ0 78, छ॰ 80

3- मृगावती , पृ0 151, छ॰ 54

4- चित्रावली, पृ0 19, छ॰ 49

5- हंस जवाहर , पृ0 54

तिलवर्णन :-

तिल वर्णन भी सूफी कवि बड़े मनोयोग से करते हैं। कवियों ने तिल के उपमान के लिए भ्रमर, घुंघुची, ध्रुव, ब्रह्मा द्वारा शरीर निर्माण करते समय कपोल पर रंग बिंदु का गिर जाना, आदि कल्पनाएं किये हैं।

चंदा के कपोल का तिल बिरह-बूंद है। मुख का सौभाग्य है, कवि ने तिल की कल्पना नायिका के कपोल पद्म पर बैठा हुआ तिल रूपी भ्रमर से किया है।

"जानु विरह मसि बुंदका धरा", [1]

मुख क सोहाग भये तिल संगू, पद्म-पुहुप सिर बैठ भुजंगू

तिल विरहे बन घुघुचि, आधीं काली आधी रात फरी

तिल के लिये जायसी की परिकल्पना भी अनूठी है -

जेहिं तिल देख सो तिल-तिल जरा, [2]

जानु घुंघुचि ओहि तिल करमुही, विरह बान साधे सामुही

अगिन बान जानो तिल सूझा एक कटाक्ष लाख दस जूझा

सोतिल गाल मेटि नहीं गयउ, अब वह गाल काल जगभयहु

मधुमालती के तिल की उद्भावना कवि ने मौलिक रूप में की है। नायिका के कपोल पर तिल नहीं है बल्कि नेत्रों की पुतलियों की छाया-रूप है। नायिका के मजुंल श्वेत कपोल पर जो दर्पण सदृश है, जिसमें नेत्रों की छाया पड़ती है।

1- चंदायन , पृ0 74, छं. 2

2- जायसी ग्रंथावली, पृ0 41, छं. 11

तिल जो मुख पर आई, बरनि न गा कछु उपमा लाई।[3]

जाई कुवँर चखु रूप लोभाने, हिलगे बहुरि आवहि आने,

तिल न होहि रे नैन के छाया। जानेहु सोभ रूप मुख पावा।

अति निरमल मुख मुकुर सरीखा, चखु छाया तामंह मुखदीखा।

चित्रावली तिल वर्णन भी कवि ने पारम्परिक रूप में किया है।

तेहिं तिल पर देइ असलोभा मधुकर जानि पुहुप पर लोभा।

कै विधि चित्र करत कर धरे, करत उरेह बूंद खसि परे[4]

कवि कासिम की भी कल्पना वही पुरानी परम्परा से प्रेरित है। नायिका के कपोल का तिल जो देख लेता है वह तिल उसके हृदय में जाकर गड़ जाता है। यहाँ तिल की वेधन शक्ति का प्रकाशन कवि ने बड़ी कुशलता से किया है।

तेहिं कपोल पर तिल बइठा, देखत आय हिये मँह पइठा [5]

"मनुहुं कवल पर भवंर लोभाये"

कवि बिहारी नायिका के कपोल पर अंकित तिल की कल्पना ब्रह्मा द्वारा निर्मित दिठौना का किया है। जिससे इस संसार में उसकी नायिका के मोहिनी रूप को किसी की बुरी दृष्टि न लगे।

चिबुक दिठौना, विधि किऔ, दीठि लागि जनि जाय। [6]

सो तिल जग मोहन भयो। दीठि ही लेत न जाय

3- मधु मालती, पृ0 74, छं. 89

4- चित्रावली, पृ0 45, छं. 182

5- हंस जवाहर , पृ0 52

6- हिन्दी काव्य में श्रृंगार परम्परा मदकवि बिहारी, पृ0 350

तिलक वर्णन :-

कवियों ने नारी सौन्दर्य के सूक्ष्माति सूक्ष्म अवयव एवं सौन्दर्य चिन्हों का वर्णन किया है ये कवि मुसलमान होते हुए भी तिलक वर्णन की बड़ी सुन्दर व्यंजना करते हैं।

पद्मावती के मस्तक पर तिलक ध्रुव समान है वह ऐसा है मानो चाँद के पाट पर ध्रुव आसीन हो।

तेहिं ललाट पर तिलक बईठा, दुइज पाट जानहु ध्रुव दीठा[1]
कनक पाट बैठो जनु राजा, सबै सिंगार अत्र लेई साजा।

मझंन की नायिका मृग-मद का तिलक धारण करती है।

"मृगमद तिलक ताही पर धरा"[2]
जानहुँ चाद राहू बस परा।

उसमान कुंदन के तिलक की परिकल्पना करते हैं। इन्होंने नायिकाओं को अलौकिक रूप में व्यंजित किया है, अतः इनका तिलक भी अनुपम है। साधारण सिन्दुर या टिकुली बिन्दी नहीं है।

कुदंन तिलक सोभ कस पावा, मनहु दुइज महं जीव मिलावा[3]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 38, छन्द 3,

2- मझन मधुमालती, पृ0 67, छ० 82,

3- उसमान, चित्रावली, पृ0 44, छ० 178

रीति कालीन कवि बिहारी अपनी नायिका के बिन्दी वर्णन को अंक एवं पूनम के नित्य बढ़े हुए चन्द्रमा से किया है क्योंकि कवि की नारी लौकिक नारी है।

कहत सबै वेदी दिये आकं दसगुनो होत[1]
तिय ललाट वेदीं दिये दिन दिन बढ़त उदोत।

बिहारी की एक और कल्पना है-

भाल लाल बेंदी ललनु, आखत रहे बिराजि,[2]
इन्द्र कला कुंज में बसी, मनहु राहु भयभाजि।

जवाहर का तिलक कवि ने दुज के चांद को मस्तक रूपी पाट पर बैठा हुआ, व्यंग्ति किया है।

टीका कनक जो दीन्ह लिलारा।[3]
दूज पाट जनौ धौ बारा।

1- हिन्दी काव्य में श्रृंगार परम्परा और महाकवि बिहारी, पृ0 310

2- हिन्दी महाकाव्य में श्रृंगार परम्परा और महाकवि बिहारी, पृ0 310

3- हंस जवाहर , पृष्ठ 90

आंगिक चेष्टाओं का वर्णन :-

गति -

सूफी कवि नायिकाओं की गति का सुन्दर चित्रण किये हैं, उसके लिए कवि, हंस, गयंद की उपमाये प्रयुक्त किया है। शरीर के लिए, बाँस पोर का उपमान किया है। वर्ण के लिए चिनियाँ की कली का रंग, शरीर गंध के लिए पुष्प गंध, वसन्त ऋतु का सुगंध नायिका के शरीर गंध से ही सर्वत्र प्रसारित है। उसके वास से कुसुम केतकी . के भ्रमर भी उस मादक सुगंध पर लुब्ध हो गये हैं।

अंगड़ाई का चित्रण भी ये कवि सुन्दर किये हैं। नायिका का नींद से बोझिल जंभाती हुई हाँथ उठाकर अंग मोड़ने का विलास-प्रकट चित्रण कवि करनेमेंनहीं चूकता है।

कवि दाउद नायिका के छरहरे पन के लिए बाँस का उपमान प्रयुक्त किया है।

शरीर- "बाँस पोर हुत जनु काढ़ी, आछरि जइस देखि जइस भई ठाढ़ी"[1]

सकलेहु गात लाँब न छोटी, पातर तन अधिक न मोटी[2]

सेत चार किसन चारी, खीन चार और चार भैं भारी,

1- चंदायन, पृ0 80, छं. 82

2- मृगावती, पृ0 152, छ. 75,

वर्ण- वरन कहउ औ सुनहु गुनाई, कुदंन के जनु देह झरकाईं
कोख बरन चिनियाँ कें कली, अछर आउ इन्दरासन चली
काँचे कवंल लेकर-रस पीया, अस बरन विधि कंद्द दीया,

गति- "चाल गयंद चलै मदमाती"[1]

चंदा की गति हंस के समान है कवि ने गति वर्णन मनोयोग से किया है। उसके चलने में लचक, मन्थर गति से पायल बजाती हुई ठमक-ठमक कर रूकती है पुनः गतिशील हो जाती है।

हंस गवनि ठम-ठम कति आवति[2]
जमकि-जमकि पग्रु धरती धरा, छनकि-छनकि जनु पंगति भरा,
मेल्ह मेल्हाति सो चादां आवै, जानउ गयबरू पैग उचावई।

अंगड़ाई :

कवियों की दृष्टि नायिकाओं के प्रत्येक हाव भाव पर रमी है मधुमालती चित्रावली इत्यादि नायिकाओं की अंगड़ाई का कवियों ने सुन्दर व्यंजना की है।

1- हंस जवाहर, पृ0 56

2- चंदायन पृ0 79, छ॰ 81

मधुमालती अपनी दोनों भुजाएं उपर उठा कर समस्त अंग मोड़ कर जमोंई लेती है। नेत्र सजग हो जाते हैं जैसे पारधि संधान करने के लिए सजग हो जाता है। कामदेव का धनुष टंकार करने लगता है।

दुवौ भुजा सिर उपर आनी, अंगमोरि बनिता जंभुआनी,
सजग हुए विवि लोचन कैसे, उठे घात सर पारधि जैसे,
सहज मोंहि जो मौंह सकोरा, मदन धनुख जनुहिह टकारा[1]

चित्रावली भी नेत्रों को फैलाकर दोनों भुजायें पसारते हुए अंकों को मोड़ते हैं उसकी अलकाबली बिखरी हुई मुख पर फैली है, भौहें कमान जैसी चढ़ी हुई, ऐसा लगता है मानों कामदेव ने प्राण लेने के लिए जाल रोप दिया हो।

नैन उघारि नारि जंभुआनी, दोउ भुज पसारि अंगिरानी,
छुटहि अलका वलि बदन, भौहे चढ़ी कमान,
जाल रोदि कुसुमेखु जनु मारन चाहति प्राण, [2]

1- मधुमालती , पृ0 83=84, छ॰ 99

2- चित्रावली, पृ0 28, छ॰ 112

जल क्रीड़ा वर्णन :

प्रायः सभी कवियों ने अपने काव्यों में "मानसरोवर में जल क्रीड़ा" की रूढ़ि का प्रयोग किया है। साधना-क्षेत्र में त्रिकूट के उपर के विस्तृत प्रदेश को मान सरोवर कहते हैं। इसी में सहस्त्र दल कमल खिलता है। जायसी के द्वारा वर्णित मानसरोवर इसी का प्रतीक है। यह मानसरोवर गम्भीर है, समुद्र भी इसकी समता नहीं कर सकता उस मानसरोवर में सहस्त्र दल वाला कमल खिला है, उस सरोवर में मोती भरे हुए हैं।[1]

फूला कवंल रहा होई राता, सहस-सहस पखुरिन कर राता।

मृगावती सरोवर में मृगी रूप में आती है और अन्तर्ध्यान हो जाती है। पुनः एकादशी के दिन सखियों के साथ आती है, वह वस्त्र एवं आभूषण निकाल कर जल में प्रवेश करती है। उसका सौन्दर्य अलौकिक है वह चन्द्रमा के समान नक्षत्र-सखियों के साथ खेल रही है। वे उल्लसित है कुमुदिनियों को तोड़नेकी क्रीड़ा में मग्न है।

कोड़ करहीं वे सबद सोहाई, सरवर तीर निमिख महं आई,[2]
अभरन चीर उतारी पैठी सबै अह्राइ,
ससि रे नखत लै तारे, सरवर खेलै आइ,
कोड़ करहि कुमुदनि सब तोरही, बिहंसहि हंसहि कवंल घटतोरइ"

1- हिन्दी सूफी काव्य में प्रतीक योजना पृ० 116

2- मृगावती, पृ० 155, छ• 7

पद्मावत् में पूर्णिमा - तिथि के दिन पद्मावती सखियों के साथ स्नान करने आती है कवि ने नायिका के कौमार्यावस्था के स्वाभाविक उल्लास एवं मायके की स्वच्छन्दता का स्वाभाविक वर्णन किया है। सरोवरस्थ कुमारियों के केशों को, लहराते हुए विषयुक्त काले नाग से उपमित किया गया है।

धरी तीर सब कंचुकि सारी, सरवर महं बैठी सब नारी,[1]
पाइ नीर जानहु सब वेली, हुलसहि करहिं काम कै केली
करिल केस विसहर विषभरे लहरे लेइ कवंल मुख धरे
नवल बसंत सवांरी करी, भइ प्रगट जानहुं रस भरी
सरवरनहिं समाई संसारा, चांद नहाइ पौढि लेइ तारा,

कवि उसमान की नायिका का जल क्रीड़ा अनुपम है। चित्रावली कमल-कलिका सदृश है सरोवर का कवि मानवीकरण करते हुए कल्पना करता है कि, नायिका के सौन्दर्य को देखकर मानसरोवर के प्राण निकल गये हों। केशों के लिए, कल्पना करता है कि चित्रावली के अंग के चन्दन-गन्ध को लेने के लिए नागिन रूपी केश उसके शरीर से चिपके हुए हैं। जल से भीगें केशों की उपमा कवि नागिन से किया है।

चित्रावली जनु पंकज कली, सरवर जीउ काढि लै चली।[2]
पहिरि जल चिकुर निचोवा, मानहुँ घन मुक्ता हल कोआ,

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 88, छ. 64, राजनाथ शर्मा

2- चित्रावली, पृ0 30 छं. 120

तिरधरी सब चीर उतारी, धाई धंसी सब नीर मंझारी
कनक लता फैली सब बारी, पुरइन तोर जानु जलडारी,
चित्रावली तन मलया धानी, अलकावली नागिन लपटानी,

कासिम की नायिका जवाहर भी सखियों के साथ वस्त्र उतार कर जल में प्रवेश करती है।

सब पहिराव जो धरै उतारी, सागर माँझ पड़े सब बारी[1]
पैठे धाय- धाय सब नीरा, पंखी भ्रम बैठे सब तीरा,
खेले लाग चांद लै तारा, देख स्वर्ग लाग पुनि तारा,
सब अबला औ बारी मोरी, खेले खेल जो सांवरी गोरी,
कौतुक खेल करे जल माँही, काली लट उपर पैराहीं,

कवि श्रेष्ठ विद्यापति भी अपनी नायिका के स्नान का सुन्दर वर्णन किये हैं।

कामिनी करत सनाने, देखि हिरदय हनत पंच बाने,[2]
चिकुंर गये जलधारा, जानिमुख ससि डर रोअए अंधारा,
'कुच जुग चारू, चकेवा'

नायिका का स्नान इतना सौन्दर्य पूर्ण है कि हृदय में कामदेव के पाँचो बाण बिंध जाते हैं।

1- हंस जवाहर पृ0 34,

2- विद्यापति पदावली, डा0 शुभाकार कपूर, पृ0 22,

जल क्रीड़ा वर्णन दो रूपों में हुआ है। प्रथम रूप में वह नायिका के भीगें सौन्दर्य की व्यंजना करता है। जिसे देखकर पक्षी भी लज्जा से भर उठते हैं। पद्मावत में पद्मावती की जल क्रीड़ा से हंस लाज से भर कर किनारे बैठ जाता है। जो लौकिक वर्णन के अन्तर्गत है।

लौकिक रूप-

लागीं केलि करै मझं नीरा, हंस जलाइ बैठ होइ तीरा,[1]

जवाहर के स्नान केलि को देखकर सारे पक्षी -

पैठे धाय-धाय सब नीरा, पंखी लज बैठे सब तीरा,[2]

जलक्रीड़ा के माध्यम से कवि का दूसरा उद्देश्य है, मायके की स्वच्छता एवं आसारता का संकेत देना।

नैहर की आसारता -

एरानी मन देखु विचारी एहि नैहर रहना दिन चारी,[3]

भूली लेहू नैहर जब जाई, फिर नहिं झूलन देइहिं साई[4]

पुनि सासुर लेई राखिब तहाँ नैहर चाह न पाउब उहाँ,

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 90, छ॰ 65, राजनाथ शर्मा, मानसरोदक खण्ड

2- हंस जवाहर पृ0 34

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 84, छ॰ 61, रा0ना0 शर्मा

4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 85, छ॰ 62, रा0ना0 शर्मा

ब्रम्ह स्वरूप :

ससि मुख अंग मलयगिरि बासा, नागन्ह झापि लीन्ह चहुँपासा,[1]

ओनई घटा परी जग छाहाँ, ससि के सरन लीन्ह जनराहाँ,

छपि गै दिनहिं भानु कै दसा, लेइ निसि नखत चाँद दरगसा;

सखर रूप विमोहा, हिये हिलोरहि लेइ,

पाँव छुवै गरू पावौ, ऐहिमिस लहरे देई

मोहां जब शिवलोक, लखिं, देखिं कमलकर केलि,[2]

लखि नग मोती की अमलाई, शुक छपाना, आप लजाई।[3]

इस प्रकार जल क्रीड़ा के माध्यम से कवि सौन्दर्य के दैवि स्वरूप का निरूपण नैहर के असारता का विवेचन, आत्मा परमात्मा की खोज, मिलन आदि की व्यंजना, तथा साधके के स्वच्छता का वर्णन किया है।

अतिशयोक्ति पूर्ण चित्रणं -

सूफी कवि किसी भी स्वरूप का वर्णन करते समय इतना भाव-विभोर हो जाते हैं कि वे वास्तविक वर्णन करते-करते अतिशयोक्ति पूर्ण वर्णन करने लगते हैं, महल की सजावट, भोजन सामग्री की गिन्नती, आदि में इनकी अतिशयोक्ति स्पष्ट परिलक्षित होती है। किन्तु ये

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 87, छ. 63

2- हंस जवाहर पृ0 34,

3- इन्दावती नूर मुहम्मद, पृ० 75

विशेष कर इनकी अतिशयोक्ति नायिका के सौन्दर्य वर्णन में परिलक्षित होती है।

जैसे कटि का बर्रे से क्षीण होना, ग्रीवा से पान का दिखाई पड़ना, पान और पुष्प से भी पतला पेट, फूल और पान के आहार पर नायिका रहना आदि।

कटि चंदा- लंक विसेखइ घना, अउर लंक पातर कोगुना, [1]
'फूंकत टूटि होइ दुइ आधा'।

कटि पद्मावती- पद्मावती की कटि कमल नाल को दो टुकड़े करने के बाद तार जैसी क्षीण है।

मनेंहु नाल खण्ड दुहु भये। दुहु बीच तार रह गये।[2]

चित्रावली की कटि को कोइ इस लिए नहीं देखता की उसके दृष्टि के भार से टूटने का भय है।

अति सुकुवार लंक पुनि छीनी, दृष्टि परै बारहु तब खीनी[3]
देखत सकुचै देखन हारा, टूटि न परै दृष्टि के भारा,

1- चंदायन पृ0 77, छ• 79

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 163, छ• 118

3- चित्रावली, पृष्ठ 50

मधुमालती की कटि यदि पेट की त्रिवली का बंधन दृढ़ न होता तो वह कभी की टूट गई होती।

टूटि परत कर करू कामिनी गरूव नितम्ब के भार[1]
जौ न होत दृढ़-बंधन त्रिबली ताही तासु अधार।

इसी प्रकार नायिका की कटि हाथ से छूने से टूट जाती है।

झीनी लंक देखि निउ डरइ, मार नितम्ब टूटि जनुपरई[2]
हुइ न जात कट हाँथ पसारी, मत छुवतहिं टूटि हतियारी।

चंदा का पेट- पान और पुष्प से भी पतला है।

"देखत पान फूल पतराई"[3]

भौहों के लिए-

"जादिन ले वे चढ़ी कमाना सम संसार गये निसाना"[4]

चंदा की ग्रीवा इतनी पारदर्शी है कि जो पथ्य पीती है वह निरन्तर दिखाई पड़ता है।

फूँकत नारी कचोरा लावा, पियत निरन्तर मँह दिखरावा।[5]

1- मधुमालती पृ0 80, छ. 96
2- मधुमालती पृ0 79, छं0 95
3- चंदायन पृ0 76, छ. 78
4- हंस जवाहर पृ0 49
5- चंदायन पृ0 74, छं 75

पद्मावती की ग्रीवा-

छूट जो पीक लीक सब देखा,[1]

तिल वर्णन में दाउद की अतिशयोक्ति -

"तिल विरहे बन घुघुचि, आधी काली आधी रात।[2]

पद्मावती के नेत्र -

नैन बाँक सरि पूजि न कोउ, मानसरोदक उलथहि दोउ[3]

राते कवंल करहि अलि भवा, घुमाहिं भांति चहहिं अपसवा,

इस प्रकार कवि का सौन्दर्य वर्णन कहीं कहीं अत्यन्त अतिशयोक्ति पूर्ण हो गया है। जिससे वास्तविक एवं कल्पना चित्र के आधार को ठेस लगती है। कवि के अतिशयोक्ति का स्वरूप, पाठक के हृदयस्थ भाव उर्मियों के बहने में अवरोध पैदा करती है।

कवि का अतिशयोक्ति पूर्ण चित्रण सोचने पर विवश कर देता है कि क्या ऐसी बात है नायिका के अंग इस प्रकार के हैं।

जब प्रिय के प्रिया का रूप प्रकाश जगत में प्रकट हुआ, तभी से उस प्रकाश को साधक प्रेमी के नेत्र देखने लगे, और उस परम ज्योति पर मुग्ध हो जाता है। साधक उस प्रकाश पुंज के विरह की अग्नि में जलने लगता है।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 42, छं. 13

2- चंदायन छं. 64

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 43, छं. 13

अलौकिकता एवं आध्यात्मिक संकेत :

ब्रहम स्वरूप नायिका जब इस धरती पर अवतरित होती है यह धरती आलोक और सौन्दर्य से जगमगा उठती है। संसार ही नहीं वरन् स्वर्ग भी उसके अलौकि प्रकाश से निम्मजित हो गया।

ब्रहम रूपी नायिका का सौन्दर्य का आभास देने के लिए कवि के[1] पास शब्द नहीं है। सुर-नर मुनि जिसका रात दिन ध्यान करते हैं उसकी वंदना करते हैं। फिर भी उस अपूर्व सौन्दर्य रूपराशि की झांकी उन्हेंनहीं मिल पाती। नायिका की सुषमा विश्व-नयन में ज्योति बनकर झलक रही है- शक्ति और शिव में यही रूप विधमान है।

एही रूप सकति और सीउ, एही रूप त्रिभुवन करगउ[2]
एही रूप सब नैनन्ह जो''ती, एही रूप सब सागर मोती।

सारे ब्रहमाण्ड में जितने चित्र बिम्ब हैं, सभी उसी से उद्घाटित हैं यह विविध रूपी सौन्दर्य विश्व में वही सौन्दर्य-राशि ईश्वर व्यापक है। सब उसी नारी ब्रम्ह की परछाई है।

"और जो चित्र अहहिं तेहिं माहीं सो चित्रावली की परछाहीं"[3]

नायिका के रूप की ज्योति से अखिल ब्रहमाण्ड ज्योतित सागर की श्वेत तरंगे, चमकती हुई उज्जवल मोती, भास्कर की प्रखर किरणे, चन्द्र की शीतल कान्ति, सब कुछ उसी नूर से ज्योतित है।

इहैरूप सब नैन्हजोती, इहैरूप सब सायर मोती[4]
इहैरूप ससिहर और सूरा, इहैरूप जगपूर अपूरा
इहैरूप जल थल औ, महियर भाउ अनेक देखाउ
आपू अपान जो देखैं सो कहु देखैं पाउ,

1- जयनाथ नलिन, भक्ति काव्य में माधुर्य भाव पृ0 114
2- मधुमालती पृ0 100 छ· 120
3- चित्रावली पृ0 132,
4- मधुमालती पृ0 38

उस विश्व-चर्चित रूप-राशि को पाने की लालसा में व्याकुल है। वह अपने आराधिका को साकार रूप में देखना चाहता है, उसे चूमना चाहता है वह उस रूप-सुषमा पुंज को अपने में समेटना चाहता है। वह समष्टि को व्यष्टि रूप में अपनाना चाहता है।

जब परगटभा रूप तुम्हारा, तब के हम चखु देखनि हारा[1]
जेहिं दिन आदि रूप तोर सोहा, तेहिं दिन हुते तोहिं हो मोहा,
जेउं जेउं उदित रूप जग तोरा, तेउं तेउं गिउ बिरहू बस सभोरा।
रूप तुम्हार मोर सुखबारा, देश-देश में भयउ पवाँरा
दिन दिन रूप अधिक गई तोहीं, अब कहि बिरह सेउं मुकुतिमोहीं
जेई तुव बदन उघारि के देख रूप निझाई
तेहि धनि-धनि कहि धाइके, हम चखु चुम्बे आई।

महारूप-राशि के जन्म से घर-द्वार तो आलोकित है, किन्तु उसके अलौकिक महा-प्रकाश का पुंज तीनों लोक में विकीर्ण हो रहा है। सृष्टि नियन्ता के पास भी उससे अधिक प्रकाश पुंज का अभाव है।

महारूप से दयी सवांरी, तेहिं घर जन्म जवाहिर बारी[2]
जब ले जनमी मूरत गोरी, घर बाहर में ज्योति अंजोरी
बरनि न सकै कोउ वह जोति, तीन लोक नहिं दूसर ओती।

पद्मावती के जन्म लेते ही, सारे अंधकार पलायन कर गये सूर्य सा प्रकाश सर्वत्र फैल गया, रात्रि दिवस में परिवर्तित हो गई। स्वर्गलोक भी उसके

1- मधुमालती पृ0 273, छ॰ 119

2- हंस जवाहर पृ0 5

शरीर आभा से आलोकित हो उठा है।

भा निसि महं दिनकर परगासू, सब उजियार भयेहु कविलासू[1]

पद्मावती का अलौकिक स्वरूप मान सरोदक खण्ड अपूर्व है –
"पारस रूप" ही सर्वत्र प्रमुख है उस पारस रूप को जो जिस रूप में देखता
उसी रूप में पवित्र हो जाता है। वह "पारस रूप" की शशि शुषमा-मंडित
स्वर्ण प्रकाश से मानसर मानव रूप में हो जाता है, उस दिव्य-देविका, के
चरण स्पर्श करना चाहता है। वह जन्म जन्मान्तर के लिये निर्मल हो गया।

जो भी जिस स्वरूप की अभिलाषा किया वह उसी रूप में हो गया,
चन्द्रमुख दर्पण सदृश प्रतिबिम्बित हो रहा है उस प्रकाश से प्रकृति शुषमा
सम्पन्न हो गई कुमुदनियाँ चन्द्र ज्योति से मुस्कुरा कर खिल उठी। उसके
नेत्रों की ज्योति इतनी उज्जवल और दैदीप्यमान है कि देखने मात्र से
सरोवरों में कमलदल खिल उठते हैं। उसके दसन के श्वेत हीरे जो नग जटित हैं
हंसने से सर्वत्र हंसी की सृष्टि हो जाती है सभी मन्त्र मुग्ध उस रूप शशि के
अलौकिक प्रकाश का दर्शन-लाभ ले रहे हैं।

कहा मानसर चाह जो पाई, पारस रूप यहाँ लगि आई[2]
भा निरमल तिन्ह पायन परसे, पावा रूप, रूप के दरसे
बिगसा कुमुद देखि ससिरेखा, भै तहँ ओप जहां जो देखा
नयन जो देखा कवंल निरमल नीर सरीर
हंसत जो देखा हंस भा रतन ज्योति नगहीर

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 72 छ• 5।
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 23 छ• 8

सूफी कवि नारी की कल्पना अपूर्व नारी के रूप में करता है जो वर्णनातीत है। चंद्रिका सदृश वह अपूर्व नारी है उसके आस-पास सांसारिक व्यक्ति तारिका के समान मंडरा रहे हैं।

उन्ह महँ एक अपूरब अहीं, कहा बरन को जाहीं नकही
जानु आकाश चांद परगासा, वे सब नखंत चहुँ दिसि रासा[1]

उस प्रिया के भौंह की कमान जब से चढ़ी है सारा विश्व उसका निशाना बन गया है संसार में जितने पुरूष मृत्यु को प्राप्त हुए सभी उसी के संधानित बाण थे।

जादिन लेवे चढ़ी कमाना, सब संसार भय निसाना[2]
जितने पुरूष दई सब मारे, ते सब यही धनुखं के मारे।

प्रेमाख्यान काव्यों के कवि नारी में ब्रहमत्व की प्रतिष्ठा करके उसे लौकिकता से उठाकर आध्यात्मिक स्वरूप प्रदान कर दिये हैं। जिसमें वह आंशिक रूप से सफल भी हुए हैं, किन्तु वे अपनी विलास-साधना को विराम नहीं देते।

इस प्रकार सूफी कवि नारी को सबसे उपयुक्त प्रेरक जानकर ही[3] अपने कुशल भाव व्यंजना द्वारा उस परम सत्ता के महान शक्ति, पूर्ण ऐश्वर्य-शाली सिंहासन पर आरूढ़ कर देते हैं। उस दिव्य स्वरूप को सांसारिक समता में लाकर प्रेम भी करना चाहते थे। इन सूफियों ने परम्परागत

1- जायसी ग्रन्थावली मानसरोदक खण्ड, पृ0 24, छ. 4
2- हंस जवाहर पृ0 49
3- डा0 सरला शुक्ल, जायसी के परवर्ती सूफी कवि और काव्य, पृ0 42

परम सत्ता के स्वरूप की चर्चा की है। किन्तु इसके बाद भी वे अपने सम्पूर्ण काव्य में उस एक (नायिका) को इस जगत में प्रसारित एवं प्रतिबिम्बित ही पाते रहे हैं। यही उनके इश्क मिज़ाज़ी का इश्क हकीकी आधार है।

रूप सौन्दर्य वर्णन के माध्यम से इन कवियों ने परमात्मा के[1] जमाल जलाल का उद्घाटन किया है। नायिका के केश, राशि, मांग, मुख-मण्डल, भौंह, आदि के रूप में इंगित किया है।

नायिकाओं के अलौकिकसौन्दर्य की व्यंजना कविगणों बड़े कौशल एवं मनोयोग से किये है। सूफी प्रेमाख्यानक के सफलता का श्रेय स्त्री के अलौकिक सौन्दर्य पर ही स्थित है। नहीं तो प्रेम काव्य लौकिकता, स्थूलता, ऐंद्रियता से भरा पड़ा है।

मृगावती, मधुमालती, पद्मावती, चित्रावली, चंदा, ये सभी[2] उसी भाव का प्रतिनिधित्व करती हैं जिससे संसार आलोड़ित है। ये ईश्वरीय ज्योति का नूर है उसे प्रेम-पात्रा नारी की प्रधानता दी गई है भरसक उससे परम तत्व का प्रतिनिधित्व करने की चेष्टा की गई है, जो इनके ईश्वरीय प्रेम का लक्ष्य है। ये उसी पूर्णता का कार्य करती है, जिसके अभाव में सारा मानव जीवन शून्य है। अतः सूफी कवि संभोग श्रृंगार परक वर्णन करने के बाद भी अपनी नायिका में बहमत्व की प्रतिष्ठा करके अपने काव्य की पार्थिवता को अपार्थिव बना देते हैं।

1- हिन्दी सूफी काव्य का समग्र अनुशीलन, शिवसहाय पाठक, पृ0 250

2- परसुराम द्विवेदी, सूफी प्रेमाख्यक साहित्य, पृ0 296,

तृतीय "अध्याय"

(अ) राजनीतिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश

(आ) विभिन्न काल में नारी

(इ) सूफी काव्य में नारी चित्रण

(ई) पारिवारिक चित्रण

(उ) संस्कार एवं प्रथाएँ

राजनीतिक परिवेश :

सातवीं शताब्दी में इस्लाम धर्म एवं शासन का आगमन भारतवर्ष में हुआ, यहाँ की राजनीतिक स्थिति अत्यन्त डावाडोल थी गुप्त साम्राज्य के पतन के पश्चात् उत्तरी भारत पर एक क्षत्र शासन स्थापित न हो सका, सकलोत्तर पथ-नाथ हर्ष ने भारतीय पंच-प्रांत को अधीनस्थ अवश्य कर लिया किन्तु उसकी 647 ई0 में मृत्यु के पश्चात् इन राज्यों को कोई फिर एक सूत्र में न बांध सका।

"हर्ष के साम्राज्य पतन के पश्चात् उत्तरी भारत में कई छोटे राज्यों की स्थापना हुई। एक क्षत्र शासन तथा केन्द्रीय संघबद्धता विनष्ट हो गई। और कोई भी राज शक्ति इन्हें एक सूत्र में नहीं बांध सकी, स्वतंत्र राज्य जो बलवती शक्ति के सामने हतश्री हो जाते थे। वह अवसर पाते ही पुनः स्वतन्त्र होने की चेष्टा करते। प्रत्येक नवीन राज्य के सम्मुख छोटे स्वतंत्र नृपतियों को अधीनस्थ करना अनिवार्य समस्या होती थी। जितना ही सबल दुर्मनीय विरोधी होता उतनी समस्या कठिन हो जाती। किन्तु दमन का प्रयास राजा को ही करना पड़ता था। उस समय एक छत्र शासन का स्वरूप केन्द्रीय व्यवस्था न होकर संघ-बद्ध व्यवस्था थी, जिसके पर्यावसान में अधिक समय नहीं लगता था। प्रत्येक महत्वाकांक्षी एवं शक्तिशाली संघ अपनी स्वतंत्र प्रभुता स्थापित करने की चेष्ट करता था।"[1]

सम्पूर्ण भारत में मुसलमानों का शक्ति प्रसार एक समय में नहीं हुआ सातवीं शताब्दी में सिन्धु पर हुए आक्रमण से लेकर सन् 1193 तक, 500

1- डॉ0 सरला शुक्ला, जायसी के परवर्ती कवि और काव्य पृ0 13-14

वर्षों का अवसान इस्लामी शासन की स्थापना के प्रयास का काल है।

महमूद के आक्रमणों का कोई स्थायी प्रभाव भारत पर नही पड़ा वह अपने भीषण अत्याचारों से केवल प्रजा को दुख ही पहुंचाता रहा एक शताब्दी पश्चात् पुनः मुहम्मद गोरी का आक्रमण हुआ, गुजरात पेशावर उच्च आदि पर विजयश्री प्राप्त होने पर उसकी महत्वाकांक्षा बढ़ गई फलतः उसने दोआबे पर आक्रमण किया। इस प्रकार मुहम्मद गोरी के गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबकसे भारतीय इतिहास का मुस्लिम काल प्रारम्भ होता है।

महमूद के निरन्तर आक्रमण भारत पर अपना सर्वाधिकार नकरसने सुबुक्तगीन की मृत्यु के पश्चात् उसे भारत पर सन् 1001 से लेकर सन् 1026 तक निरन्तर सत्रह आक्रमण किये, किन्तु राज्य स्थापना न कर सका। उसका उद्देश्य पैशाचिक प्रवृति से ओत-प्रोत का मूर्तियों का खण्डन मंदिरों को ध्वस्त करना यही उसके जेहाद की सार्थकता थी। किन्तु उसके विध्वंस-कारी प्रभाव का अंत उसकी मृत्यु के साथ हो गया। सन् 1173 तक इस्लामी सत्ता पूर्णतः समाप्त हो गई इतने खतरनाक आक्रमणकारियों के साथ सूफी फकीर "दर्वेश" भारत आये। कुछ सूफी कवि, तैमूर के आक्रमण के साथ भारत आये। सिन्ध के इन "सूफी कवियों की उदारता सराहनीय है। इनका भारत में आने का उद्देश्य धर्म प्रचार था।

इल्तुतमिश के अधिकारियों के निर्बलता के कारण राजनीतिक[1]

1- डा0 सरला शुक्ला पृ0 145

परिस्थितियाँ विश्रृंखल होती गई शासन के मध्यबलवन ने साम्राज्य की रक्षा का प्रयत्न किया, मुस्लिम धर्म ग्रहण कर लेने पर भी वहाँ के मुसलमान उनके अधीन रहना अपना अपमान समझते थे। ऐसी विरोधी परिस्थितियों में सदैव षड्यन्त्र की योजनाएं बनती रहती। बलबन का सारा समय विरोधो के दमन में ही समाप्त हुआ। अफगान सरदारों व पराजित हिन्दुओं के साथ मंगोलो के दमन का प्रयास भी उसको करना पड़ता था। हिन्दुओं का राज्य व्यवस्था में कोई हांथ नहीं था और न तो बलबन हिन्दुओं को कोई उत्तरदायित्व पूर्ण पद ही देता था।

"मुस्लिम साम्राज्य दृढ़ होकर भारत भूमि पर कुछ काल ही रह सका, महमूद गजनवी केवल आक्रमण कारी के रूप में भारत आया था। गोरी ने साम्राज्य स्थापना का प्रयास किया गुलाम खिलजी और तुगलक वंश क्षण भंगुर थे।"

भारतीय राजा मुगलों की विलासिता का अनुकरण करते थे हिन्दुओं को जजिया कर देने के पश्चात् भी स्वतन्त्रता न की। मंदिरों का निर्माण बन्द करवा दिया गया था। पुराने मंदिरों का जीर्णोद्धार नही होने दिया जाता था।

राजनीतिक क्षेत्र में देशी राजा भी मुसलमानों की देखा-देखी क्रूर हो गये थे। प्रजा की उन्नति को ओर उनका कोई ध्यान नही था। तुलसीदास जी के शब्दों में परम स्वतंत्र नसिरपर कोउ थे।

1- डा0 सरला शुक्ला पृ0 145

प्रजा का कोई याव राजा के निर्वाचन या स्थापन में न होता था। प्रजा का कोई अंकुश राजा के ऊपर नही था। ये सुल्तान अत्यन्त विलासी थे। एक सुल्तान के हरम में कई-कई रानियां होती थी, इन लोगों के वैभव विलास पर प्रजा की गाढ़ी-कमाई का धन खर्च होता था।

"सुल्तानों के महल में मनोरंजन सामग्री विलास के साधन, सुन्दर महल, क्रीडा-उपवन, सिंहासन, पलंग, मोरछल चवरं, लाखों के हीरा मोती महार्घ रत्नों के आभूषण महलों की सजावट सोने के पिजड़ों में बन्द शुक सारिका युगल पर पानी की तरह पैसा बहाया जाता था। इन सबके बदले प्रजा को दुख, भूख, महामारी, दुर्भिक्ष इन शासको की ओर से तो मिलता था ईश्वर भी गरीबों पर मेहरबान नही था।"[1]

कालि बारहि बार दुकाल परै बिनु अन्न दुखी सब लोग मरै।

तुलसी ने तत्कालीन स्थिति देखकर ही दोहावली में लिखा है कि राजा कर कैसे ले जिससे उसे कष्ट न हो और राजा का भी साध्य पूरा हो सके इसके लिए तुलसी ने राजा की तुलना सूर्य से की है।

बरसत हरषत लोग सब, करषत लखै नकोय [2]
तुलसी प्रजा सुभागते, राम सरिस नृपहोय।

"सूफी कवियों के शान्त रहने का कारण इस्लाम के अनुमोदन की स्वीकृति

1- डा० सरला शुक्ला जायी के परवर्ती कवि और काव्य पृ० 147
2- दोहावली, तुलसीदास,

सूफी मत का प्रवेश जब भारत में हुआ उस समय राज्य शासन से उसका विरोध समाप्त हो गया था। अब सूफी मत इस्लाम धर्म का एक अंग था। सूफी कवियों के दृष्टिकोण से राजनीति स्थिति अनुकूल थी। क्योंकि उसमें धर्म के प्रसार का अवकाश था। यही कारण है कि ये अपने ग्रंथ के शुरूआत में शाहेवक्त की प्रशंसा करते समय उसे "दीनकथूनी" कहा है। उन्हें राजा की अनीतिया धर्मान्धता से मतलब नही था। जितना उनके दीन प्रसारक रूप का।"[1]

अंग्रेजों के शासन काल का आरम्भ होने से दुख में पिसती जनता थोड़ा आराम कर सांस लेने में समर्थ हुई। अब जनता में राजाओं के सम्मेत को उनके विशाल कुनबे का भार सहन नहीं करना पड़ रहा था। किन्तु कहीं तो दमन था। राजा का छोटा रूप गर्वनर तो था हीं निम्न वर्ग को दबाते रहे उनके सुख साधन को नष्ट करते रहे। तुलसी की चौपाई "उदर भरे सोई धर्म सिखावै" इस युग की शिक्षा का सत्य स्वरूप प्रगट करती रही है। फिर भी विज्ञान की देन रेल, तार डाक, किंचित शिक्षा का प्रसार के कारण इस समय व्यवस्था थोड़ी शान्त थी। अंग्रेजों की शोषण नीति का स्वरूप ही दूसराथा। उसमें दाॅव-पेंच की चालें थी। जबकि मुगल नीति के शासन में शक्ति, सम्पन्नता, विलास, रनिवास, साज श्रृंगार, नृत्य गान पूर्ण वैभव का वृद्ध विलास।

1- डा0 सरला शुक्ला हिन्दी सूफी कवि काव्य पृ0 148-49

सामाजिक परिवेश :

सामाजिक परिवेश के अन्तर्गत तत्कालीन सामाजिक स्थिति दुरूह थी, इस समय के समाज में कट्टर पंथी उलेमाकाजी, मुल्ला अत्यन्तकट्टर एवं उग्र स्वभाव के थे। इनके विपरीत सूफी साधक अत्यन्त विनम्र एवं उदार थे। ये विलासपूर्ण जीवन से सर्वथा उदासीन थे, मुल्ला मौलवियों की भाँति सूफियों को राजाश्रय नही प्राप्त था। इनकी उदार नीति के कारण इनको दण्ड भी अधिक भोगना पड़ता था किन्तु इनके प्रशंकों की अधिकता के कारण सुल्तान इन्हे मौत के घाट उतार देता था। फर्रु-खसियर ने सिन्ध के वीर "बिन सीर" को राज्य विद्रोह के भय के कारण ही प्राण दंड दिया था। इन सूफीयों के दमन में कोई राजनीतिक कारण अवश्य छिपा रहता था।

हृदय से बेहद उदार सूफियों का प्रभाव समाज में सामान्य जनता[1] पर अधिक था। हालांकि इन सूफियों ने अपनी विचार धारा को इस्लाम के अन्तर्गत ही रखने का प्रयास किया है। मुहम्मद को पैगम्बर का रूप भी इन्हे मान्य था। ये इस्लाम की विचारधारा का पोषक होते हुए भी, सूफी भारतीय जीवन के सामान्य सिद्धान्तों, साधना प्रणालियों, एवं काव्य पद्धतियों को अपने साहित्य में स्थान दिया। तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था की विभिन्नता में इन कवियों के हृदयगत प्रेम सहिष्णुता के सहयोग से उसे संगठित कर समन्वय का अपार प्रयास है।

निर्गुण पंथियों की भाँति इन्होंने ने भी दो भिन्न धर्मों समाजों

1- डा० सरला शुक्ला, पृ० 154

के मध्य एक सामान्य मार्ग निकालने का प्रयास किया किन्तु दोनों ही पद्धतियों और माध्यम में अन्तर है सूफी अपनी धारणाओं का बलात् किसी पर आरोपण नहीं करना चाहते।

सूफी काव्य में भारतीय सामाजिक जीवन का सुन्दर एवं स्वस्थ निरूपण 1 कवियों ने किया है। इनके काव्य में मंगल की प्रतिष्ठा है। कवियों का प्रेमाकाव्य भारतीय संस्कृति सभ्यता और समाज का भव्य प्रसाद है। विस्मय तब होता है जब ये कवि आध्यात्मिक पक्ष, सौन्दर्य चित्रण आदि की अभिव्यंजना करते हुए लोक पक्ष को नही भूले थे, लोकाचार विभिन्न संस्कार, कुल मर्यादा की रक्षा , समाज गौरव, कुल गौरव के प्रतिष्ठापन पर पूरा बल दिया है।[1]

रीतिकालीन के विलासिता पूर्ण वर्णन, नारी का आंगिक चित्रण, राजाश्रय कवि मुद्रा एवं धन अशर्फियों के लोभ में श्रृंगारिक रचना करते थे तत्कालीन कवियों का मानसिक झुकाव घोर श्रृंगारिक वर्णन की ओर था किन्तु सूफी साधक राजदरबार की सभ्यता चकाचौंध धन की लिप्सा से पूर्णतया मुक्त थे इनके काव्य में समाज मंगल, लोक मंगल की प्रतिष्ठा का पूर्णत: निर्वाह है।

इन कवियों ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत सबसे दृढ़[2] कड़ी गार्हस्थ्य जीवन और भारतीय समाज की सबसे महत्वपूर्ण इकाइ भी सम्मिलित कर जहाँ व्यक्ति के अनेक सम्बन्धी को एक ही साथ सुचारू रूप से निर्वाह करने पड़ते हैं, का निरूपणं करके एक स्थायी आदर्श प्रस्तुत किया है।

1- भक्ति काव्य में माधुर्यभाव डा0 जगन्नाथ नलिन पृ0 142
2- भक्तिकाल में माधुर्यभाव डा0 जगन्नाथ नलिन पृ0 183

अतः सूफी कवि भारतीय जीवन की भावधारा सामान्य सिद्धांतों काव्य पद्धतियों को अपनी साहित्य साधना में भरपूर स्थान दिया जब की मुहम्मद साहक की पैगम्बर रूप की भावना एकेश्वर वाद, कुरान के नियम का नियन्त्रण इन्हें मान्य था और अपने साहित्य में इन्होंने यार यार की शिफ्त, शाहेवक्त, एंकोकार का महत्व था। सूफी कवि निर्गुण मतावलम्बी था किन्तु उसने अपने काव्य में कांतासम्मति भाव रखकर माधुर्य गुण की जनता की ही कथाओं को भावात्मक उपदेश से समन्वित करके सामान्य जन वर्ग तक पहुंचाया। ये किसी भी पक्ष का खंडन या कोई स्थापना नही करते थे वरन् इनके विनय में ऐसा प्रभाव था कि लोग इनकी ओर आकर्षित होते थे इनका सम्मान करते थे। ये मुसलमान सूफी भारतीय आत्मा के प्रत्येक बिंदु-बिंदु में बस गये उनका प्रेम काव्य व्यक्ति के हृदय को सरस करता रहा।

सांस्कृतिक परिवेश :

तत्कालीन सांस्कृतिक समन्वय में सूफियों का बड़ा हाथ था नाथ पंथी साधुओं एवं भक्तिकालीन निर्गुणोंपासना, के अनेक तत्वों का समावेश सूफी साधना में हुआ। नाथ पंथियों के चमत्कार का प्रभाव भी इन सूफियों पर पड़ा।

मुस्लिम समाज में हिन्दुओं का इतनी संख्या में परिवर्तित होने का कारण समाज की गोपनीय अवस्था, दूसरे इन सूफी संतों की प्रेम साधना, इसमें प्रमुख कारण है। हिन्दू समाज का निम्न स्तर व्यक्ति भी इस्लाम ग्रहण करने के पश्चात् सभ्य समाज का सदस्य बन जाता था।

सूफियों का वैचारिक धरातल अत्यन्त सात्विक है वे प्रेमिका का पर्यावसान सदैव पत्नी रूप में करते हैं, सामाजिक मर्यादा का ये उल्लंघन कहीं नही करते।

सूफी कवि की दृष्टि सदैव इस बात पर रहती है कि वासना का परिमार्जन किया जाय वह उसमें विश्वास नहीं करता कि संसार से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया जाय, और दाम्पत्य जीवन से मुख मोड़ कर वासना को उभरने दिया जाय, "अलगजाली बाबा फरीद" आदि सूफी संतों ने विवाहित जीवन का समर्थन किया है अलगजाली ने कहा है "विवाह लाभप्रद होता है। केवल सन्तान उत्पन्न करने के लिए नहीं बल्कि सन्तोष और ताजगी के लिए विवाहित जीवन आवश्यक है।

सूफी कवि भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल कहीं भी वैवाहिक पवित्र बन्धन में शिथिलता नही आने दी है नारीत्व के सतीत्व एवं मर्यादा का इन्हें पूर्ण ध्यान था। विदेशी होते हुए भी इन्होंने भारतीय सती प्रथा का जो मर्मान्तक एवं जाज्वल्यमान चित्रण किया है वह अनुपम है।[1]

वह ईश्वर को मात्र प्रेम के द्वारा प्राप्त कर सकता है अलौकिक सौन्दर्य की प्रतीक नायिका के भोग विलास में ही विभाजित नही हो जाता बल्कि अपने कर्तव्य और न्याय के संसार में आता है सपत्नियों की कलह-ईर्ष्या को अपने स्नेह एवं प्रेम की धारा से धो डालता है। यह कवि लौकिकता एवं पारलौकिकता का समन्वय है। जो उसके जीवन का अंग है। वह जीवन में व्याप्त कटुता को प्रेम की धारा से धो डालता है।[2]

1- सूफी काव्य विमर्श, डा० श्याम नारायण पाण्डेय पृ० 76
2- सरला शुक्ला, हिन्दी सूफी कवि और काव्य पृ० 211

इन सूफी कवियों ने भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल कहीं भी वैवाहिक पवित्र बन्धन में शिथिलता नही आने दी है। नारी के सतीत्व एवं मर्यादा का इन्हें पूर्ण ध्यान था। विदेशी होते हुए भी इन्होंने भारतीय सतीप्रथा का जो मर्मान्तक एवं जाज्वल्यमान चित्रण किया है वह अनुपम है।[1]

उस समय के भारतीय जीवन में परिव्याप्त कटुता वैमन्य एवं घृणा में साम्य की भावना एक मात्र प्रेम के द्वारा ही हो सकती थी सूफी काव्यकार भली प्रकार समझते थे अतः उनका वर्णित काव्य केवल भोग विलास या क्लेश कटुता से दूर होकर भोग विलास में संलग्न होना ही नहीं अपितु उस परम सत्ता ईश्वर की परम ज्योति में लीन होना है। जिसके अस्तित्व का बोध वह जीवन के प्रत्येक अणु परमाणुओं में करता है।

वह उस परमात्मा को केवल प्रेम के द्वारा ही प्राप्त कर सकता है परम सौन्दर्य की प्रतीक नायिका को प्राप्त कर भोग विलास में ही निर्लिप्त नहीं हो जाता बल्कि अपने कर्तव्य एवं न्याय के संसार में आता है और सपत्नियों की कलह ईर्ष्या को अपने स्नेहिल एवं प्रेम की स्निग्ध धारा से धो डालता है। यह कवि का लोक एवं परलोक का समन्वय है। जो उसके जीवन का अंग है। वह जीवन की सारी कटुता परम प्रेम की पावन धारा से धो डालता है।[2]

पारिवारिक चित्रण में भी वह अन्यान्य सम्बन्धों की सुन्दर व्यंजना करता है सूफी काव्य में भारतीय संस्कृति का सुन्दर परिपाक किया है।

1- सरला शुक्ला हिन्दी सूफी काव्य कवि पृ0 211
2- डा0 सरला शुक्ला हिन्दी सूफी कवि और काव्य 212

विभिन्न काल में नारी

"नारी को संसार का सबसे बहुमूल्य रत्न माना गया है,और काव्य को ब्रह्मानंद सहोदर। जब काव्य और नारी मिल जाये तो मणि कांचन संयोग ही कहा जायेगा।"[1]

"संस्कृत के आचार्य शार्ंगधर ने लिखा है नारियां भूषणों को भूषित करती है भूषण इन्हें भूषित नहीं करते"[2]

"जीवन की प्रथम धड़कन नारी की कोख से जागी है, जो उसके स्नेहिल संरक्षण में पोषण पाती है रेंगी है, घुटनों के बल सरकी है, जीवन उसकी स्नेहमयी छाया में तुतलाया है, हर्ष विमोहित, अश्रु विगलित, और मोद मुखरित हुआ है। जीवन आकर्षण एवं निकर्षण के क्षेत्रों में नारी द्वारा अनुप्राणित एवं प्रमाणित होता रहा है। आसक्ति में प्रवृत्ति विरक्ति में निवृत्ति का मार्ग अपनाते हुए भी नारी को अनिवार्यता के रूप में अपने समक्ष रखा है। प्रथम जहां उसके उज्जवल स्वरूप को परखता रहा है वहीं द्वितीय ने उसके श्यामल पक्ष का प्रतिपादन करते हुए भी उसकी प्रभावपूर्ण सामाजिक स्थिति की अवज्ञा नहीं की है।"[3]

मानव जीवन की तरह काव्य क्षेत्र में भी नारी की अनिवार्यता अक्षुण है भाव एवं सौन्दर्य का सशक्त माध्यम होने के कारण वह सदैव काव्यों एवं महाकाव्यों को अनुप्राणित करती चली आई है इस काल के यात्रा क्षेत्र के मध्य नारी जहां सहज आकर्षण बनकर उपस्थित होती है वहीं, देशकाल समाज एवं परिवार से प्रभावित काव्य दृष्टि नारी का मूल्यांकन भी करती आई है। और समाज का दर्पण होने के कारण साहित्य समाज के इस अर्धांग की अवहेलना नहीं कर सकता।

1- नारी तेरे रूप अनेक क्षेमचन्द्र पृ० 7
2, 3, - हिन्दी महाकाव्यों में नारी चित्रण पृ० 6 भूमिका,

भारतीय परिवार में नारी माता के रूप में सम्मान प्रद है और रही हैं। "मातृदेवो भव:"जैसे वाक्य माता को पूजनीया बनाते हैं।

वशिष्ठ द्वारा इस व्यवस्था का विधान है। पतित पिता छोड़ा जा सकता है किन्तु पतित माता नही छोड़ी जा सकती भारतीय परिवार में कन्या की स्थिति वैदिक युग में हर्ष का कारण नही थीं पुत्री की हैसियत से उसे पिता की सम्पत्ति पाने का अधिकार नहीं था।

मनु के अनुसार- कन्या ऋतुमती होकर सम्पूर्ण जीवन घर में पड़ी रहे कोई हर्ज नहीं किन्तु किसी निर्गुणी के साथ विवाह नही करना चाहिए। वह कन्या को यह स्वतन्त्रता देते हैं कि रज्जस्वला होने के तीन वर्ष पश्चात् वह स्वयं ढूढ़ं कर विवाह कर सकती है। किन्तु इस प्रकार की स्वयंबरा कन्या अपने पिता भाई माता के द्वारा दिये गये वस्त्राभूषण नहीं पा सकेगी यह विचारधारा कन्या के महत्व को प्रतिपादित करती है।[1]

अमरूशतक में नारी-

अमरूशतक में नारी का स्थूल चित्रण है। नायिका ने दूती को प्रिय के पास भेजा किन्तु वह स्वयं नायक से रमण करके लौटी उसे देख नायिका अवाक् हो जाती है।

निःशेषच्युत चंदनस्तनघटं निकृष्टरामाधरो[2]

नेत्रे सा पुलकितां तन्वीं तवेयं तनुः

1- नारी तेरे रूप अनेक क्षेम चन्द्र पृ0 40

2- नारी तेरे रूप अनेक पृ0 40

बौद्ध साहित्य में नारी - यहाँ नारी की उपमा नदी मार्ग, शराबखाना, प्याऊ से की गई है।

यथा नदी च पन्थौ, च पाणागारं समापना,

एवं लोको स्थियों नासं कुन्जति पण्डिता।[1]

वैदिक काल में नारी :-

इस काल में नारी की स्थिति जो थी वह परवर्ती कालों में उत्तरोत्तर बदलती गई। पुराण, महाभारत, रामायण तक आते आते इतनी बदल गई की नारी मनोरंजन की वस्तु समझी जाने लगी। एक स्वामी के मरणोंपरान्त उनका जीवन लक्ष्यहीन समझा जाता हजारों हजारों की संख्या में रानियां सती हो जाती थी। इस प्रकार समाज में बाल विवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा आदि कुरीतियाँ समाज में अपना जड़ बुरी तरह जमा चुकी थीं।

राजपूत काल में आरम्भ हुई पृथक एवं कुलीन प्रथा का परिणाम पर्दा प्रथा था। बाल विवाह का कारण क्वारी स्त्रियों का दीक्षित होना था। अतः उनकी शादी जल्दी कर देने से वे दीक्षित नहीं हो पाती थी, वे जनेउ धारण करती थीं धीरे-धीरे उनकी विशेषताएं क्षीण होने लगी। वेदवाणी बोलने वाली विदुषी नारियों का अभाव होने लगा।

दसवीं शताब्देी के भारतीय समाज के कुछ स्वरूप हैं समाज में कई प्रकार की विषमतायें थी जिनमें धन, निर्धनता, पांडित्य और मूर्ख प्रबल

1- नारी तेरे रूप अनेक पृ0 40

विरोधी जहां समाज में करोड़पति सेठ, वहीं घोर निर्धनता से पीड़ित निम्न वर्ग भी था। जो धन एवं ज्ञान दोनों के अभाव से दुखी था वर्ण विभाजन अब जाति विभाजन से शुरू हो गया था। समाज में निम्न वर्ग को पीड़ित किये जाने से आत्मदवात महसूस करने के कारण उनमें आत्म जागरूकता की भावना प्रबल विरोध के रूप में उठ खड़ी हुई।[1]

"मुसलमानों शासक वैभव, विलास, एवं ऐश्वर्य का जीवन जी रहे थे शासकों काजीवन आनन्द का जीवन था विजय हो जाने पर शासन व्यवस्था अमीरों एवं न्याय व्यवस्था काजियों और मुसलमानों को सौंपकर निश्चित हो जाते थे। अमीर उमरा का जीवन भी विलास - मय था।"[2]

जातक काल में नारी -

इस काल में नारियों को गिरवी रखने की प्रथा थी उन्हें कृतघ्न समझा जाता था। उन दिनों नारी को दो अंगुल प्रज्ञावाली कहा जाता था। इस काल में भी यह धारणा थी कि जो पुरूष स्त्री पर विश्वास करता है वह नराधम है।

तासू जो विस्ससे वोनरेसू नराधमः[3]

चाणक्य के अनुसार नारी -

चाणक्य ने नारी को धृत कुंभ एवं पुरूष को तप्तांगार के समान कहा है।

1- डा0 सरला शुक्ला पृ0 150, जायसी के परवर्ती काव्य और कवि
2- डा0 सरला शुक्ला पृ0 152 ,, ,, ,,
3- नारी तेरे रूप अनेक क्षेमचन्द्र पृ0 41

घृतकुंभस्य नारी तप्तांगार समः प्रमान

तस्मादग्निच्च कुंभस्य नैकत्र स्थापयेद वुधः[1]

मानस में नारी -

मानस में तुलसी ने नारी को काम क्रोध लोभ मद मत्सर की भावों से युक्त कहा है -

काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धारि।[2]

तिन्ह महं अति दारून दुखः मायारूपी नारि।

तुलसी ने स्त्री को पाप रूपी उल्लुओं के समूह को सुख देने वाली है घोर अन्धकार रूपी रात्रि है बुद्धि बल शील यह सब मछलियाँ है। उसे नष्ट करने के लिए स्त्री वंशी है के समान है।

पाप उलूक निकट सुखकारी, नारि निविड़ रजनी अंधियारी।[3]

बुधि बल शील सत्य सब मीना, बनसि जन त्रियक हहि प्रवीना।

ये नारी दुर्व्यसनी को शरद ऋतु के समान सुख देने वाली है।

काम क्रोध मद मत्सर मेका, अहहि हरषप्रद बरसाएका

दुर्वसना कुमुद समुदायी, तिह कह सरद सदा सुखदायी।[4]

1- नारी तेरे रूप अनेक क्षेम चन्द्र पृ0 42

2- राम चरित मानस, अरण्य काण्ड, पृ0 748

3- राम चरित मानस, अरण्य काण्ड, पृ0 750

4- राम चरित मानस, अरण्य काण्ड, पृ0 750

5- राम चरित मानस, अरण्य काण्ड, पृ0 750

सूफी काव्य में नारी :

कुमारी कन्याओं की स्थिति समाज में दयनीय थी वे अपने विचार व्यक्त करना चाहती थी किन्तु भय एवं लोक लाज से उन्हें आगे नहीं बढ़ने देती। विवाह के सम्बन्ध में लगभग सभी प्रबन्धों में नायिका अपनी स्वतंत्र सम्मति देना चाहती है। वह अपनी इच्छानुसार ही पति चयन करना चाहती है। किन्तु लज्जावश माता पिता के सम्मान या मर्यादा के प्रतिकूल कार्य होने पर जीवन परित्याग की कल्पना करती हैं।[1]

हौं सो बारी पिता घर, बोलत बचन लजाउं[2]
तब मैं बचौं कलंक ते प्राण कांप भर जाउ

माता पिता पुत्री के स्वतंत्र चुनाव को कलंक समझते उसके प्रेम की सूचना पाकर अपयश के भय से या तो उसे महल में बन्द कर देते थे अथवा मृत्यु दण्ड देने की बात सोचते थे, कन्याओं के प्रेम प्रसंग को माता पिता अनैतिक समझते थे। कन्या को केवल सुनने का अधिकार था बोलने का नहीं।

पिता जो सुने मारि जिउ डारे, माता सुनै घोरि विष मारै[3]
कन्या नाव मारि ते राखै,कान सुनै कहु रसन न भाखै।

कन्या को आठ वर्ष के बाद घर में रखने से गाली पड़ती है उसका घर में रहना उचित नही है, इस प्रकार वह या तो ससुराल में रहे अथवा यमराज के घर इस प्रकार कन्या की स्थिति सूफी काव्यों में कवियों ने दयनीय निरूपित किया है।

1- डा० सरला शुक्ला, पृ० 187, जायसी के परवर्ती काव्य और कवि।

2- कासिम शाह हंस जवाहर पृ० 187

3- कासिम शाह हंस जवाहर पृ० 206

दुहिता जो संयोग होई आवे, माता पिता घर शोभ न पावै।[1]

नासे बहुत कुल धिय के नासि, धिय घर भली की जम के बासे

आठ बरिस लहि दुहिता बारी, नवये रह पिता कहगारी।

नारी को सूफी काव्य में पापिन कहा गया है यह संसार को मोंह लेती है यह माया रूप है।

जगत जनमि जहां लगु आये, सब मोरे येही खायें।[2]

येहि पापिन संसार भोरावा, लोक विगूचे मूल न पावा।

हंस जवाहर में स्त्री का चित्रण पानी में आग लगाने वाली, पुरूष के मुख में आग लगाने वाली, पुरूष के मुख में कालिख पोतने वाली छली आदि के रूप में व्यंजित किया है।

इसी प्रकार तुलसी दास ने नारी को आठ अवगुणों से युक्त कहा है।

"साहस अनृत चपलता माया, भय अविवेक अशौच अदाया"[3]

तिरिया जाति न कीन्ह विचारा, तिरिया मत बूड़े संसारा,

तिरिया जलमंह आग लगावै, तिरिया सूखे नाव चलावे।

तिरिया छार पुरूष मुखमेले, तिरिया छाल नाटक सब खेलें।[4]

1- मधुमालती पृ0 344, छ. 395

2- मधुमालती पृ0

3- रामचरित मानस लंका काण्ड, 877

4- हंस जवाहर पृ0 165

कन्या के विवाह के लिए इन काव्यों में माता पिता कन्या के विवाह को शीघ्र कर देते हैं। कन्या के विवाह के लिए वर पक्ष से ही प्रथम माँग होती थी। कन्या चाहे पालने में ही क्यों न हो। उसके विवाह की चर्चा होने लगती थी।

> बरहे मास प्रगटी बाला, धौर समुद भावर गुजराता[1]
> तिरहुत अवध बदायू जानी, चहुँ भुवन अस बात बखानी,
> गोबरहि आह महर कै धीया, चांद नाव धौराहर दीया।
> अस तिरिया जो भागै पाई, अरु तिय लाइके वियाहे जाई।
> राजा के नित बरउत आवहि फिरि फिरि जाइ पर उत्तर न पावहिं
> महर कहै को मोरे जोगहु कासो करहु वियाहु
> तकतै नित सबको आहे, जगत देखो काहू

पद्मावत में राजा ने सुना की कन्या बारह वर्ष की हो गई है वह उसे सात खण्डों का धौराहर दे देता है सूफी कवियों ने बारह वर्षों की कन्या को पूर्ण यौवनवती मानते थे उन्हें अलग रहने की कल्पना का निरूपण किया है। बालिका के साथ अनेकानेक सखियों की उपलब्ध करवाता है।

> बारह बरस माहं भइ रानी, राजै सुना संयोग सयानी,[2]
> सात खण्ड धौराहर तासू, सो पद्मिनी कह दीन्ह निवासू
> औ दीन्ही संग सहेली, जो संघ करै रह सिरस केली
>
> "सवै नवल पिउ संग सोई कवल पास जनु विगसी कोई"

---

2 -जायसी ग्रन्थावली, पृ0 75 छ. 54 "जन्म खण्ड" राजनाथ शर्मा

1 - चंदायन पृ0 98, छ. 33

चित्रावली की माँ चित्रावली के चित्रसारी में रखा हुआ सम्पूर्ण चित्र ही धो डालती है कुल की रक्षा, मर्यादा के पालन के लिए न चाहते हुए भी वह चित्र पर पानी डाल देती है। पानी डालते हुए वह चित्र के सौंदर्य पर मुग्ध भी होती है, चित्र धोते समय उसे ऐसा लगता है मानो सर्प ने अपनी मणि निगल लिया हो। माता अपार दुख से भर उठती हैं किन्तु अपने कर्तव्य का पालन करती है।

सुनिमति हीरा रानी जागी, लैजल कर सौं धोवन लागी, [1]
गई मेटि सो मूरति रसीली, जनु मनि आइ भुवंगम लीली।
मेटि चित्र रानी चली, हिये द्वन्द दुख होय
एतन न जाना विधि लिखा, मेटि सकै ना कोय।

हंस जवाहर में जवाहर की माँ मुक्ताहर बेटी के प्रेम रहस्योद्घाटन पर क्षुब्ध हो उसकी अलौकिक सेहेली शब्दपरी के ऊपर क्रुध हो उठती है उसे जला देने को कहती है।

पारि सिखावसि औगुणे, जासि कहाँ केहि पास[2]
सत्य कहसि तो जारहु, मैं तोहिं करसि निरास।

माँ मुक्ताहर परी को बंदी गृह में डाल देती है, ऐसी है सूफी काव्य की माताएं और उनका मर्यादा कुल के रक्षा के लिए कठोर से कठोर निर्णय लेने की उदम्य निर्णय शक्ति। वह शब्दपरी के पैरो में बेड़ी डालकर उसका अलौकिक वस्त्र छीन लेती है। उसके ऊपर अत्यन्त क्रोधित होती है उसे बंदी गृह में डाल देती है।

1- चित्रावली पृ० 38
2- हंस जवाहर पृ० 63

पारिवारिक चित्रण :

सूफी कवि पारिवारिक चित्रण के अन्तर्गत उन समस्त स्थितियों का निरूपण करते हैं जो परिवार में सामान्यता घटती रहती है, जिसकी धुरी पर हमारी भारतीय, मर्यादा, परम्परा, आदर्श एवं संस्कार हैं आद्यान्त जुड़े हुये हैं।

नारी का महत्व उसके पारिवारिक जीवन में उपयोगिता का परिचायक है। नारी के सहयोग के बिना गृहस्थ जीवन निराधार है बिना विवाह संस्कार के पितृ ऋण से मुक्ति नहीं हुआ जा सकता।

भारतीय वैवाहिक जीवन में निस्पृह सेवा पर अधिक बल दिया गया है पति सेवा को नारी का सबसे बड़ा धर्म बताया गया है। पतिव्रत धर्म के अन्तर्गत सौतों के साथ प्रेम से रहना ईर्ष्या न करना आदि शिक्षा पर भी बल दिया गया है।

भारतीय समाज में सबसे दृढ़ कड़ी गृहस्थ जीवन है। भारतीय समाज की महत्वपूर्ण इकाई सम्मिलित परिवार है जहां व्यक्ति को अनेक सम्बन्ध एक साथ ही सुचारूरूप से सम्पादित करने पड़ते हैं। हिन्दी के इन सूफी कवियों ने भारतीय गार्हस्थ्य जीवन की झांकी हमारे सम्मुख उपस्थित है वह अत्यन्त स्वाभाविक है। मध्यकालीन योरोपीय रोमांसों में वर्णित प्रेम की भांति सूफी काव्य के अन्तर्गत वर्णित प्रेम तत्व वासनात्मक नही है। वैवाहिक संबंध केवल शारीरिक पूर्ति का साधन मात्र नही है उसकी अनिवार्यता एवं उपयोगिता के साथ इसकी मर्यादा भी उन्हें मान्य है।[1]

1- डा० सरला शुक्ला, हिन्दी सूफी काव्य और कवि , पृ० 182

जब हम किसी कार्य के लोक या समाज पक्ष पर विचार करते हैं तब सबसे पहले हमारा ध्यान उसके मंगल-विधान पर जाता है। वैसे तो समाज रक्षा, स्थिति मनोरंजन पारस्परिक व्यवहार सभी कुछ मंगल विधान के अन्तर्गत हैं।[1]

कुल मर्यादा के लिए माँ का कठोर होना :

सूफी नायिकायें जब तक कुमारी रहती हैं, सहेली दासी या धाय से अपने प्रेम का प्रकाशन करती हैं वे अपने दुख, दर्द आदि आन्तरिक उद्घाटन इन्हीं से करती हैं माताओं से इनका वार्तालाप तभी होता है जब इनके प्रेम का रहस्य खुल जाता है।

मधुमालती का प्रेम सम्बन्ध माता रूप मंजरी के समक्ष उद्घाटित होता है वह अवाक् हो जाती हैं पुत्री को अनेक प्रकार से समझाती हैं न मानने पर वह क्षुब्ध हो उठती हैं। उसे बेटी के प्रेम से अधिक सामाजिक प्रतिष्ठा एवं कुल की चिन्ता है। वह पुत्री का ऐसे रहने से अच्छा उसका मर जाना उचित समझती है। वह कुलहीना कन्या है वह उसे मारती है।

मारेसि दुवौ हाथ ओहि मांगा, इह कुल वोरनी तेहि का लागा[2]

मातां पिता कुल लायेसि खोरी, जनमत कस न मरी कुल बोरी।

अपने क्रोधवेग को माता रोक नही पाती और अपने विशेष गुण का प्रयोग कर देती है। उसके ऊपर अभिमंत्रित जल डालकर उसे पक्षी रूप बना देती है।

1- डा० जयनाथ नलिन, भक्तिकाव्य में माधुर्य भाव, पृ० 142-43

2- मधुमालती पृ० 303 छ० 350

तब चिरूवा मर लेके पदि़ छिरकेसि मुख पानि[1]

लागत खिन मधुमालती पंक्षी होहि उड़ाहि

चंदा की माँ भी बेटी के कृत्य को मालिन द्वारा सुनकर सहस्त्र घड़े पानी से भींग उठती है।

सुनतहि फूला महरी लजानी घरी सहस जनु मेला पानी

कहिं विधि तइ अवताई, बरू अवतरइ मरति उबारी।[2]

विदा वेला :

सूफी काव्य में कन्या के विदा-वेला का अत्यन्त कारूणिक निरूपण कवियों ने किया है। पद्मावती में पति गृह को प्रस्थान करने के लिए उद्यत् नारी हृदय की बड़ी मार्मिक व्यंजना कवि ने किया है, ऐसे मनोवैज्ञानिक चित्रण हृदय-द्रावक होते हैं। पी के नगर के लिये गमनोधत वधू अपने परिजनों से कभी फिर मिल सकेगी या नही यह विचार उसके हृदय को विदीर्ण कर रहा है। इस मिलन-विच्छेद में नारी मन की कोमल अनुभूतियों का प्रकाशन है। कवि ने यहाँ रहस्यवाद का पुट भी दे दिया है। जो कन्या पिता के घर जीवन के अनेकों बसन्त बिताये हों, सखियों के साथ विलास-लास में अठखेलियाँ करती हो आज वही कहती हैं कि "कंत चलाई का करौं आयसु जाई न मेट, यह भारतीय नारी का आदर्श है।

1- मधुमालती पृ0 304 छ॰ 351

2- चंदायन पृ0 265, छ॰ 272

पुनि पद्मावती सखी बोलाई, सुनिके गवनै मिलि सब आई
मिलहु सखी हम तहवाँ जाहीं, जहाँ जाइ पुनि आउबनाहीं
सात समुद पार वह देसा, कितरे मिलन कित आव संदेसा।
अगम पंथ परदेस सिधारी, ना जनौं कि कुसल विथा हमारी
पितै न छोह कीन्हहि माँहा, तहं को हमहि राखि गहि वाहाँ
हम तुम्ह मिलि एकै संघ खेला, अंत विछोह आनि गिउ मेला
तुम अस हित संघति पियारी, जियत जोइ नहिं करौ निनारी।[1]

पद्मावती के विदा वेला में माता पिता सभी रो रहे हैं किन्तु विदा होते समय कन्या को कोई रोक नहीं पाता है उसका प्रिय उसे बड़ी धूम धाम से प्रसन्नता के साथ विदा कराकर ले जा रहा है।

रोवहु मात पिता औ भाई, कोउ न टेक जो कंत चलाई
रोवहु सब नइहर सिंघला, लेइ बजाई के राजा चला।[2]

माँ बेटी दोनों के हृदय में विछोह की ज्वाला प्रज्ज्वलित है। बेटी चरण स्पर्श करती है माँ उसे हृदय से लगाती है। माता के कुदिन की अग्नि को सहन कर रही है बेटी के बांह को छोड़ देती है। वह जानती है कि बेटी अब पराई है यहां कवि विदा वेला के मानसिक द्वन्द का सुन्दर चित्रण किया है।

कोख आगि सहि मान विछोवा, बाँहि छाँड़ि रानी तब रोवा[3]
अस कहि कुवँरि लागि गिय रहीं, छाड़ि न सकें प्रेम की गही।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 493, छ. 403 राजनाथ शर्मा
2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 503, छ. 412 ,, ,,
3- मधुमालती पृ0 457 छ. 513

मधुमालती की सखी प्रेमा भी अपनी मां मधुरा के चरण लगती है, और कहती है कि मां ने तो मुझे जन्म भर दिया है वह मधुमालती की मां रूपमंजरी से कहती है, मां तुमने तो मेरा प्रतिपालन किया हैं।

दौरि रोइ मधुरा पा लागी,[1]
ओहि मां सेउ मोहिं जल निहोरा तै प्रतिपार किन्हेसि मोरा।

मधुमालती की मां रूप मंजरी देखती है कि बेटी को देखकर पिता अत्यन्त दुखी हो रहा है। वह दोनों को अलग करती है स्वयं दुख के सागर में डूब रही है किन्तु पति की विक्षिप्त दशा देखकर अपने आपको संयत कर पति को पुत्री से विलग करती है।

मधुमालती कै कंठ छुड़ायो, दुवौ जनै रोवत बिगराये[2]
कहेसि कि तुम्ह जन परिजन साई, कस रोवहु मेहरिन्ह कै नाई।
धीरजवन्त जो पुरूषा भारी, थोरे दुख नहिं होहु दुखारी।
हम अबला सोचित बुद्धि थोरी, थोरे दुख नहिं होइहि बौरी।

कवि ने भारतीय आदर्शों की सतत् व्यंजना की है मां पुत्री को आशीर्वचन कहती है जब तक पृथ्वी पर गंगा की धार सूर्य चन्द्र एवं तारे हैं, तब तक तुम्हारा सौभाग्य ईश्वर शाश्वत रखे।

जननि असीस दीन्ह मन जानी, सदा सोहाग राज घर रानी[3]
जौ लहि धरती गंगा जल धारा, औ ससि सूरज तार।
तौ लहि राज-सोहाग तुम राखहुं सिरजन हार।

1- मधुमालती पृ0 448, छ॰ 514
2- मधुमालती पृ0 465, छ॰ 521
3- मधुमालती पृ0 457-58 छ॰ 513

मंझन की मधुमालती ससुराल जाते समय अत्यन्त संवेदन शील हो उठती है वह उन्हें अंकवार देती है पिता के कंठ लगकर, पुनः पकड़ कर, फिर कंठ से लग जाती है। जितना ही उसे विलग करने की चेष्टा की जाती है उतनी ही तीव्रता के साथ वह पिता के कंठ पुनः लग जाती है। पुत्री के इस स्नेह से पिता करुणा के ज्वार से भर उठता है। वह ब्रह्मा को कोसने लगता है कि कन्या का वर गृह जाना था तो इसे क्यों जन्म दिया यदि पुत्री जन्म न होता तो इतना दुख देखना और सहन करना न पड़ता।

बहुरि पिता पाँ लागेउ बारी, पिते देत सेउ अंकम सारी।[1]
राजा चखु नहिं रहै पनारी, कहै विधि कत धिय जग औतारी।
जौन होत दुहिता औतारा, कोउ न सहत एत दुख भारा।

मधुमालती समस्त परिवार से विदा लेती हुई अचेतन वस्तुओं से भी विदा लेती है, जहां सोती थी, उस शैय्या से विदा लेती है, उस महल से उनके कपाटों से पट्टसारों से पर्यंकों से वह अपनी विदा वेला में भेटती रही है। वह उनके सेवाओं का उनके साथ बिताये हुए उन क्षणों का अनुभवों का, जो उन अचेतन वस्तुओं में उसकी चेतना के साथ जुड़ी हुई है मधुमालती भाव विभोर हो उठी है।

समदै सब परिजन परिवारा, समदै फिरि फिरि पौरि केवारा।[2]
समदै पालक सेज तुराई, समदै राज मंदिल कंठ लाई।
समदै सब पाटन पट सारा, समदै रोइ रोइ पौरि पवारा।
निसि सावै जहाँ राज दुलारी, समदै पायन परि चित्रसारी।

1- मधुमालती पृ0 448, छ॰ 514

2- मधुमालती पृ0 454, छ॰ 510

चित्रावली भी सखियों से मिलती है यथायोग्य चरण स्पर्श करती है गले मिलती है। कोई रो रहा है कोई गले से लगी है अत्यन्त मार्मिक स्थिति हो गई है।

समदै सखियां लैलै फेरी, पायन परि परि समदै येरी[1]
कोइ रोवे कंठ लागी, कोई रोवे पायन्ह लागी।

माता छोह से भर कर गले लगा लेती है उसके नेत्रों से जल गिर रहा है। वह चित्रावली के सुन्दर मुखं पर जो स्वसुर गृह जाने के लिऐ सजाई गई है निछावर हो रही है।

छोह भरी रानी पुनि आई, चित्रावलि कै अंक में लाई[2]
कहेसि दोउ लोचन भर नीरा, मुख छवि पर बलिहारी हीरा।

जवाहर गौने की बात सुनकर सूख जाती है उसे ऐसा लगता है मानों काल ने आकर घेर लिया है। वह घबड़ा उठती है। वह यह सोचकर अपने नेत्रों में जल भर लेती है। उसे पराये घर जाने की बात सोचकर दुख हो रहा है। "उमड़े नैन नीर भरि आये आज चलिउ मैं देश पराये।"

सुनि धनि गौन चलन पिउ केरा गई तन सूख काल मनु घेरा[3]
दहक उठी घबड़ा अकुलानी, मात पिता तजि भयो बेगानी।

इस प्रकार वह 'छाँड़ि चल्यौ नैहर, कुल सारा, माता, पिता, भाई, सखियां सहेलियां सबसे पराई हो जाती है। यहां भी कवि संसार की असारता का संकेत देता है।

1- चित्रावली पृ0 121, छ॰ 50
2- चित्रावली पृ0 120, छ॰ 447
3- हंस जवाहर पृ0 194

छाड़्यो माता पिता औ भाई को राख्यो जो भयउ पराई
मिलि आइ नैहर की गोई, मोर सो मेल कहा ते होई।[1]
रोवत धन रोवत सब कोई, एक दिन चलन सबन कहं होई
कौन सोग मन भरौ दुलारी, तुम जो चलौ चलन हमहारी।

पुत्री को माँ की शिक्षा :

भारतीय परम्परा में विदा वेला के समय जब पुत्री पति गृह को प्रस्थान करती हैं तो मातायें उन्हें शिक्षा देती हैं जो उनके सुखद दाम्पत्य जीवन की आधार शिला होती है उन्हें शील, संकोच मितभाषी, बड़ों की बातों का उत्तर न देना अल्प मान वती होना, पति एवं सास के चरण छूना ईर्ष्या न करना, ननद के कटु वचनों को सहन करना स्वयं कष्ट सहकर स्वामी को सुख पहुंचाना, पति के लिये ही श्रृंगार करना। आदि बातें वे पुत्री को मंत्र समान देती है।

मधुमालती की मां मधुमालती को विदा बेला में इसी प्रकार की शिक्षा देती है जो संयुक्त परिवार के आधार शिला की दृढ़ नींव है।

साईं सेवा किये सुख होई साईं दुख जाने सोई[2]
साईं सेवा करब चित लाये जनि डौले चित दहिने बायें,
साईं सेवा कीजिये कै जिनु अपने हानि,
साईं सेवा जिउ बंधा सो चारो जुग रानि,
उंचै बोल जनि बोलहु शिसि राखेउ मन माहि,
संतति लाज धरब जिउ, कुल नहिं आवै गारि।

1- हंस जवाहर पृ0 195
2- मधुमालती पृ0 150-51

चित्रावली की मां अपनी बेटी को शिक्षा देती है कि तुम आंगन में तभी निकलना जब रात्रि हो, सदैव पीठ की ओट देकर बैठना, जिससे तुम पर किसी की दृष्टि न पड़े। गुरूजनों का भय रखना, उनके सम्मुख सिर नत् करके रहना लज्जनवत् मुख चरणों में रखना, किसी की बात का कोई उत्तर नहीं देना, यह एक माँ बेटी को सीख दे रही है जिसका अनुपालन करना अत्यन्त दुरूह है, कष्ट साध्य है, किन्तु माँ उसे दीक्षित कर रही है उसके सुखद भविष्य के लिए परिवार की संयुक्तता के लिए।

ओबरी माह रहब दिन गोई,आगन होब रात जब होई
बैसब सदा बार दै पीठी, परै न सौंह आन की दीठी
सतति रहहि मकुर मन माँही,चीन्हेव कर आपन परछाहीं
पुनिडर मानव गुरू जन केरी, सममुख काहु न देखब हेरी।
उतर नदेब कहै जो कोई, लाजनै रहब चरन तर जोई।[1]

माता को इतने से सन्तोष नहीं है वह कहती है -

ननदी औ जोघार कहे रिसिराखब जिय मारि[2]
परिछि सीस पर लेब नित, सामिनि देई जोगारी

माँ कहती है पति की सेवा करना किन्तु "मनसा" के साथ, क्योंकि वह एक पति दोनों लोकों का सुख सागर है। उसके ऊपर कोई मन्त्र तन्त्र नहीं चलता है एक मात्र सेवा से ही पति बस में हो सकता है। यह एक अनुभवी माता की शिक्षा है।

1- चित्रावली पृ0 120

2- चित्रावली पृ0 120 छ. 48 सत्य जीवन वर्मा

औ चित लाइ करब पिउ सेंवा, एक पीउ दुइ जग सुख देवा[1]

जन्त्र मन्त्र साधै जनि कोई, सेवा एक पीउ बस होई।

माँ कहती है -

· जिउ दुखदै सेवन सुख त्यागी, सगरी रैन गवाउब जागी[2]

सौतिन्ह कर झिखा जनि करना, साईं संघ सदा जिय डरना,

मान कम एवं सेवा अधिक, क्रोध मन में दबाकर रखना, यह तीन गुण जिस स्त्री में है वही नारी सुहागिनी होगी उसका पति उसे चाहेगा, सूत्र रूप में माँ अपनी बेटी को सारी सीखों का निष्कर्ष समझाती है।

अलप मान सेवा अधिक रिसि राखब गिउ भारि[3]

जेहि धन मंह ये तीन गुन सोई सोहागिनि नारि।

माता की सीख भरी बात सुनकर बेटी करूणा विगलित हो उठती है वह तेजी से रूदन करने लगती है, तदुपरान्त माता के चरण छूने को आगे बढ़ती है रानी उसे अपनी ममता भरी गोद में हृदयस्थ करती है पुत्री को छोह के मारे छोड़ नहीं पा रही है।

कवि का यह बेटी के विदा का दृश्य अत्यन्त करूण उठा है।

सुनि बेटी उपदेश नारि गहबरी, रोइ जननि के पायन्ह परी[4]

रानी पुनि लै अंक में लाई, तजि न जाइ अति हिये छोहाई।

1- चित्रावली पृ0 120 छ· 49

2- चित्रावली पृ0 121 छ· 49

3- चित्रावली पृ0 121 छ· 49

4- चित्रावली पृ0 121

पिता भी पुत्री को अपने अश्रुओं के जल से नहला देता है।

राजै पुनि उठाय गिवं नैन नीर पुत्री अन्हवाई।[1]

माता हीरा से पिता-पुत्री का यह करुण रूदन देखा नहीं जाता वह पति-पुत्री को जबरदस्ती अलग करती है राजा को समझाती है यहां मां अपने भीतर धैर्य रखती है।

रानी बर कै धिय बिलगाइ, राजै बहुत प्रबोध बुझाई।[2]
कै प्रबोध नरेस बिनानी समदि चल्यो धीय चखु पानी।

मधुमालती भी विदा समय में अपनी मां के कंठ से लगती है। जितना उसे छुड़ाने की कोशिश की जाती है उतनी ही तीव्रता के साथ वह अंकम देती है।

कुवरिं जननि पा लागी धाइ, रानी सिर उठाइ गिय लाइ[3]
जननि कंठ नहिं छाड़ै पारै, अधिको देइ देइ अंकम सारै

बेटी पुनः पिता के कंठ लगती है वह दुलारी किसी भी प्रकार से पिता के कंठ को नही छोड़ती।

"बहुरि पिता पाँ लागी बारी",
पिता कंठ नहिं छोड़हु कैसेहु राजकुमारी।[4]

1- चित्रावली पृ0 121

2- चित्रावली पृ0 121

3- मधुमालती पृ0 457, छ० 513

4- मधुमालती पृ0 448, छ० 514

जवाहर की माता मुक्ताहर भी कन्या को शिक्षा देती है।

माता की यह शिक्षा की पति कुछ भी कहे उसे ही स्वीकार करना उसकी बातों का विरोध नहीं करना तुम्हारे पति सेवा से दोनों लोक में तुम सुहागिनी नारी होगी, पुरूखों का शीश गर्व से ऊपर उठेगा। यहाँ कवि में भारतीय व्यवस्था, पूर्वजन्म आदि का ज्ञान परिलक्षित होता है।

चलो जो तुम प्रियतम के साथा, रह्यो लियो आयसु निज हाथा।[1]
निस दिन पिउ सेवा चित कीहों, आयसु भेट और ना कीहो।
पिउ सेवा से पीतमबारी, दुइ जब सोइ सुहागिन नारी
वर पीपर वर कहे जेईसा, भई पुरखीन उदय की सीसा।

मधुमालती के विदा पर समस्त कुटुम्ब परिवार जन-परिजन दुखी हो जाते हैं।

देखि कुवंर के कुटुम्ब विछोवा, सगरी लोग नगकै रोवा।[2]
रोवै नग्र छतीसो जाती, बार बूढ़ रोवै अहिवाती
नगके जीव काढ़िकर लीन्हा, बिन जिउ काढ़ि कया सब कीन्हा।

सूफी प्रेम काव्यों में सम्पूर्ण समर्पण पति सेवा, माता की शिक्षा, लोक मंगल की भावना का जो उत्कृष्ट निरूपण मिलता है वह रामकाव्य को छोड़कर अन्यन्त्र मिलना कठिन है। हिन्दू जीवन का यह गौरवशाली व्याख्यान करने वाले सभी साधक मुसलमान थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के भावोच्छ्वासों में लिपटा हुआ हृदय पुकार उठता है, " मुसलमान "इन हरिजनन पर लाखों हरिजन वारिये"

1- जवाहर (हंस) पृ0 195
2- मधुमालती पृ0 156

सास वधू का सम्बन्ध :

सूफी काव्य में सास एवं वधू का सम्बन्ध दो रूप में निरूपित है, प्रथम रूप में सास सहृदय, कोमल वधू वत्सला, स्नेहमयी है वह अपनी पुत्र वधू को पुत्र से अधिक स्नेह करती है पुत्री यदि अनुचित कार्य करती है, या वधू से उसके पुत्र की अनबन है, तो वह दोनों को समझाती है या किसी एक पक्ष की कमी है तो उसका निराकरण करती है इस श्रेणी में मृगावती की सास, मैना की सास आदि आती हैं।

दूसरे प्रकार की सास के रूप में चंदा की प्रथम सास "बावन" की माता है आती है यह पुत्र को चाहने वाली वधू का छिद्रान्वेषण करने वाली सामान्य सास के रूप में है।

चंदायन में खोलिन एक आदर्श सास है वह देखती है कि उसका पुत्र लोर किसी दूसरी स्त्री पर आसक्त है, मैना गंभीर है सास की अनुभवी आँखें अपने वधू के साँवले कुमलायें मुख से समझ जाती है कि वह अंतःकरण से दुखी है उसका प्रेमी उसके साथ नहीं है एकान्त की उदासी से मैना दुखी है। स्नेहमयी सास से अपनी एक मात्र वधू की ऐसी स्थिति देखी नही जाती वह पूछ बैठती है।

> खोलिन मैना देखत अहा, कहेसि न धिय केउ कहु कहा[1]
>
> बरन रात साँवर तोर कहि बरन तोर रात होइ चाहे।
>
> मोहिं कहि सुनी कछु तईं बाता, लोर बीर बहुयरि कहिराता
>
> बारी उत्तर देसि न मोहीं, केहु कछु कहा है तोही
>
> जीभ काढ़ी ताकर हउं जारउं, घरहिं छोड़ाउ देस निकारहु।

1- चंदायन पृ0 222, छ० 229

खोलिन के ऐसे प्रश्न को सुनकर मैना विह्वल हो उठती है। उसके अंतर में भरा हुआ दुख का ज्वार सास के सान्त्वना पूर्ण शब्दों को सुनकर फूट निकलता है। वह पति की दूसरी स्त्री के आसक्ति देख स्वयं को असुरक्षित समझने लगती है।

> काह कहुँ खोलिन माई, हउं फुनि आहहुँ धीय पराई[1]
>
> धिय के जाति आहि सबकेरी, हउं फुनि मैं तेहि कइ चेरी।
>
> जानि बुझि कउ मोहि कस गोवउं,होई तुम्हार तईस करि रोवउ
>
> जाकर कोही जरइ सो जानेइ, अन जरते कहकाह बखानइ
>
> तुम्ह जानति मोसेउ कर, चोरी लोरिक लखइ पराई गोरी।

मैना सास से कहती है अब मुझे जाने दो लोरिक तो दूसरी स्त्री पर अनुरक्त है। यहां अब रहने का मेरे कोई कारण नही रह गया है। लोरक के आकर्षण से मैं यहां अभी तक थी, किन्तु अब तो लोरक मेरी ओर से निश्चिंत हो गया है।

> जाउ देहि मोहि खोलिनी लोरिक कीन्ह दुहेलि[2]
>
> सारस परि ररि मुयेउ, मरेउ पिउ बिनु रैइनि अकेल।

पारिवारिक शुभ की कामना करने वाली खोलिन लोरक के कार्य से दुखी वधू को प्रेम से दुलराती है, और गम्भीर होकर घर में रहने का आदेश देती है, पुत्र को नकारा, पागल कहती है, उसकी बात को अपने अन्तर में मत सोचो, आदि विभिन्न प्रकार से समझाती है।

> गरूइ हो ही अपने घर रहहु,ओहि हरके की चित्त नकरहु

1- चंदायन पृ0 223, छ. 230

2- चंदायन पृ0 228, छ. 235

खोलिन अपनी वधू को आंतरिक स्नेह देती है कवि ने यहाँ सास के आदर्श स्वरूप का निरूपण किया है कि वह वधू के सौन्दर्य का बखान करती है। प्रिय के कृत्य से दुखी हो वह अस्त व्यस्त है, उसकी यह दशा देख सास द्रवित हो उठती है उससे कहती है, तुम अपने को ढंक कर लाजवती रहो क्यों खुले हुए अस्त-व्यस्त दशा में हो।

सुहर रूप तोरो बहुर्यरि, बिहरे ढाकत नाहिं।[1]

खोलिन पुत्र को प्रताड़ित करने की बात कहती है।

गारिह फारि कै जीभ उपारहु पिउ लोरिक कोहु।[2]

और यहां चांदा की सास कठोर है वह चांदा को पहले स्नेह करती है उसे कहती है "दुध दाँत घंसि बिटिया बारी" किन्तु वह समझाती है कि मेरे पुत्र की कमी वधु जान गई है तो वह अपने पुत्र की बड़ाई करती है उसे दूध में पला हुआ कोमल कहती है। "बावन मोर दूध कर फोवा।"

चांदा का जबाब भी सास के लिए कठोर है।

"अब लइ कुरू मैं आपन धरा," वह उद्धत हो उठती है किन्तु अब मैं यहाँ नही रहूंगी।

एहि परिहंस उठि मइके जाउं, तिय सो रांघ सोहागिन नाउं

यहां सास वधू का द्वन्दात्मक वार्तालाप का कवि ने सुन्दर अंकन किया है। सास वधू के इस बात प्रत्युत्तर देती है।

"जउं तूं जइहसि मइके अबहिं पठवउ सन्देश।[3]

1- चंदायन पृ0 43, छ· 48
2- चंदायन पृ0 48, छ· 43
3- चंदायन पृ0 48, छ· 43

"मृगावती" में भी सास वधू का सम्बन्ध उच्चकोटि है। मृगावती की सास गंगा पारिवारिक एकता का मनोविज्ञान समझती हैं। उसकी दो वधुंए हैं। मृगावती, रूपमनि दोनों ईर्ष्या भाव के वशीभूत एक दूसरे पर आरोपण-प्रत्यारोपणकरती हैं ऐसे तनावपूर्ण स्थिति को मृगावती की सास मनो-वैज्ञानिक ढंग से समझाती है।

सास दइ रूपमनी कर दोसू, मिरगावती कह बुझाएसि रोसू[1]
सासू कहा ओहि समझाओ, दुवौ सवति कहं गले लगायो।

× × × ×

सासू कहा रूठे ना जाई, रूठि कै किये साइ न पाई[2]
साई क सेउ करहु चित लाई, रूठि कै किये साइ न पाई।

दोनों बधुएं भी सास गंगा की मां के समान प्यार करती हैं, सास के आने पर मिरगावती के नेत्र अश्रुओं से भर उठते हैं। यह सम्बन्ध कम ही देखने को मिलता है।

मिरगावती जो देखेउ सासू, ढारै लागि नैन भरि आँसू

रूपमनि सास को माता के समान समझती है।

"सास न होहू माइ तुम मोरी[3]

सास दोनों वधुओं का ढाँढ़स बंधाती है मृगावती के अश्रु भरे नयन अपने आँचल से पोछती है। "सास पोछेहि मुख आंचर लीन्हें।" एक स्नेहिल, कोमल आदर्श सास की तरह वधुओं को रोष न करने एवं गंभीर रहने का आदेश देती है।

"सास कहा यह रोष न बुझेहु गरुई भइ रहाहु"[4]

1- मृगावती पृ0 882, छ. 407
2- मृगावती पृ0 883, छ. 408
3- मृगावती पृ0 883, छ. 408 4. मृगावती पृ0 883, छ. 408

मॉं बेटे का सम्बन्ध :

कवि माताओं का प्रेम पुत्र के प्रति अधिक व्यंजित किया है। इस प्रकार की व्यंजना युद्ध में जाते हुए पुत्र को रोकने के समय है। चंदायन में पुत्र लोरक को भी खोलिन युद्ध-विरत करती है – "खोलिन लोरक चलन न देही।"[1]

पुनः पुत्र के न मानने पर वह आर्शीवाद देती है।

माता बहुरि दीन्ह असीसा, जीवहु लोरक कोटि बरीसा।[2]

खोलिन नीर वारि सिर दिया, मकु मोहिं महं लोरक जिया।

पद्मावत में मॉं रत्नसेन के योगी होकर जाने पर दुखी होती है।

रोयत मायं न बहुरत वारा, रतन चला घर भा अंधियारा।

गोरा बादल की मां बेटे के शौर्य से परिचित नही है वह उसके चरण पकड़ कर रोकती है। "आइ गहेसि बादल कर पायां"।

बादल राय मोर तूं बारा, का जानेसि कस होहि जुझारा[3]

बादसाह पुहुमि-पति राजा, सनमुख होहिं न हम्मीरहिं छाजा।

कवि विभिन्न परिस्थितियों में पारिवारिक सम्बन्धोंमेंमाताओंका पुत्र के प्रति अन्धा प्रेम, वह उनके शौर्य को भी नहीं समझती हैं। ये इतनी भोली है कि पुत्र के नवपरिणीता वधू की ओर इंगित करती है, कि शायद पुत्र रूक जाए।

"आजू गवन तोर आवै बैठि मानि सुखराज"[4]

1- चंदायन पृ0 151 छ· 155

2- चंदायन पृ0 104 छ· 104

3- जायसी ग्रंथावली पृ· 186, छ· 136 4- जायसी ग्रंथावली पृ0186छ· 136

संस्कार एवं प्रथाएं

सूफी काव्यों में कवियों ने विभिन्न संस्कारों का वर्णन किया है जिसमें छठीं संस्कार विवार संस्कार, मण्डप वर्णन, ककंण बांधने की प्रथा, दायज प्रथा, गाली प्रथा, खरिका प्रथा, एवं अन्य प्रथाओं का विस्तृत वर्णन किया है कवि के वर्णन को देखकर ऐसा लगता है कि कवि भारतीय परिवेश में पूर्णतः रचा बसा हुआ है सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रथाएं एवं संस्कारों पर कवि की दृष्टि सहज ही जाती है। दायज में क्या देना है कवि की दृष्टि यहाँ भी गई है।

छठीं संस्कार :

मधुमालती का छठीं संस्कार को बड़े धूम-धाम से मनाया गया है। कवि ने अभिव्यंजना की है। नगर, घर गली सर्वत्र आनन्द पूर्ण है। मृगमद का तिलक चतुर्थी आलेपों से लेपित सुन्दर हार से पूरित ताम्बूल से लसे मुख, सिन्दूर से भरी मांग से युक्त सारी नारियाँ मंगलगान कर रही हैं।

"छठीं रात सब बाजन बाजे, घरन्घर नगर बधावन साजे[1]
सभधर नगर उछाह कल्पानां, खोरि-खोरि आनन्द निसाना
राजगीर ही सबहि सुनि आये करै छतीसऊ पौनि बधाये
मृगमद तिलकचरतुसम अंगा, औसोभित उर हार सुरंगा
मुख तम्बोल सिर सिन्दुर रोरा, गावहीं तरूनि होहिं अन्दोरा।

बरही संस्कार भी कवि ने दिया है जिसमें सारे नगर वासी "झारा" अर्थात् बालक, वृद्ध, बच्चे सभी परिवार भोजन करते हैं। जिसमें अकिंचन भाट भाटिनी सभी वस्त्रापूरित किये जाते हैं।राजाअपने भण्डार का पूर्ण स्खलन कर देते हैं। राजाओं में कन्या जन्म पर इतनी प्रसन्नता है।

1- मधुमालती पृ0 43, छ॰ 52

बरहे दिन बरही भई भारी, नगर लोग नेवता सब झारी[1]
दुखी लोग बैठाई जेवावा, अमनैकह घर घोर पठावा
औ जाचक जहवाँ लगि आये, भयेनिभोट पनवारा पाये।
नगर छतीसी पौन सवाई, सब कह राजै दीह्न बधाई।।

चाँदा की छठीं भी मनायी गयी है, छत्तीसों जातियों को न्योता, घर-घर लोगों को निमन्त्रण देना। एक सहस्त्र राजा आये, ब्राह्मणों की एक सभा हुयी जिसमें पत्रा पुराणों में चाँदा के गुण भाग्य एवं लिलार का लेखा लिखा गया।

पायों दिवस छठी भई राती, न्योता गोबर छतीसो जाति[2]
घर घर सभकर न्योता आवा, और तिहुं अमर बाज बधावा।।
महरै सहस सात एक आये, अंगमूड़ सेंदूर अन्हवाये
बाहमन सभा जो आन बइठो, काढ़ि पुरान राचिन दीठी।
छठी का आखिर देख लिलारा, अरू पहिसों जाहि जिवारा

पद्मावती की छठी भी धूमधाम से मनायी गई है राशि गणना की जाती है आनन्द, क्रीड़ा नृत्य के साथ रात्रि व्यतीत करते हैं।

मै छठी रात सुख मानी, रहस कूद सो रैनि बिहानी
भा विहान पंडित सब आये, काढ़ि पुराने जनम अरथाये
उत्तम घरी जनम भा राजू चाँद उआ भुइं दीपा अकासू
कन्या राशि उदय जग कीया, पद्मावती नाम अस दीया।[3]

1- मधुमालती पृ0 45 छ॰ 54
2- चंदायन पृ0 98, छ॰ 35
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 73 छ॰ 52

विवाह संस्कार :

मृगावती से विवाह करने के लिये कुवंर चंडोल पर सवार है उसके मस्तक पर मुकुट सजा हुआ है बड़े-बड़े बुद्धिमान पण्डितों के द्वारा उसके विवाह का दिन निश्चित हुआ है।

महा गनक पंडित गन भले, थापि बिआह लगन लै चले[1]
चढ़ी चंडोल कुवंर अभिलाषा, माथे मुकुट जराउ राखा।
पसराकाज बिआह को आवा, नेउता लोग देस सब आवा
सोन सिंघासन छात संवारा, मुकुट बांधि कुवंर बैसारा।

यहाँ पद्मावती के वर रूप में विवाह के लिये'रत्नसेन'को स्वर्ण चित्रसारी में सिंहासन पट्ट पर बैठायागयाहै।

जहं सोने कर चित्तरसारी लेइ,बरात सबतहां उतारी[2]
माँझ सिंघासन पाट सवारा, दुलह आनि तहाँ बैसारा।

चित्रावली के वर को स्वर्ण के पाट पर बैठाया गया है।

मंदिर आनि ले कुवंर उतारा, कै कल धौत के पाट बैसारा।[3]

1- मृगावती पृ0 98 छं. 35

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 363 छं. 296

3- चित्रावली पृ0 113

मंडप वर्णन :

पद्मावती का मण्डप रचकर बनाया गया है। कवि दीपक जलाने की रस्म का काल्पनिक विवेचन किया है भारतीय परम्परा में मण्डप के दीपक को सम्पूर्ण रात्रि जलना चाहिए कवि ने पद्मावती के मण्डप के दीपक की परिकल्पना मणियों से की है जो पूरी रात्रि अनवरत् अपने प्रकाश का दीपक जलाते हैं।

रचि-रचि मानिक माड़ो छावा, और भुइं रात बिछाव बिछावा[1]
चंदन खांभ रचे बहु भाँती, मानिक दिया बरहि दिनराती।

बदंनवार की सजावट भी दृष्टव्य है। मंगल गान की सुमधुर ध्वनि सर्वत्र प्रसारित हो रही है।

घर-बार बंदन रचे दुवारी, जावत नगर गीत झनकारी।[2]

चित्रावली का मण्डप अपूर्व है-

अतिहि ही अपूरब माड़ों छावा, जर कसि पाट पटम्बरलावा[3]
कनक खंभ जनु बीच सुमेरा, चौंधी दृष्टि परी ताहि जो हेरा।

गाली प्रथा -

मधुमालती के विवाह के अवसर पर सखियां गाली प्रथा के अन्तर्गत कहती हैं -

"गाली देइ औ करहि भडाई"

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 356 छ० 289
2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 356 छ० 289
3- चित्रावली पृ0 113

औ मधुरा कह समधिन जानी गारी देहि और करहिं न पानी[1]

खरिका प्रथा :

सूफी कवियों ने भारतीय परम्परा के अन्तर्गत छोटी से छोटी प्रथाओं पर ध्यान दिया है। विवाह के समय ज्यौनार के पश्चात् खरिका देने की प्रथा है। जिसमें दो सम्बन्धी स्नेह बन्धन में बंधते हैं।

"जेइ बाँधि के खरिका लेई, हाथ पखारि पान पुनि देई"

कंकन बांधने की प्रथा :

विवाह की रीति में हल्दी के पुटली को सूत्र में बांध कर वर और वधू के कलाई में बांधते हैं।

"कंकन राज कुवंर कर बांधा"[2]

जनवासा प्रथा :

"जनवासा जंह राज दरबारा, तहवां आनि बरात उतारा"[3]

गौना प्रथा :

"अब तुम्ह करब तहाँ कर गौना, जहां क सन्देश न पावै सौना"[4]

1- मधुमालती पृ0 31 छ॰ 445

2- मधुमालती पृ0 339 छ॰ 385

3- मधुमालती पृ0 210, छ॰ 554

4- चित्रावली पृ0 130

कोहबर प्रथा :

चित्रावली में कवि ने कोहबर का वर्णन किया है।

"आस पास सब घेरे अली, सुन्दरि कह कोहबर ले चली"[1]

खट्वाट् की प्रथा :

नायिकायें को जब किसी बात को मनवाना होता था तो वे खट्वाट लेती है बिना आहार ग्रहण किये सूफी कवियों ने इसका वर्णन किया है।

लै खट्वाटू पड़ी वह रानी, कुवंर सुना नहीं नीव सुखनी
सभा बटोर मंदिर महं आवा, देखत फिरि मैं औ चलावा।
लइ खट् वाट् परी दुहु रानी, चुल्ही आग न गागर पानी।[2]

देवीपात्र लक्ष्मी भी लक्ष्मी समुद्र खण्ड में अपनी बात मनवाने के लिए खट्वाट् लेती है।

मै तोहि लाग लेहू खट्वाट् खोजहि पिता जहाँ लगि घाटू।[3]

दायज प्रथा :

जायसी ने अपनी पुत्री को दहेज दिया है जो लिखा नहीं जा सकता।

दायज कहौ कहा लगि लिखि न जाइ जत दीन्ह
रतन सेन जब दायज पावा, गंधर्व सेन आइ सिर नावा।[4]

1- चित्रावली पृ0 115
2- मृगावती पृ0 381, छ. 404
3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 162 छ. 7
4- जायसी ग्रन्थावली पृ0 370 छ. 303

मधुमालती को दहेज में सहस्त्रों चेरियां दी गई और मेघ के समान मस्त हाथी, आभूषण भरी हुयी झांपियां दी गई जिसे सारा संसार देखा।

"चेरी सहस सो संघ चलाई, जिन देखिय चांद मुख आई,
औ मैमन्त गज मेघ समाना दायज दीन्ह जगत सब जाना"
अभरन्ह सभै जरायन्ह जरा, झांपिन्ह सहज झाँपि के धरा[1]

चंदायन में चांदा को भी दहेज दिया गया है जिसमें पशु और रसोई के समस्त खाद्य पदार्थ, सहस्त्रों चेरियां दी गयी है।

"दायज गांव बीस दायज बांधि, फीनस एक दरब भरि लाये,
चेरी एक सहस अस पावा, गाय भैंस नहि गिनत बतावा
चाउर कनक खांड़ घिउ लोन तेल विसवार, लाद टांड़ मुकरावा
वर दे भये असवार"[2]

मृगावती को भी दहेज मिला है। जो आज तक संसार में किसी को नहीं दिया गया है।

"दाइज अस कै दीन्हीं जग असि न दीन्हौ काहु
आधा राज पाट बरिस सहस दस खाहु"[3]

चित्रावली को भी दहेज दिया गया है।

"महत चला ले दायज साजा, चहुं दिसि दुन्द दान कर बाजा"[4]

कनकावती में भी कवि ने दहेज प्रथा का वर्णन किया है।

"आंगन दियो दहेज अपार, लख्यो न जाइ लख्यो करतार"[5]

1- मधुमालती पृ0 400 छं· 455
2- चन्दायन पृ0 104, छं· 44
3- मृगावती पृ0 204, छं· 154
4- चित्रावली पृ0 116
5- सूफी काव्य संग्रह, डा0 परशुराम चतुर्वेदी, पृ0 144

श्रृंगार वस्त्र एवं आभूषण वर्णन :

सूफी कवियों ने अपने काव्य में नारी श्रृंगार के समस्त उपकरणों का वर्णन वृहद रूप में किया है। श्रृंगार के अन्तर्गत ये कवि सोलह श्रृंगार पर अधिक बल दिए हैं। केशव दास ने भी "कवि प्रिया" में सोलह श्रृंगार के नाम दिये हैं।

"प्रथम सकल शुचि मज्जन अमलवास, जाबक सुदेश केस पासनी, सुधारिबो[1]
अंग राग भूषण विविध मुख वास राग कज्जल कलित लोल लोचन
निहारिबो,
बोलनि, हंसनि, चित्त, चातुरी, चलनि चारू पल पल पतिव्रत
परिवारिबो,
येहि विधि सोरह श्रृंगार बखानिबो"

सूफी कवियों ने श्रृंगार वर्णन के अन्तर्गत बारह-सोलह का वर्णन किया है- जो फारसी शैली के अनुरूप हैं फारसी शैली में बारह सोलह का वर्णन आता है जो सोलह श्रृंगार के अन्तर्गत है।[1]

"अस बारह, सोरह धनि साजे" - आभूषण बारह हैं इसलिए कवियों ने बारह-सोलह का वर्णन किया है। जायसी की पद्मावती सोलह श्रृंगार से लसित है।

"बारह अभरन सोलह श्रृंगारा,
तेहिं सो नहिं ससि उजियारा"[2]

1- हिन्दी फारसी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन -
डा० श्री निवास वर्मा -- पृ० 75।

2- जायसी ग्रन्थावली पृ० 147

मंझन को मधुमालती भी सोलह श्रृंगार पूर्ण है, यहाँ कवि ने नौ, सात की गणना की है। नौ-सात बराबर सोलह श्रृंगार।

नौ सात साजे, बाला निभरम सुख सेज,
धेह परिहरेउ कुवंर, चित देखि हरेउ वुधि तेज"[1]

उसमान की चित्रावली भी बारह सोलह के अनुपात से अपना श्रृंगार की है।

"बारह सोलह साज बनाये"[2]
नौसत कै चित्रावली आनी।

आभूषण:

सूफी कवियों के नायिकाओं के आभूषण पारम्परिक हैं। सलोनी, वीर, सिकरी खूंटी, पायल आदि। चंदायन की नायिका समस्त आभूषणों से युक्त है।

"एक बीर नगुला पेई टूट सलोनी मानिक फूटा सबहीं टूट दहादिसि भई,
उखार खूंटि दुइ दिसि भरो, मानिक हीर पदारथ जरी"[3]

चित्रावली भी आभूषण युक्त है।

"सरबन खुटिला बने सभागे, जनु गुरु सुक सखन ससि लागे,
कटि किंकिनि धुनि सुनि मन मोहै, चूरा चमकि बाँधि धन सोहै,
शीश फूल कच ऊपरि बासा, बेसरि सरिन काहु कंह छाजा"[4]

1- मधुमाली पृ0 60
2- चित्रावली पृ0 114
3- चंदायन छ. 626पृ.
4- चित्रावली पृ0 69

पद्मावती भी आभूषणों से शुशोभित है।

"का बरनौ अमरन औहारा, ससि पहिरै नखतन के मारा
चीर चारू औ चंदन चोला, हरि हार नग लागि अमोला"[1]

मृगावती मृगी रूप में भी आभूषण पहने है।

"चूरा नेउर पहिरी सोई"
"बारह अबरन पहिरि संवारी, अति सरूप भरि जोवन बारी"[2]

कासिम शाह की जवाहर भी आभूषण युक्त है।

कंठ माल सोहे बिच लरी
हाथ नखत गूण मंग मोती,
बाजू बंद कर कंगन लाई
कनक अंगूठी रात नगीने,
पायल बाजत सोह सुहाउ
सिंगार सोरहो पूरन नारी,।[3]

वस्त्र वर्णन :

सूफी काव्यों में वस्त्रों का वर्णन कवियों ने किया है जिसमें विभिन्न प्रकार के वस्त्रों एवं साड़ियों के नाम हैं। कंचुकि छायल वेद, फुंदियाँ कसनी, घांघरा साड़ियों में डोरिया गुजराती, चौकरिया, मोंडला चुनरो मूगियाँ मघवना चंदरौटा, छिवभेदक आदि वस्त्रों का नाम आया है।

1- जायसी ग्रन्थावली छं० 318
2- मृगावती छं० 21
3- हंस जवाहर पृ0 90

चंदा के वस्त्र :

> सुनहु चीर कस पहिरो गुवारी, फुंदियाँ राध सिंधुरिया सारी[1]
> पहिरि मघवना और मसियारा, चकवा, चीर, चौकरिया, सारा,
> मूगियां, पटल, अंग चढ़ाई, और मंडिला मयर हिराई,
> मानो चांद कुसुंभी राती, एक खण्ड छाप सोह गुजराती।
> डोरिया चंदरौटा और बुखारु, राज पटौरे बहुल सिंगारु

पद्मावती में विभिन्न वस्त्रों का विवरण है।

> पुनि बहु चीर आनि सब छोरी, सारो कंचुकि लहर पटोरी[2]
> फुंदियाँ और कसनिया राती, छायल बंद लाय गुजराती
> चिकवा चीर मघौना लोने, मोती लाग औ छापे सोने।
> सुरंग चीर भर सिंघल दीपी, कीन्ह जो छाप धनी वह दीपी
> पंचडोरिया औ चौधारी, साम नित पीयर हरियारी
> चंदनौटा औ खरपुक भारी, बास पूर झिलमिल कैसारी।

चित्रावली का वस्त्र –

> तन गुजराती चीर अमोला, लहर लेइ जनु उदधि डोला।[3]

मृगावती – अभरन सबै कपूर कर दीन्हा, घाघरी बाँधि आइ पग दीन्हा[4]

जवाहर की सारी –

> "गुजरी जोरा रतन जड़ाउ"[5]

1– चंदायन पृ0 128, छ॰ 93
2– जायसी ग्रन्थावली, पृ0 333 छ॰ 93
3– चित्रावली पृ0 69
4– मृगावती पृ0 289, छ॰ 255
5– हंस जवाहर पृ0 90

त्योहार :

सूफी काव्यों में दीवाली का पर्व बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है इसमें नायिकाएं झूमक गाती हैं चांचर गीत बड़े उत्साह से गाकर अपने हर्षोल्लास को प्रगट करती हैं। चंदायन, पद्मावत आदि में इन त्योहारों का उल्लेख है। नायिका नागमती वियोगावस्था में इन त्योहारों का संकेत देकर संसार के सुख का अपने दुख से समता करती है।

होइ फागभलि चाचर जोरी, बिरह जराइ दीह जस होरी[1]

सखी माने त्योहार सब गाइ देवारी खेलि[2]
हौंका गावौं कंत बिन चिनु रही छार सिर मेलि।

चंदायन प्रसन्नता है -

कार्तिक परब देवारी आई, वार परे ऋतु खेलन आई[3]
चांद चित्रपति कीन्ह हंकारी, अपहु देखे जाहि देवारी
अखत चांद लेइ चली जहाँ, जाइ देवारी खेलै जहाँ।

जवाहर को भी चाचंर अच्छा नहीं लग रहा ।

चहुं दिसि-चाचंर होहि धमारी हौ सो रहहि दार सिर धारी[4]

शिवरात्री - अलप दिनै आवै शिवरात्रि

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 334, छ. 358

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 451, छ. 371

3- चंदायन पृ0 183, छ. 175

4- हंस जवाहर पृ0 132

निष्कर्ष

अस्तु सूफी काव्य में सूफी कवियों ने भारतीय परम्परा के अनुरूप अपने काव्य में नारी स्वरूप की परिकल्पना की है कवियों ने नारी को देवी स्वरूप अवश्य माना है किन्तु वे कन्या की स्थिति अपने काव्य में अत्यन्त त्याज बना दिये हैं कवि कन्याओं का जन्मोत्सव तो अत्यन्त धूमधाम से मनाते है।

किन्तु कन्या का पिता के घर के आठ वर्ष की होने के बाद न रहना इस रहने से अच्छा है कि वह यमलोक में ही रहे अर्थात् मर जायें।[1] यह पापिन है इस प्रकार के स्वरूप का विवेचन देखकर कवि की नारी के प्रति श्रद्धा या ब्रहम स्वरूप की बात पल्ले नहीं पड़ती।

सूफी कवि मां के द्वारा बेटी को शिक्षा देते समय एक बात पर अधिक बल देते हैं कि आंगन में न निकलना यदि निकलना तो रात्रि होने पर[2] या तुम्हारी कितनी भी हानि हो पति की सेवा करना, कवि स्वसुर गृह वधू नही भेजते ऐसा लगता है कन्या को हृदयहीन भावनाओं से शून्य काठ की पुतलियाँ बनाकर भेजते हैं, सास कितनी भी गाली क्यों न दें, उसका प्रत्युत्तर न दो उसके गाली को अपने सिर पर धारण करो।[3]

किन्तु कवियों के भारतीय परम्परा में पति-पत्नी के दोनों के प्रेम का चित्रण गार्हस्थ्य जीवन के नीव को अवश्य मजबूत आधार देता है।

हिन्दी प्रेम काव्यों में सम्पूर्ण समर्पण पति सेवा की जो प्रतिष्ठा है। लोक और समाज मर्यादा का जो आदर्श विधान है। एक निष्ठ प्रेम की जो अविछिन्नता है। वैयक्तिक शील की जो सुषमा है कर्तव्य निष्ठा चेतना

1- मधुमालती पृ0 344

2- चित्रावली पृ0 120

3- चित्रावली पृ0 120, छ० 48

और वीर कर्म की जो प्रधानता है। माता पिता गुरूजनों की महिमा धर्मशीलताका जो व्याख्यान है। वह सूफी की लोकमंगल विधायक धर्म-संस्थापक, समाज मर्यादा का पुनरोद्धारक, आदर्श वैयक्तिक जीवन की पथ प्रदर्शक है।' इस प्रकार इन सूफी साधकों ने प्रेम सौन्दर्य चित्रण में ही न उलझ कर समाज, परिवार सम्बन्धी आदि का भी आदर्श चित्रण किया है। 1

1- भक्ति काव्य में माधुर्य भाव का स्वरूप पृ0 151, डा0 जयनाथ नलिन।

चतुर्थ "अध्याय"

श्रृंगार एवं अन्य रस

(अ) संयोग श्रृंगार

(आ) वियोग श्रृंगार

(इ) ऋतु वर्णन

(ई) रस

संयोग श्रृंगार वर्णन :

संयोग श्रृंगार वर्णन में कवि की मनोवृत्ति स्थूल परक है। यहां कवि ने संयोग श्रृंगार पक्ष में उन सभी चेष्टाओं भावों हावों संचारियों एवं अनुभावों का चित्रण किया है, जो रतिभाव को बिम्ब रूप देते हैं। इनके संयोग चित्रण में वे सभी उपकरण हैं। जो श्रृंगार रति को पूर्ण एवं पुष्ट आधार देते हैं। इन कवियों का संयोग-वर्णन आंगिक अधिक है, मानसिक या भावात्मक कम,

संयोग श्रृंगार पक्ष के अन्तर्गत कवि उन सभी उपकरणों का नियोजन करता है जो रति भाव को बिम्ब रूप देते हैं। जो रसानुभूति के आवश्यक तत्व हैं। इसके अन्तर्गत लज्जा, क्रीड़ा, संकोच विनोद, चपलता आदि हैं। आंगिक भाव के अन्तर्गत चुम्बन, कटाक्ष, छेड़छाड़ अनुनय आदि पूरी पूरी मात्रा में मिल जायेंगे।[1]

लज्जा के रूप :

लाज न पारो कहि सखि आगे[2]

चिकुर सकोरहु बाला छिनकर उदय कराइ[3]

गहि बाह धनि सेजवा आनी, अंचल ओट रही छपिरानी

सकुचै डर मनहि मन बारी, गहु न हाथरे जोगी भिखारी।[4]

1- भक्ति काव्य में माधुर्य भाव, जयनाथ नलिन पृ0 140

2- मधुमालती पृ0 97

3- मधुमालती पृ0 98

4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 133

उपर्युक्त उद्धरण में नायिका की लज्जा क्रीड़ा, चंचलता, संकोच भय विब्बोक आदि दृष्टव्य है।

रतिभाव की तीन अवस्थाएं होती हैं। उदय, साधना एवं सिद्धि। आलम्बन के प्रथम परिचय रूप, गुण, श्रवण, चित्र दर्शन और साहचर्य से रति भाव का उदय होता है। उसे पाने का, चिरस्थायी साहचर्य प्राप्त करने का प्रयत्न और विरह, साधनावस्था है। मिलन और सम्भोग रति की सिद्धावस्था है।[1]

जायसी संयोग चित्रण करते समय विलास-लास से लसित केलि क्रीड़ा का स्थूल वर्णन करते हैं। रूपक के माध्यम से केलि क्रीड़ा को वे वीर रस में दर्शाते हैं। नायिका के समस्त आभूषण, केश, मांग सभी ध्वस्त हो गये हैं।

"कहौ जूझि जस रावन रामा, सेज विधांसि विरह संग्रामा,
लूटे अंग-अंग सब भेसा, छूटी मंग भंग भै केसा
कंचुकि चूर-चूर नौ ताने, टूटे हार मोती छहराने,
चंदन अंग छूट जस भेंटी, बेसरि टूटि तिलक गा मेटी"[2]

उसमान कवि ने चित्रावली का प्रथम संयोग का चित्रण मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है। प्रिय के सानिध्य में पहुँचकर प्रिया के सारे कल, बल छल लुप्तप्राय हो जाता है। वह सहमी हुई है, और उसके चेहरे पर भय-

---

1- भक्ति काव्य में माधुर्यभाव पृ० 126

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 127 छ० 33

मिश्रित माधुर्य व्याप्त है।

"पाटी तर ठाढ़ होइ रही" में शीलवती नारी का चरित्र दृष्टव्य है।

"प्रथम समागम बाला डरई, बैसे आगे पांव न धरई –
आइ सकुचित पांव जनु धरा, परगाहि परग होइ अरगरा,
कल, बल, छल गइ सेज जंह अही, पाटी तीर ठाढ़ि होइ रही,
सेज सुरंग जंह नदि बहै, चित्रनी छुवै न पांव" [1]

जवाहर जब अपने प्रिय का संयोग दर्शन करती है, उल्लसित हो उठती है उसके हृदय में प्रेम का संचरण होने लगता है। मदन उसके अन्तर में काम जगाने लगता है।

"हुलसे नैन प्रेम रस माते, हुलसे अधर अमीरस राते,
हुलसे पियर बदन भइ राती, हुलसे दसन विजय की भांती
हुलसा बदन, मदन तंह ताका, हुलसा प्रान पाप दुख भागा [2]

मधुमालती का मिलन सरस है, और वैशिष्ट्य पूर्ण है, नारी की समर्पण भावना में भी भारतीय नारी का लाज संकोच, और अवगुंठन परिलक्षित होता है।

"अहे जो लोचन आस तिसाये, दुहूं प्रिया रस रूप अघाये
दगधि हिये दुहूं केरि जुड़ानी, मिलन उरहि उर तपित सिरानी" [3]

1– चित्रावली पृ० 128–29 छ· 527

2– हंस जवाहर पृ० 68

3– मधुमालती छ· 448

इनके मिलन में शारीरिक आकर्षण नहीं, बल्कि आत्मा का मिलन है।

नैन नैन सेंउ लोभे, मन सेउ मन अरुझान,

दुऔ हिए मिलि एक भै, भजियहुं प्रानहि प्रान[1]

कान्हावत में भी मधुमालती जैसा आत्मापरक संयोग है। मधुमालती का भी संयोग के समय एक दूसरे से नैन से नैन उलझते हैं और यही परिकल्पना कान्हावत में की है।

नायक नायिका प्रसन्नता पूर्वक एक साथ संयोग सुख का आनन्द लेते हैं। कोई मान मनुहार नही है, सीधा समर्पण भाव दोनों ओर है, कोई अन्तर नहीं है।

"विहंसि दोउ सुख सेजवा चढ़े मान संजोग दई जस गढ़े

गहसि ओठ संकि मन बाला, डोले जइस चंपक माला"[2]

जायसी अपनी नायिका को "जनु चंपा गहि डार ओहाई" निरूपित करते हैं। कान्हावत के नायक नायिका एकाकार हो जाते हैं अन्तर नहीं है।

"कन्ह छवो रस प्रेम बढ़ावा, चंद तन केइ रस भोग मिलावा,

मन सो मन, तन सो तन जहां, होइ गए एक न अन्तर रहा"[3]

संयोग सिंगार का वर्णन करते हुये कवि जायसी, शरद ऋतु की दिशाओं, निर्मल आकाश, तारों भरी चांदनी, रात्रि फूली हुयी प्राकृतिक बनस्पति सुगन्ध का मोहक वर्णन, ललित वर्णो की योजना करते हुये किया है, जिसमें माधुर्य गुण का आस्वाद है।

1- मधुमालती पृ० छ. 448

2- कान्हावत छ. 266, 3. कान्हावत छ. 266

"आइ शरद ऋतु अधिक पियारी, आसिन कातिक ऋतु अतिन्यारी
पद्मावति भइ पूनिउं कला, चौदसिं चांद उइ सिंघला,
सोरह कला सिंगार बनावा, नखत भर सूरुज सोस पावा
भा निरमल सब धरती अकासू, सेज संवारि कीन्ह फुलबासू" [1]

इसी प्रकार अनुराग बांसुरी में नूर मुहम्मद ने सर्व मंगला एवं अन्तःकरण, जो कि दोनों ही अनन्य प्रेमी-प्रेमिका हैं उनमें वे कल्पना करके प्रेमाभाव से संयोग में लीन होते हैं।

"चित्त नैन मो रह्यो समाई औहि सुन्दर की सुन्दर ताई,
नैन चढ़े चित बरुनि चुभी, बरुनि चुभति गड़ि गई खुभी" [2]

जायसी के काव्य का संयोग श्रृंगार को समझने के लिये सभी वर्णित काव्यों में संयोग श्रृंगार का अनुशीलनअपेक्षित है - नारी पति के अखण्डित प्रेम के लिये *अपना* सब कुछ न्योछावर कर देती है। कालिदास ने कुमार संभव में "अखण्डित प्रेम लभस्य पत्युः तथा स्त्रीणां प्रियालोक फला ही वेशः" उसी परम्परा में जायसी कहते हैं-क्रीड़ा से पति को संतोष मिलता है, वह प्रिय का संतोष ही नारी का धन है वही उसके लिये मोक्ष है।[3]

"किरिरा काम केलि मनुहारी, किरिरा जेहिं नहिं सो न सुनारी
किरिरा होई कंतकर तोखू, किरिरा किहे पाव धन भोखू
जेहिं किरिरा सो सोहाग-सोहागी चंदन जैस स्याम कंठ लागी" [4]

1- पद्मावत पृ0 135 छ. 8
2- सूफी काव्य संग्रह पृ0 172 छ. 1, परशुराम चतुर्वेदी
3- जायसी काव्य प्रतिभा और संरचना, पृ0 154-55
4- जायसी ग्रन्थावली छ. 317

सूफी कवि गिरही थे इन्होंने गृहस्थी के सुख का वर्णन किया है हिन्दी का सारा श्रृंगार एक तराजू पर और दूसरे पर इस सूफी रसिक कवियों की सरसता रखिये। यह मानना पड़ेगा कि सूर से लेकर आज तक यह मधुर रस की धारा कोई नहीं बहा सका है।

पद्मावती का संयोग पश्चात् चित्रण दर्शनीय है।

लीन्ह लंक कंचनगढ़ टूटा, कीन्ह सिंगार आह सब लूटा
औ जोबन मैमत विधंसा, बिचला विरह जीव लै नसा
लुटे अंग-अंग सब भेसा, छूटी मांग भंग भई केसा।[2]

मिलन प्रयास के अन्तर्गत प्रेमी युगल ताम्बूल इत्यादि का आदान-प्रदान करते हैं चंदायन में इसका संकेत है। नारी प्रिय को यौवन देकर कृतार्थ होती है। चांदा लोर का संयोग चित्रण कवि ने अत्यन्त स्थूल परक किया है।

"पैठि भुजंग राइ के बारी, फूल कली रस लेइ फुलवारी
डार डार चहुं दिसि फिरि आवै, खटै दाख बेलि फिर रावै,
खै नारिंग उतुंग जंभीरी, विरसै नारंग दारिउं खीरी
चन्दन कूप नासिका लावै, बासु लेइ औ सीस चढ़ावै"[3]

चौदहवीं शताब्दी का कवि दाउद इन सभी कवियों का मुखिया है, उसकी

2- जायसी ग्रन्थावली छ. 318

3- चंदायन पृ0 217

कोमलता, मधुरता अप्रतिम है। इन कवियों के द्वारा अवधि का सामर्थ्य कितना अधिक विकास पा गया था, इन सूफी कवियों के देन का मूल्यांकन अभी भी चांदा लोर मिलन खण्ड में संयोग समाधि सुख का जो वर्णन है, दृष्टव्य है। वह अविस्मरणीय है।[1]

चांद लोर को गले लगा लेती है, वह कहती है कि जो तुमने या मैंने दुख सहा है वह तुम्हारी परीक्षा के तहत ही था, अब मैं अपने प्राण तुम्हारे ऊपर निछावर करती हूँ। मैं तुम्हारी दासी होकर तुम्हारी सेवा करूँगी। इन अधरों के रस एवं नेत्रों के धूल आंसू द्वारा सानकर हृदय के थाल में कुचरूपी लड्डु भर कर तुम्हारे आगे परोस रही हूँ। अब इन पुष्पों से खचित सेज को तुम चन्दन समान कर दो (पीस डालो) अपने दोनों करो से मेरे पयोधर लो और अधर रस का पान करो। इस प्रकार का समर्पण अनिर्वचनीय है। साथ ही थोर स्थूल परक एवं आसक्ति वर्णन है।

"सुनि कै चांद भीरि गिय लावा, सकति रूप मेरे को आवा,

जिन्ह नित भरन गंजन जो सहा, सो परिछि तस ताकर कहा"[2]

जायसी के पूर्व कुतुबन ने जो मृगावती में संयोग का चित्र खीचा है वह भी मार्मिक है। मृगावती कहती है -

हमने तुम्हारे लिये कितना दुःख सहा है मैंने तुम्हारे लिये यौवन फल को कितना सजोकर छाये में रखा है, उसे किसीने अभी तक चखा नही ऐसा कोई भ्रमर नहीं जो उसका आस्वाद ले सके। पवन उसे छू नहीं सका

1- जायसी काव्य प्रतिभा और संरचना पृ0 156

2- चन्दायन पृ0 215

वह अपने यौवन की बगिया के दाड़िम, नारंगी, किसमिस, जंभीरी सभी कुछ विलास करने के लिये समर्पित करती है निःसंकोच निर्विकार और स्वच्छंद भाव से जिसकी रक्षा उसने "राखिउं छाँहा" में किया था।

"तिहिण पलग सेज सवारी, मिरगावती बैठि धन बारी
चलहुं सेज पसु वहुं बैठहुं, तू हे पुरुष हों नारी"

"हम लगि एत दुख देखेउ नाहां, बेरसउं सो फल राखेहुं छांहा।
पवन न लाग सूर पह राखेहुं, बसं अमर भंवरा नहि चाखेऊ
दारिउं नारंग दाख जंभीरा, बेरसउ तुम्ह आगे हम नीरा।"[1]

इस प्रकार नारी अपने संयोग का सुख अपने प्रिय को देती है। सूफी काव्य में नायिकाएं अत्यन्त समर्पिता प्राय है उनमें सर्वस्व अर्पण करने की भावना है ऐसे रस का लोभी भ्रमर इस रस को छोड़कर अन्यत्र कहां जाये।

जवाहर का संयोग भी जायसी की कल्पना जैसा है। किन्तु इसमें स्थूलता का अभाव है। समर्पण पूर्ण रूप से नायिका द्वारा है।

कर आगे पीतम रस पावै, कर आगे धन सखी जनावै
कर आगे पिउ पावै सांसा, कर आगे धन पाउ हुलासा[2]

जवाहर कमल कलिका सदृश है प्रेमी भ्रमर यौवन रस से भरी कली पवन द्वारा अपने यौवन पराग को प्रसारित करती है। भ्रमर प्रेमी उस सुवास

1- मृगावती पृ० 263, छ• 235

2- हंस जवाहर पृ० 184

को आस्वाद कर नायिका के निकट आता है और उसका समस्त यौवन रस लेना चाहता है।

> कमल कली यौवन करी पवन तारूतहदीन्ह
> सो मधुकर कर लाग के सबै चहै रस लीन[1]

सूफी कवि संयोग पश्चात् नायिका के मलिन स्वरूप का चित्रण अवश्य करते हैं। जायसी ने भी पद्मावती को "निरंग" कहा है। उसमान की नायिका प्रथम तो मतवाली होती है किन्तु संयोग सुख के पश्चात् अचेत होती है, सम्हालने से भी नहीं सम्हलती है।

जायसी की कल्पना में रावण युद्ध के पश्चात् नायिका का अस्त-व्यस्त होना है जिसमें कठोरता का परिपाक अधिक है किन्तु जवाहर का प्रेमी भ्रमर है उसने नायिका का सारा रस ले लिया है। उसका मात्र आभूषण अस्त व्यस्त हो जाता है।

> धन पिउ संग भई मतवारी भई अचेत पुनि नाहीं संभारी
> भंवर जो सोख कवल रस लीन्हा अभरन रंग भंग कर दीन्हा
> छिटकी मांग छिटक गये बारा टूटि गा गजमुक्ता हारा
> छुटिगा बंद जो छतियन बाधें खुलिगै पायन पायल बाजै
> ठावउं-ठावं मसक गये जोरा जहं जहं हाथ कंत गहि बोरा[2]

जवाहर हंस के समीप आती है दोनों की एक दूसरे से दृष्टि मिलती है, नायिका चकोरी हो जाती है और नायक चकोर हो जाता

1- हंस जवाहर पृ0 184

2- हंस जवाहर पृ0 184

है दोनों का प्रेम बराबर है।

"आई निकट सेज जो गोरी, मोंहाभान सो देखा गोरी,

गई जब मोहि देखि पिउ ओरा, पिउ छवि देखि सो भयउं चकोरा

वह रूप सिंगार लुभाना, वह-वह के मन मांहि समाना।"[1]

इस संयोग चित्रण में दाम्पत्य भाव का सुन्दर निदर्शन है। वासना का प्रबल उद्वेग नहीं है। वे पहले एक दूसरे के हाल पूछते हैं, तत्पश्चात् अंग लगते हैं।

"तब गहि बांह सेज बैठाई, मानों किंशुक डार ओनाई

प्रथमै हंस गहा जो बाहीं, तबही धन हुलसी हिय माहीं,

बैठी संग भानु के संगा, पूछै लाग बात दे अंगा"[2]

जवाहर का स्वप्न वाले अवतरण में संयोग चित्रण :-

"तुम जस धन चाहै वै मोहीं, तेहि ते अधिक चाह मैं तोहीं

जस तुम्ह लागि रही मम आसा, तस मैं रह्यो सदा तुम्ह पासा,

जस तुम ध्यान धरौ हिय माहीं, तस मैं तोहिं बिसार्यो नाहीं"[3]

नायिका जवाहर का संयोग वर्णन कवि ने अप्रस्तुत के माध्यम से किया है, जो मर्यादित है।

"हुलसा कंत लीन्ह हिय लाई, बिरहिन सेज कंत के आई,

मधुकर विंहसि कंवल गर लागा, मिलन सनेह विरह दुख भागा,

पंकज पात भवंर जिमि गीधा, कनक तार गज मुक्ता बींधा।[4]

1- हंस जवाहर पृ0 90

2- हंस जवाहर पृ0 91

3- सूफी काव्य संग्रह पृ0 156-57 परशुराम चतुर्वेदी

4- हंस जवाहर पृ0 185

चित्रावली का प्रथम समागम कवि ने बड़ी चातुर्य निपुणता से किया है। संकोच, भय सारी चतुरता किस प्रकार समाप्त हो जाती है। प्रिय सामीप्य में इसकी परिकल्पना अवर्णनीय है।

सूफी नायिकाएं समर्पण भावना से ओत प्रोत हैं पद्मावत में जायसी ने पति के लिये पत्नी को पूर्ण समर्पित कर दिया है वह पति के लिये ही बनी है तभी तो वह कहती है -

पिउ आयसु माथे पर लेउ, जो मागै नई-नई सिर देउ[1]

वह प्रिय-विलास से श्रमसिक्त हो गयी है फिर भी विरोध न प्रकट करके रस सिक्त वाणी में कहती है -

पै पिय एक बचन सुनु मोरा चाखु मधु पिय थोरई थोरा[2]

कान्हावत में संयोग की परिकल्पना जायसी ने भ्रमर के माध्यम से की है।

"पैठि भंवर फुलवारी बारी, करइ भोग रति केलि"[3]

यही कल्पना दाउद ने भी की है -

"पैठि भुजंगु राई की बारी, फूलकरो रस लै फुलवारी"[4]

कुतुवन ने मृगावती में कल्पना की है -

"कवल घानि भंवरा निसि रहा, जाइ न जाई प्रेम रस गहा,

भवंर बास परिमल सब लिया, और सब अमिय महा रस पिया"[5]

1- पद्मावत पृ0 416, छ. 341   2- पद्मावत पृ0 416 छ. 341

4- चन्दायन पृ0 217   3- कान्हावत पृ0 226

5- मृगावती पृ0 238

चित्रावली का कवि उसमान ने संयोग-केलि की पूर्ण व्यंजना किया है।

"घूंघट खोलि रूप अस देखा, सो देखा जेहिं सीस सुरेखा,
अधर घूंट सो अमिरित पिया, जेंहि के प्रिय अमर भा हीया,
राहु गरास कलानिधि कांपा लोचन दल आनन पट झांपा,
पुनि मन मथ रति फागु संवारी, खोलि अछूत कनक पिचकारी"[1]

नायिका वियोग श्रृंगार :

सूफी काव्य में संयोग की अपेक्षा वियोग वर्णन की अधिकता है कवि वियोग वर्णन के माध्यम से नायिकाओं के प्रेम की तीव्रता को व्यंजित किया है वियोग से ही प्रेम परिपक्व होता है।

इन कवियों ने "विरह प्रेम की जागृत गति है" और सुषुप्ति मिलन है" के सिद्वान्त को स्वीकार किया है। विरह का अनुभव किये बिना संयोग का आनन्द प्राप्त नहीं हो सकता, अतः 'वस्ल' या 'मिलन' के लिये वियोग आवश्यक है। प्रेमाख्यानक काव्य के कवि वियोग में ही मगन रहते हैं।

सूफी नायिकाओं का विरह प्रवास मूलक एवं ईर्ष्या जन्य है। साहित्य शास्त्रियों ने विप्रलम्भ श्रृंगार के कई भेद माने हैं।

अ) अभिलाषा हेतुक, (पूर्व राग)

आ) ईर्ष्या हेतुक। (प्रवास विरह)

इ) करूणात्मक विरह।

1- चित्रावली पृ० 204

अभिलाषा हेतुक विप्रलम्भ के अन्तर्गत पूर्व राग की गणना होती है, जिसकी उत्पत्ति स्वप्न दर्शन, गुण, श्रवण, एवं साक्षात् दर्शन से होती है।

ईर्ष्या हेतु विरह मान के समय होता है, जिसका किंचित वर्णन नायक के सपत्निरत होने पर पाया जाता है। किन्तु उसका शीघ्र ही समाधान हो जाता है यह विरह क्षणिक होता है।

प्रवास विरह भी तीन प्रकार का होता है। कार्यवश, भयवश, या शाप वश प्रवास,

सूफी प्रेमाख्यानों में प्रवास विरह की अधिकता है नायक का प्रेमिका के वियोग में योगी होकर निकल जाने पर ही विरही नायिका अपने दुख समस्त प्रकृति से पक्षी से, कहती हुई पूरे वर्ष बिता देती है।

पद्मावती का विरह रत्नसेन के योग के प्रभाव से उत्पन्न होता है वह रत्नसेन के वियोग में सो नहीं पा रही है उसे सुन्दर मुलायम शैय्या केंवांच की तरह चुभती हुई प्रतीत हो रही है। वह प्रिय में एकाकार हो जाना चाहती है।

पद्मावती तेहि जोग संजोगा परी प्रेम बस गहे वियोगा[1]

नींद न परै रैन जो आवा, सेज केंवाच जानु कोउ लावा,

दहै चंद औ चंदन चीरू, दगध करें तन विरह गभीरू

कलप समान रैनि तेहि बाढ़ी, तिल - मिल भर-जुग-अग-जिमि गाढ़ी

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 23।

गहैं बीन मकु रैनि बिहाई, ससि बाहन तहं रहै ओनाई
पुनि धनि सिंह उरेहे लागे, ऐसेहि बिथा रैनि सब जागे
कहं वह मोर कवंल रस लेवा आई परै होइ घिसि परेवा।

यहाँ पद्मावती का विरह वर्णन जायसी ने संस्कृत से चली आती हुई परम्परा के अनुरूप किया है। विद्यापति एवं सूर ने भी उत्प्रेक्षा के द्वारा राधा के विरह का अंकन किया है।

दूर करहु वीना करि धारिबो,[1]
मोहें मृग नाहीं रथ हाक्यो नाहिन होत चन्द को ढरिबो।

एसखि आजु कीसै कौ दुख कहयो न कहु मोपे परै[2]
मन राख्यों को बनु लियो कर, मृग थकि उड़पति नचरै। सूर,

यहां पद्मावती विरह के घने जंगल में अकेली जल रही है उसे कहीं भी मालती पुष्प नही दिखाई पड़ रहा जहां भ्रमर उसके रस का आस्वाद लेने के लिये आये, यहां पद्मावती का विरह अभिलाषा युक्त है वह रत्नसेन से मिलने को तड़प रही है।

परी विरह वश जानहु घेरी, अगम असूझ जहां लगि हेरी[3]
चतुर-दिशा, चितवै जनु भूली, सो बन कहं जहं मालती फूली
कवल भौंर ओहि बन पावै, को मिलाई तन-त पनि बुझावै
अंग अंग अस कवल सरीरा, हिय भा पियर कहै पर पीरा।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 231 राजनाथ शर्मा
2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 231 राजनाथ शर्मा

3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 231 छ• 173

मधुमालती विरह विकल है वह अपने विरह का उद्घाटन अपनी सखी प्रेमा को पत्र द्वारा देती है। मधु का विरह अत्यन्त कष्टकारी है। वह पक्षिणी वेश में अपने प्रिय को देश-विदेश सर्वत्र खोजती है कहीं ऐसी जगह नही है जहां उसने अपने प्रिय को न ढूँढ़ा हो।

गिरि सायर बन-बन फिर हेरा, कतहुं न खोज पाउं ओहि केरा[1]
रह पट्टन जगफिरि उदासा, पै नहिं हिय के पूजी आसा।

मधुमालती पक्षिणी है . इस रूप में वह नायक को कहां कहां नहीं खोजती -

तरू तरू घर-घर देस विदेसा, जन-जन ढूंढ़े राक नरेसा।[2]
कजली बन गोदाबरी, मथुरा गया प्रयाग,
देव द्वारिका औ सब तीरथ फिरि फिरि मांग सोहाग।

वह प्रेम सुरा को पीकर विकल हो उठी है वह अहर्निश अपने प्रिय को खोजती रहती है -

खोजति फिरै विकल दिन राती, प्रेमसुरा ब्याकुल भई मांती[3]

पद्मावती का विरह लौकिकता से भरा हुआ है उसे यौवन उमड़ती हुई गंगा सदृश लग रही है, विरह उसे अंकुश हीन हाथी के समान प्रतीत हो रहा है। उस यौवन रूपी अथाह उदधि में पद्मावती डूब रही है। कोई ऐसा नहीं है जो उसे इस अथाह जल राशि से निकाल सके।

1- मधुमालती पृ0 308, छ॰ 355
2- मधुमालती पृ0 308, छ॰ 355
3- मधुमालती पृ0 356, छ॰ 309

यह विरही हाथी यौवन रूपी बाग की समस्त शाखाओं को तोड़कर नष्ट कर रहा है। यहां पद्मावती नायिका अनंग के प्रकोप से बुद्धिहीन हो गई है उसकी चेतना समाप्त हो गई है। वह धाय के सहयोग की अपेक्षा करती है। पद्मावती यौवन को सरस और मनोरम समझती थी किन्तु अब उसे सब बेसुरा लगता है यौवन के प्रकोप से वह दुखी है।

> जोबन सुनेहु की नवल बसन्तु तेंहि बन परेउं हस्ति मैंमंतु[1]
> अब जोबन बारी को राखा, कुंजर विरह बिधंसे साखा
> मैं जानेउ जोबन रस भोगू, जोबन कठिन संताप वियोगू
> जोबन गरुअ अपेल पहारू सहि न जाइ जोबन करभारू
> जोबन अस मैंमन्त न कोई, नवैं हस्ति जो आंकुसहोई
> जोबन भर भादों जस गंगा, लहरे देइ समाई न अंगा।

पद्मावती विरह में अपनी विवेकशीलता समाप्त कर चुकी है उसे उसकी धाय समझा रही है। जायसी ने पद्मावती के विरह की तीव्रता को अत्यन्त पार्थिव स्वरूप में व्यंजित किया है। पद्मावती जैसी चतुर कुमारी से धाय कहती है। -

> जोबन तुरिय हाँथ गहि लीजिय जहां जायतहं जायन दिजिय[2]
> जोबन जोर मात गज अहै, गहहुं ज्ञान आंकुस जिमि रहै।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 233, छ. 174, राजनाथ शर्मा

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 234, छ. 175

कुतुबन की नायिका 'मृगावती' का बिरह कुवंर के राक्षस द्वारा उठा ले जाने पर उत्पन्न होता है। मृगावती वियोग में सामान्य नारी की तरह विकल हो उठती है। वह अपना संदेश पवन के द्वारा भेजती है। वह कहती है मेरे संदेश को मेरे प्रिय तक पहुंचा दो, वह विपत्ति में है। उसे मेरे अंक में लाकर दे दो इस संदेश में नायिका विकल हो उठती है।

पवन संदेशा लैरे उड़ाई, बुढ़ि भंवर कहिं लिन्हेसि जाई[1]

देखत भवंर विपति बड़ परी, बाधहुं भंवर कमल की करी

अपने संदेश ज्ञापन में वह पवन से कहती है -

पवन भवर सेउं कहेउं संदेशा, जो रे अहा मालती कर भेषा[2]

मालति नाउ सुनत जिउ पावा, रोइ दिहेसि मन घबरावा,

मृगावती प्रिय में एकाकार होने की कामना करती है। यहां आध्यात्मिकता की झलक स्पष्ट परिलक्षित है।

दुहुं चित एकै रत मालति मन मधुकर बसै मधुकर मन मालत।[3]

प्रिय वियोग में चंदा को कुछ अच्छा नहीं लगता, अग्नि की दाहकता से उसका प्रेम गाढ़ा होगा यह सोचकर वह विरहाग्नि में तप कर अन्न जल छोड़कर अपने प्रेम को खरा कर रही है।

अगिनि झार बिनु रंग न होई, जेहि रंग होहि आवहि भर सोई[4]

1- मृगावती पृ0 315 छ. 292
2- मृगावती पृ0 315, छ. 293
3- मृगावती पृ0 315, छ. 293
4- चंदायन पृ0 201, छ. 207

मृगावती कुवंर को राक्षस द्वारा उड़ा ले जाने पर शोक विह्वल हो उठती है। वह कहती है कि ईश्वर ने जैसा चाहा वैसा हुआ।

काह संदेश देउ वह भारी बरसा कियेहु न रहेउ संभारी।[1]

जाइ कहे जस दयी कहावा, काह कहौ कछु कहौं न आवा।

मृगावती प्रिय वियोग में कुछ भी करने को तत्पर है -

मिरगावती कहै का करहुं सरग चाह कोइ कहैत चढउ[2]

जो कोइ कहै अहै पतारा, हनिवंत जैस करो उपकारा।

पद्मावती भी इसी प्रकार कहती है -

"तुम हनुवंत अंगद समदोउ"

जस हनुवंत राघव बंदी छोरी तस तुम्ह मोंर मेरावहु जोरी।[3]

सीता को राम भक्त हनुमान ने ही राम की प्रथम सूचना दी थी और उस-कृश गात सीता को आहार ग्रहण करने की प्रेरणा दी थी।

मत्व स्वामिनों महादेवी मार्तन हत्य कल्पना त्वां नेतुं [4]

मम सामर्थ्य मयैवास्ते पातिव्रते,

नास्ति भट्टार कस्याशा: स्वमेव महीपति: हत्वैत्व रावंण

तस्य-त्वानिष्यति सहश्रिया तत: शरीर संधानरणार्थ महार

ाहार।

नायिका मृगावती को अपने शरीर का भी ध्यान नही है। उसका सिंदूर चंदन सब एकाकार हो गया है।

1- मृगावती पृ0 114 छ. 290

2- मृगावती पृ0 114 छ. 29

3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 छ. 653

4- उत्तर पुराण पृ० 303, श्लोक 371-372, गुणभद्राचार्य।

तुम बिन जिये चैन न लेखा, सिंदूर सेत मागि मैं देखा
काजल रात चंदन भये ताता, सभै अवस्था कहीं न गाथा।
अति वियोग विकली वह दुखी भवंरमाइं मालती जनु सूखी
तो वह चांद कोई नहिं कहहिं उभिसास लैभरि भरि रहहिं।[1]

मधुमालती श्रावण मास में अत्यन्त दुखी है। उसके नेत्र पानी से भरे हुए हैं। उसे प्रकृति प्रतिकूल लगती है।

सावन मास छटा छहरानी, सवंरी प्रेम चखु ओनई पानी[2]
अगम दुख दिन जाइ गाढ़े लोयन मांग जानु होइ बाढ़े
रगत आसू भुई परे जो टूटि, सावन भये ते बीर-बहूटी
सेज सवन औ प्रेम उछाहा, तिहं धन कह जगजीवन लाहा
मैं पिक रूप फिरहु सम बारी, नैन रगत विरहे तन जारी।

चित्रावली भी पूरे वर्ष वियोग विह्वला है आषाढ़ मास के आगमन पर सभी अपने गृह को छा रहे हैं किन्तु नायिका प्रिय विहीना है उसे यह समझना कठिन प्रतीत होता है कि कौन उसका प्रिय है कौन बैरी।

जो एहि माह लागि घर साजा, मोहिं बिनुकंत न छाजन छाजा[3]
नेकु न कोइ विरह धुनि चूनी, भई बिनु तेज थकी अब थूनी।
आजहु आउ समझौं बैरी कहहु कीमित, भोंगि होहिं तू
सवरेसि जोगी काकी मित।

1- मृगावती पृ० 316, छ० 293
2- मधुमालती पृ० 351, छ० 402
3- चित्रावली पृ० 108, छ० 444

संदेश के माध्यम से चित्रावली अपने विरह का उद्घाटन करती है। उसे दो चांद का भ्रम होता है। एक शीतल दूसरा गर्म है।

> कै विधि जग दो चांद निरमयो, एक तातों एक शीतल भयो।[1]
>
> शीतल हुत जो गा तुम संगा, रहो उसन दाहत मम अंगा।

चित्रावली के वियोग की कवि ने सटीक परिकल्पना की है जो अत्यन्त मार्मिक है।

> दुख दगध संतापमिलि पुरा फांद के आइ, विरह अहेरी गुजरंत मन कुरंग कित जाइ।
>
> मदन भुवंग डसे निसि आई, तरनि देख बिस तन छहराई।[2]

वह बारहों महीने विरहिणी है कार्तिक मास में वह सताई गई लगती है उसे प्रकृति की सारी वस्तुयें प्रिय वियोग में प्रतिकूल लगती है। शारदीया का शीतल चांद उसे अंगार सदृश लग रहा है।

> कार्तिक सरद सताई बारा, अमिय बुदं बरखै विखहारा[3]
>
> बिगसहिं कवल वारिते बारा, जनहुं कुमुदनि ससि उजियारा
>
> सरद रैनि सोतरि तेहिं भावै, जो पीतम कंठ लागि विहावै
>
> मोहिं तन विरह अगिनि पर जारा, सरद चांद मोहि सेज अंगारा।

मधुमालती निर्जन वन में अकेली है, भयंकर शीत से भरी रात्रि में वह शाखाओं, डालों पर विकल हो उड़ रही है, उस पर यह विशाल रात्रि

1- चित्रावली पृ0 436, छ. 110

2- चित्रावली पृ0 432, छ. 106

3- मधुमालती पृ0 353, छ. 405

व्यतीत नही हो पा रही है। इस वियोग को वही समझेगा जिसका प्रेम के पश्चात् बिछोह हुआ हो यह प्रेम अत्यन्त कठिन है।

> सुख दिन भांति घटत नित जाई, दुख औ तिल निसदिन अधिकाई[1]
> औ तेहिं पर जुग सम निसि परी, मैं बन डारि डारि एक सरी।
> कठिन पीर यह जानै सोई, प्रेम बिछोह परै जेहि होहिं।

कासिम शाह की नायिका जवाहर को चिन्ता है कि श्रावण मास में मेरी नाव कैसे पार लगेगी उसके नेत्रों का जल अनवरत बढ़ता जा रहा है। वह उस नेत्र जल के अथाह सागर डूब रही है। वर्षा की बूँदे उसे अंगारे जैसी प्रतीत होती है।

> विरह आग वर्षा मंह बरसे बूंद अंगार[2]
> जग शीतल हरिअर भयो, मोहिं जारे करतार।

मधुमालती पक्षी रूप में जब से आई है। वह स्थिर नहीं रह सकी प्रिय ने छोड़ दिया माता ने बन-वास दे दिया, सूर्य आठो प्रहर उसे दग्ध कर रहा है।

> दुखदै पीतम छाड़िगा जननि दीन्ह बनवास[3]
> और रवि आठो में तपा कै मोहिं सिर परगास।

1- मधुमालती पृ० 306, छ० 406

2- हंस जवाहर पृ० 130

3- मधुमालती पृ० 358 छ० 410

दिवस बढ़ा और उसके साथ उसका कष्ट भी बढ़ गया।

बाढ़ी दिवस दुख तन बाढ़ा, बरबसजिउ जाई नहिं काढ़ा[1]
फागुन विरह पवन अधिकाना हमतन जस तरू पात पुराना।

अंधेरी भयानक भाद्रपक्ष की रात्रि नायिका को विरह दावाग्नि के संघात जैसी दारूण प्रतीत हो रही है। पावस ऋतु में वर्षा अपनी पूरी वेग के साथ हो रही है। सर्वत्र अंधेरा है। विरहिणी मधुमालती के प्राण प्रस्थान करना चाहते हैं वह अरण्य पन में नितान्त एकांकी है ऐसी विषम परिस्थिति में भी उसके निर्लज्ज प्राण प्रस्थान नहीं कर रहे हैं।

भादो भरम भयावनि राती, बिरह दवा मोहिं सेज संघाती
सिंघ मघा पावस झकझोरी, प्रेम सलिल दुहुं लोचन ओरी
चहुं दिसि धुमरि घोर घहराने, मैं निज प्रान गौन किये जाने।

मैं आरन बन एक सरि बिरह अधिकजिय पीर
निलज प्रा। अति पापी, तजत जो नाहिं शरीर[2]

चैत्र मास में वनस्पतियां नवीन पल्लव से युक्त हो गई है। डालियां पुष्पों से भर उठी है किन्तु मधुमालती का विरह रूपी पतझड़ संयोग रूपी वसंत में नहीं बदला।

चैतकरी निसरी बन बारी, बनस्पति पहिरै नवसारी[3]
चहु दिसि भां मधुर गुंजारा, पाँखुरि फूल डारिन्ह अनुसारा
कुसुम सीस डारिउ सेंउ काढ़े, तरिवर नों साखा में बाढ़े

1- मधुमालती पृ0 110 छ. 451
2- मधुमालती पृ0 358, छ. 410
3- मधुमालती पृ0 358, छ. 410

फागुन हुते जो तरू पत झारे, ते सभ भयो पैत हरियारे
मोंहिं पतझार जो का बिनु साईं सोच सखी भौला अबताईं।

यहां कवि दाउद की नायिका को भी सेज केवांच की तरह चुभती है वह तड़प रही है और कहती है, लोर मेरे मृत्यु पश्चात् आयेगा फिर कोई लाभ नहीं -

सुरभि अस सेज बइसावहि, चांद मरति लै सुरूज जिआवहि[1]
तउ का करब मरे हुत आवहि, परिकेवद्सेज नहिं भावहिं

और यहां जायसी की पद्मावती पूर्वानुराग रंजिता है उसने प्रेमी के दर्शन तक नहीं किये हैं और अपने प्रिय के योग के प्रभाव से वह उसके प्रेम में आकंठ डूब गई है। यहां पद्मावती के विरह में भावना की प्रधानता है। वह भावना भी कल्पना प्रेरित है। तभी तो कवि की व्यंजना "तेहि जोग संजोगा" में पूर्ण रूप से सन्निहित है। इसे भी सेज केवांच की तरह चुभता है।

पद्मावती तेहिं जोग संजोगा, परी प्रेम बाह गहे वियोगा।[2]
नींद न परै रैनि जो आवा, सेज केंवाच जानु कोउ लावा
दहै चीर औ चंदन चीरू, दगध करै तन बिरह गंभीरू
कलप समान रैनि तेहि बाढ़ी, तिल मिल भर जुग जग जिमिगाढ़ी
गहै बीन मकु रैनि विहाइ, ससि बाहन तहं रहै ओनाई
पुनि धन सिंह उरेहे लागे, ऐसेहि विथा रैनि सब जागे।
कह वह भौंर कवल रस लेवा, आइ परै होइ घिरिन परेवा,

1- चंदायन पृ0 177 छ० 182

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 231, राजनाथ शर्मा

उपर्युक्त दोहे में पद्मावती विकल नायिका की भांति पूरी रात्रि जगती है अपनी विकलता को भूलने के लिए वह कभी वीणा वादन करती है कभी सिंह को चित्रांकित करती है।

यहां जायसी संस्कृत की परम्परा के अनुरूप पद्मावती के विरह की तीव्रता निरूपित करते हैं।

विद्यापति अपनी नायिका के लिये कहते हैं।

दूर करहु बीना कर धारिबो,

मोहें मृग नाहिं रथ हाक्यों नाहिन होत चंद को टारिबे।[1]

चित्रावली का वियोग परेवा के संदेश देने के उपरान्त वर्णित है काव्य में यह इसका विरहिणी स्वरूप ईर्ष्या जन्य है। वह परेवा को बुलाकर अपना संदेश देती है और कहती है। वह प्रिय अत्यन्त निष्ठुर है मुझे प्रेम जाल में डालकर बावली बना गया है और अब कोई खोज खबर भी नहीं ले रहा है।

चित्रावली हंकारि परेवा, कहेसि बखानि नपुंसक सेवा[2]

अब पुनि गवनउ सागर देसा, कहहु जाइ यह मोर संदेशा

ऐ अति निठुर निछोही पीया, मानुष होहीं नपाहन हीया।

जाके सीस ठगौरी डारी तेहिं कैसे एहि भांति बिसारी।

वह अपने विरह का उद्घाटन बड़े कौशल पूर्ण ढंग से करती है। वह आसुओं के समुद्र में डूबने के भय से सोती नहीं है। प्रिय के बिना उसका

1- जायसी ग्रंथावली पृ० 231, राजनाथ शर्मा
2- चित्रावली पृ० 101

हृदय फट नही रहा वह उसके वियोगमें पूरी रात तारों की गणना करके बिता देती है।

> श्याम रैनि देखी जिय डरा, अंगन विरह आगि जनु जरा, [1]
> लोयन सिन्धु थाह को पावे, बुड़िबे कोडर नींद न आवै।
> पिउ बिनु पोढ़ फाटि नहिं छाती, तारे गनत जाइ सब राती।
> चाहौ रास बरग कस बना, बैरी लगन लगन को गना।

उसके विरह की तीव्रता एवं दाहकता से भ्रमर श्याम हो गया है कौया बात की बात में ही काला हो गया उसके विरह में इतनी झार है, कि कुकनु पंक्षी अपनी चिता स्वयं जलाकर आग में बैठ जाता है। नायिका का कष्ट दुख वहीं से प्रारम्भ हुआ है।

> गा गुजग होइ गृह बासा, दहि भा स्याम विरह केसासा [2]
> कियो झंकार विरह के आंचा, बारस भस्म होत तहं बाचा
> कुकंनु पंखी जंह बसे तह प्रकटी यह पीर
> उठी आगि सुनिके हिये लगा सवारै चीर।

चित्रावलीकाविंयोग समस्त वनस्पतियों को प्रभावित किया है। टेसू उसके वियोग से जलकर अंगारे सदृश हो गया है। अनार का हृदय विदीर्ण हो गया है। घुंघुची रक्ताभ हो उठी है। पवन उसकी कथा पत्तों से कहता फिर रहा है जिससे दुखी होकर वे अपने शीश धुन रहे हैं।

1- चित्रावली पृ0 102

2- चित्रावली पृ0 103

वनस्पति सुनि बिथा हमारी, बरहे मास भई पतझारी[1]
टेसू जरि पुनि भयो अंगारा, फरहद आगि डारि सिर जारा।
दारिम हिया फाट सुनि पीरा, पै पिय तोर न लाग सरीरा
भीतर जस खजूर कर बीया, रहै छपान मोर तस हीया।
रोइ रकत घुंघुची भइ दुखी, तजि न बेल रही कर मुखी।
कहत फिर गारूत बिथा पाॅतन सौं बन माँहि
धुनत सीस सुनि सुनि सब पीय ददा तोहिं नाहिं।

चित्रावली अपने गवाक्ष से उन्मादिनी सी हो अपने प्रिय को देखती है। उसे फुलवारी फूल वसंत सब उजाड़ लगता है।

चित्रनि खोल झरोखा बारी, देखे कहां बसंत उजारी[2]
नासो फूल ना सो फूलवारी, दृष्टि परी उकठहिं सब बारी

चित्रावली प्रिय के कठोरता से अत्यन्त दुखी है।

यह कीह कौल कली कुम्भलानी भा रवि अस्त सुखिगा पानी,[3]
जौ जानत वह अस निरदयी, कत हौ प्रीत कर्त घर गई।

जवाहर का विरह वर्णन कथानक में चार स्थानों पर हुआ है। प्रथम बारह मासा से पूर्व स्वप्न दर्शन के पश्चात्, दूसरी बार विवाह पश्चात् परियों द्वारा हंस को जवाहर के पास से उठा ले जाने के बाद तथा तीसरी बार योगिनी द्वारा जवाहरण का हरण करने के पश्चात् तथा अन्त में अपने आपको कटारी मारने के पूर्व का विरह।

1- चित्रावली पृ0 103 सत्य जीवन वर्मा
2- चित्रावली पृ0 72 छ॰ 29 जगमोहन वर्मा
3- चित्रावली पृ0 72 छ॰ 29 जगमोहन वर्मा

इस प्रकार पूरे काव्य में जवाहर का वियोगी स्वरूप अधिक व्यंजित है।

योगिनी द्वारा हरण करने के पश्चात् जवाहर के भय, दुख, एवं आश्चर्य भाव का कवि ने सुन्दर एवं कौशल पूर्ण निरूपण किया है।

खोले नैन मिरगअस लोने, चखु उपनी चितवै चहुँ कोने।[1]

वह वहां जाकर ज्ञान शून्य हो गई है। वह अपने आभरणों को नोचती है अपने समस्त श्रृंगार को निरर्थक समझती है। वह हंससे बिछड़ कर एक पल भी नहीं रह सकती।

भइ बिनु ज्ञान प्रान तजि हांथा, कत है कतं जाउं केहिं साथा;[2]
कर अपघात खसी ते बारा, मुक्तनि लर फेकनि हारा।

नायिका का विरह अत्यन्त तीव्र है, फलतःउसे हरण करने वाले पत्थर बन गये।

"मानुष के सब पाहन गाता"[3]

जवाहर अपने आपको नितान्त अकेली पाती है वह मझंधार में डूब रही है बटमारों के देश में उसे अपना सगी सम्बन्धी प्रिय भाई कोई भी दिखाई नहीं पड़ रहा है।

1- हंस जवाहर पृ0 102

2- हंस जवाहर पृ0 102

3- हंस जवाहर पृ0 102

नहिं ससुरार न नइहरौ ना संग सखी ना पीउ[1]
परी मझंधार महं , को राखे मों जिउ।

नायिका जवाहर पूरे वर्ष दुख से विक्षिप्त रहती है। अब उसे प्रिय के आने की आशा नहीं लग रही है। वह सोचती है कि अब जब मेरे शरीर को विरह खा गया है और होली निकट आ रही है तब तक प्रिय संयोग होगा, अथवा शरीर की राख उसे प्राप्त होगा। नायिकाओं को प्रिय-संयोग की दूर तक कोई आशा नही है।

माघ मास धन ठिठुर रही, विरह खायगा देह[2]
फागुन आइ मिलि कहीं, जब होरी जर खेह,

वह फाल्गुन में उस पत्ते की तरह आशाहीन हो गई है जो वृक्ष से पृथ्वी पर गिर कर निरावलम्ब इधर उधर उड़ता है। उसी प्रकार जवाहर भी प्रिय बिना अपने को अनाथ समझती है।

"टूटे मास अवनि तजिडारी, तस बिनु कंत पर्यौ मंझारी[3]

वैशाख मास में वह आशान्वित हो उठती है वह सोचती है अब तो पंथ सूख गया है प्रिय अब भी नही लौटे। अंतिम में हल्की आशा की किरण शेष है।

बहै लबार उठै जग धूरी, तबहु न पिय फिरा बाट भई झूरी

1- हंस जवाहर पृ० 102

2- हंस जवाहर पृ० 203

3- हंस जवाहर पृ० 203

उपनायिका वियोग श्रृंगार :

नायिकाओं की अपेक्षा सूफी काव्य में कवियों ने उपनायिका के विरह का उद्घाटन अधिक तीव्रता के साथ वर्णित किया है। ये उपनायिकाएं पति द्वारा उपेक्षिता हैं, इनके हृदय में पति का पूर्वानुराग, सपत्नीके लिये असूया भाव, आदि सभी मनोवैज्ञानिक भावनाएं मुखर होकर विरह की अत्यन्त मार्मिक अभिव्यंजना करती हैं।

"जायसी का पद्मावत अपने विरह वर्णन के लिए अद्वितीय है।[1] रानी नागमती का पति रत्नसेन योगी बनकर सिंहलद्वीप निकल पड़ता है। नागमती एकांकी है पति का उपेक्षा भाव उसके मानस को कचोटता है। वह एक सामान्य प्रोषित पतिका नायिका के समान अपने विरह भाव को व्यक्त न करके विरह व्यथा की विपुलता में जैसे लीन होजाना चाहती हो। विरह की यह दारुण पृष्ठभूमि . जायसी के विरह वर्णन को जहां मार्मिक और संवेदशील बनाते हैं, वहीं पति परायणा हिन्दू नारी के सतीत्व भावना समर्पण एवं उत्कर्ष को अधिकाधिक उद्दीप्त भी करते हैं।

नागमती प्रिय वियोगमें चित्तौड़ के पथ पर अपनी आँखें लगाए अनवरत प्रतीक्षा कर रही है।

नागमती चितउर पथ हेरा पिउ जो गयेउ पुनि कीन्ह न फेरा[2], दाउद की मैना भी लोर जिस मार्ग से गया है उधर अपने नेत्रों को लगाये हुए उसी की बाट जोह रही है।

> निस दिन मैनहि रोई विहारे, सब दिन रहहि नैन पंथ लाये[3]
> मकु लोरिक एहि मारग आवहि, कहि पा दिया गइ आजु जनावहि।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 14 संपादक मनमोहन गौतम भूमिका
2- जायसी ग्रन्थावली पृ० 441 छ० 364
3- चंदायन पृ० 337, छ० 239

रूपमती का विरह कवि कुतुबन ने बड़ी चतुरता से व्यंजित किया है। इस निरूपण में कवि नायिका की कृषता, निराशा, अल्पवयस्कता, करूणा का सुन्दर चित्र अंकित किया है। रूपमती विरह से क्षीण प्राय हो चुकी है विरह रूपी सौता उसके यौवन रूपी फल को खाना चाहता है किन्तु अब उसे इतनी शक्ति नही की उस विरह-सुये को उड़ाकर अपने सत की रक्षा कर सके।

> विरह सुवा फल खावै चाहा, अब बूते नहिं जाय उड़ावा, [1]
> कब लगि विरह उड़ावों नाहां, अलपवयस सत रहै नलाहां।

सारी वनसपतियां फूल उठी है वियोगिनी नारी को प्रिय की याद सताने लगी है किन्तु उसका प्रिय कहीं और भूला हुआ है।

> मौलि बनस्पति जग फूला पिउ मकरंद और कहं भूला।[2]

पति के वियोग में अपना मान समाप्त कर देती है, वह प्रिय के आमंत्रित करती है, अभी तक जो प्रिय वियोग में वह तपती रही पति सान्निध्य में आकर शीतल होना चाहती है।

> पिउ सीतल आवहु हम पासा, तपन जाइ खण्डवानी पियासा[3]

मैना प्रिय वियोग में नित्य मृत्यु को प्राप्त करती है इस प्रकार दुख से मरना अब उसे नही भाता।

> जियरा मोर नाक होइ रहा, पिउ बिनु मरन नितहि को सहा।[4]

1- मृगावती पृ0 338 छ. 331

2- मृगावती पृ0 337 छ. 330

3- मृगावती पृ0 338, छ. 331 4- चंदायन पृ0 351 छ. 358

नागमती भी प्रिय को आमंत्रण देती है अभिलाषा व्यक्त करती है।

> घिरनी परेवा होइ पिउ, आउ   बेगि परि टूटि[1]
>
> नारी पराये हांथ है, तोहि बिनु पाव न छूटि।

यहां रूपमनी की व्याकुलता बढ़ गई है वह ऊँचे भवन पर खड़ी होकर उस मार्ग को अनवरत निहार रही है जहां उसका प्रिया गया है, वह उस मार्ग को उसके आने की प्रतीक्षा में जोह रही है।

> ऊँच उतुंग भवन एक अहा, रूप मनी चढ़ी मारग चाहा।[2]
>
> उँभे पथ निहारत आही, भान अवध एक देखत रह ही।

नायिका भयाक्रान्त हैं वह उसास लेकर पति की प्रतीक्षा करती है।

> अस रामा पिय भा कै कियेहु चाहं औराहं,[3]
>
> यह पिय पथ निहारे ठाढ़ी, उँभे करि करि बाहं।

कौलावती प्रिय प्रतीक्षारत है वह सूर्य से कहती है हे सूर्य देवता मैं तुम्हारी सतत् सेवा करती रही किन्तु प्रिय नहीं मिला।

> कहेसि रोइ हे दिन कर देवा, मैं सतत् कीन्ह तोर सेवा[4]
>
> सरवर माहं एक पग खरी, सिर की धूप सकल तन जरी।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 141 छ॰ 13 रामचन्द्र शुक्ल।

2- मृगावती पृ0 330 छ॰ 113

3- मृगावती पृ0 85 छ॰ 345

4- चित्रावली पृ0 85 छ॰ 345

रूपमनी विरह से अत्यन्त दुखी है सूर्य उसे दिन में जलाता है उसका वर्ण श्याम हो गया है।

सूरज तपै कँवल दिन ··रै पति बिनु सूरज रैनि पिय करै।[1]

बदन सूखी साँवर होइ रहा, दिनियर सब कँवल कर गहा।

नायिका को कहीं तो प्रकृति के उपकरण अपने सगे ज्ञात होने लगते जिनसे विरही अपने हृदय की भावनाओं को व्यक्त कर अपने विरह भार को हल्का लेता है। कहीं कहीं वह पवन-पक्षियों को सम्बोधित कर अपनी भावनायें व्यक्त करती है। किन्तु अधिकांश जिस रूप में षट् ऋतु एवं बारह मासे का वर्णन इन काव्यों में मिलता है वह उद्दीपन का है। प्रकृति के इस विलास-मय स्वरूप को देखकर विरहिणी को अपने अभाव का ज्ञान होता है। वह दुखी हो उठती है।[2]

नागमती पद्मावती को संदेश भिजवाती है जो एक विवश नारी के रूप में दृष्टव्य है वह पद्मावती को कहती है तू मेरी सौत ही रहो बैरन न बनो, मुझे एक बार प्रिय के दर्शन करा दो मैं तुम्हारी आभारी रहूँगी।

पद्मावती सो कहेउ विहंगम केत लोभाइ रही कर संगम[3]

तू घर घरनि भयउ पिउ-भरता, मोहिं तन दिहेसि जप औबरता।

हमहुँ बियाही संग ओहि पीउ, आपुहि पाइ जानु पर जीउ।

अबहु भया   करू जिउ फेरा, मोहिं जिआउ कंत देउ मोरा।

नारी की अन्तर्वेदना को कवि ने नागमती के शब्दों में ' उभारा है। वह कहती है।

1- मृगावती पृ0 329 छ. 315

2- डा0 सरला शुक्ला, जायसी परवर्ती कवि और काव्य पृ0 242

3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 441 छ. 385

मोहिं भोगं सो काज न बारी, सौंह दीठि के चाहन वारी[1]
सवाति न होसि तूँ बैरिनि मोर कंत जेहिं हाथ
आनि मिलाव एक बेर तोर पाँय मौर माँथा।[1]

नागमती के दुख से समस्त प्रकृति प्रभावित है। वह जहां जहां खड़ी होकर रोती है वहां मानों घुघुंची बो दी गई हो उसके दुख से पलाश पत्र निपत्र हो गये हैं, परवल पीला हो गया है, गेहूँ का हृदय फट गया है, तात्पर्य यह है कि सभी उसके दुख से दुखी हैं किन्तु उसके रत्नसेन को कौन उसके विरह की याद दिलायेगा।

कुहकि कुहकि जस कोइल रोइ रकत आंसू घुंघुचि बन बोई[2]
भइ कर मुखी नैन तब राती, को सिराव बिरहा दुख ताती
जहं जहं ठाढ़ होहि बनवासी तहं तहं होहि घुंघुचि के रासी
बूंद बूंद मंह जानहं जीउ, गुजां गुजि करैं पिउ पीउ।
तेहिं दुख भये परास निपाते, लोहू बूड़ि उठे होइ राते
राते बिम्ब भीजि तेहिं लोहू, परवर पाक फाट हिय गोहूँ।

नागमती एक रानी है किन्तु वह सामान्य धरातल पर एक सामान्य नारी के रूप में चिन्तित है।

तपै लागि अब जेठ असाढ़ी मोहिं पिउ बिनु छाजन भइ गाढ़ी[3]
तन तिनउर भा झुरौं खड़ी, भइ बरखा दुख आगरि जरी
बंध नांदि औ कंध नकोई, बात न आव कहौं कारोई

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 441 छ. 385

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 466, छ. 328

3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 461, छ. 379

साँठि नाठि जग बात को पूछा, बिनु जिउ जरै मूँझ-तनछूछा
भइ दुहेली टेक विहूनी, थांभ नाहीं उठ सकै न धूनी।
बरसे मेंह चुवैं नेनाहा, छपर छपर होइ रही बिनु बाँहा।

रूपमती यह सहन नही कर पा रही है कि उसका प्रिय किसी स्त्री की ओर देखे।

करवत सीस दइ कोइ सहै यह दुख बहुत हमांह
तिरियो यह नहीं सह सके पिय निरखे औराहं[1]

नागमती प्रिय वियोग में अपने आपको उत्सर्ग कर देना चाहती है। उसका विचार है कि यदि प्रिय को मेरा जलना ही प्रिय हैं तो मुझे कोई रोष नहीं है मैं सहर्ष अपने शरीर को जलाकर प्रिय के पांवों के नीचे डाल दूँगी।

जायसी ने यहां नागमती को भारतीय नारी के त्याग मयी समर्पण, आदि के आदर्श रूप में व्यंजित किया है।

तन जस पियर पात भा मोरा, तेहिं पर बिरह देइ झकझोरा
तरिवर झरहि झरहिं बन ढाखा, भइ ओनंत फूल फर साखा
करहि बनसपति हिये हुलासू, मों कहं जगभा दून उदासू
फागु करहि सब चांचरि जोरी, मोहिं तन लाइ दीस जसहोरी
जौ पै पीउ जरत अस पावा, जरत मरत मोहिं रोष न आवा।
राति दिवस बस यहि जिउ मोरे, लागि निहोर कत अबतोर।
यह तन जारौं छार के कहौं कि पवन उड़ाव
मकुतेहि भारंग में पड़यो कंत धरे जहं पाँव।[2]

1- मृगावती पृ0 340 छ. 335
2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 455, छ. 275

कौलावती प्रिय के वियोग दुखी है वह कहती है कि जो प्रेमी जन होते हैं उनके शत्रु मुर्गा और सूर्य दोनों होते हैं सूर्य भी प्रकाश करके उंजाला फैलाता है। मुर्गा प्रातः बांग देकर सबको जगाता है।

उठत देखि रवि किरन पसारा, जिउ छाड़ि भागी तेहिं बारा।[1]
जेहिं जन के मन प्रेम अंकूरू ताके वैरी तमचुर सूरू।

कौलावती प्रिय के बचन के आधार पर जी रही है। उसके शरीर में प्राण इस लिये संचरित है कि प्रिय के आने की आशा है। उसके विरह का समुद्र अथाह है। उसमें वह औंधि हुई पड़ी है। उसे कहीं किनारा नहीं मिल रहा है।

बचन एक कहि गयो जो पीउ, ताही अधार रहे धर जीउ।[2]
विरह समुद अथाह देखावा, औंधितीर कहुं दिष्टि न आवा।

चित्रावली की उपनायिका कौलावती को दिन में पवन गर्म हवा देता है और रात्रि में उसे चन्द्रमा की शीतलता दग्ध करती है।

दिवस उसास पवन अधिकावै रैन कलानिधि घिउ बरसावै।[3]

नागमती अपना संदेश रत्नसेन के पास भ्रमर काग के द्वारा भेजती है। इसमें नायिका का, हे भौरा। हेकाग। के सम्बोधन में अपार पीड़ा छिपी हुई है। वह कहती है कि तुम मेरे प्रिय से जाकर कहना कि नागमती के विरह से हम जलकर काले हो गये हैं।

1- चित्रावली पृ० 132, छ• 543
2- चित्रावली पृ० 84, छ• 344
3- चित्रावली पृ० 132, छ• 543

संदेश वाहक भ्रमर एवं काक है वह कहती है कि हे भ्रमर। हे काग। मेरे प्रिय से मेरा संदेश पहुंचा दो उनसे कहना कि तुम्हारी स्त्री वियोग में जलकर मर गई है, उसी के धुँये से हमारा शरीर काला पड़ गया है। यहां नायिका के विरह की तीव्रता दर्शनीय है।

पिउ से कहेउ संदेसड़ा हे मौरा हे काग।[1]
सौधनि विरहे जरि मुइ वेदिक धुवा हम लाग।

रूपमनी का विरह भी दाहक एवं तीव्र है भृंगराज, कोयल, काकरूद, सभी उसके विरह से दह कर काले पड़ गये हैं।

दुख भुजइल हो रहे न जाइ कोकिल होइ संताप जिउखाइ[2]
काकरूद विरहा होइ रहा, भृंग राज वियोग जो दहा।

नागमती का वियोग अब सर्वकालिक हो गया है विरह में वह दीपक और बत्ती सदृश जल रही है।

अब यह विरह दिवसभा राती, जरौं विरह जब दीपक बाती।[3]
कापैं हिया जनावै सीउ, तो पै जाइ होइ संग पीउ।

नागमती का विरह ईर्ष्या मूलक है उसे चिन्ता है कि मेरा प्रिय किसी दूसरी स्त्री के वश में तो नहीं हो गया है। वह अपना क्रोध तोते पर उतारती है।

नागर काहू नारी बस परा तेहिं मोर पिउ मोसो हरा[4]
सुवा काल होइ लेइगा पीउ पिउ नहिं जात जात बर जीउ।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 226 छ• 209
2- मृगावती पृ0 226, छ• 209
3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 138, छ• 9
4- जायसी ग्रन्थावली पृ0 441, छ• 365

वह रानी है सर्व सम्पन्न है किन्तु वह सामान्य नारी के रूप में आती है उसे अपने घर की चिन्ता है कि प्रिय के न रहने पर उसकी क्षतिग्रस्त गृह को पति बिना कौन छायेगा।

पुष्य नखत सिर उपर आवा, हौं बिनु नाहं मंदिर को छावा।[1]
अद्रा लागि-लागि भुंइ लेई, मोहि पिउं बिनु को आदर देई।

रूपमनी को वर्षा की भयानक रात्रि में डर लगता है वह कामना करती है कि प्रिय उसे अपने हृदय में छिपा ले।

गरजत घन पिउ उरहि छिपावहु, सेज सूत हौं भरम डराएहुं[2]

कार्तिक की उजाली रात्रि शीतल नही अपितु विरह पैदा करके उसे मार रही है। उसे सारी सुखद वस्तुयें प्रिय के अभाव में कष्टकारी प्रतीत हो रही है।

कार्तिक सरद रैन उजियारी, जग शीतल हौं विरहा जारी
सेज सुपेती सेज न भावहिं, अमिय तेज ससि विष बरसावहिं।[3]

यहाँ नागमती को चंद्रमा विरह से मार रहा है। वह सारे संसार को चौदह कलाओं से प्रकाशित कर शीतलता दे रहा है किन्तु नागमती को इसके बिल्कुल विपरीत ही धरती आकाश जलाता प्रतीत हो रहा है।

कार्तिक सरद चन्द उजियारी, जग सीतल भये बिरहा जारी[4]
चौदह कला चांद परगासा, जनहुं जरै सब धरती अकासा।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 4 50 छ. 3 7।
2- मृगावती पृ0 333 छ. 324
3- मृगावती पृ0 334 छ. 324
4- जायसी ग्रन्थावली पृ0 450 छ. 37।

प्रेमा :

प्रेमा प्रिय वियोग में नेत्रों को जल से परिपूर्ण भरे रहती है वे ऐसे प्रतीत होते हैं मानों यह नेत्र रूपी सीपियां अभी फूट कर मोतियां ही मोतियां बिखेर देंगी।

लोचन दुवौ फुटि जल भरे, सीपी फुटि जनु मोती ढरे।[1]

प्रेमा का दुःख सृष्टि व्यापी हो गया है वह रक्त के अश्रु रोई है उससे तोता मुख धोकर रक्ताभ हो गया है, कोयल काली हो गयी है दुख से जल कर वृक्षों के पत्र गिर गये, कमल लाल हो गये, पुष्प ने अपने पंखुड़ियों के वस्त्र फाड़ डाले, अनार का हृदय विदीर्ण हो गया, नीबू पीला पड़ गया, नारंगी रक्त वर्ण की हो गयी, खजूर का हृदय प्रेमा के दुख से फट गया। महुआ बउस गया और पत्र विहीन हो गया।

पेमै दुख रगत जो रोवा, सुवटै तासु रगत मुख धोवा[2]
पिक कवार जरि भै दोउकारे, दुःख दगधे तरिवर पत झारे।

1- मधुमालती पृ0 185 छं. 219

2- मधुमालती पृ0 212 छं. 184

ऋतु वर्णन

प्राचीन काल, से विरही जन पर ऋतुओं का प्रभाव पड़ता आया है वह ऋतुओं के बदलने के साथ अपने दुख को भी उन्हीं के माध्यम से जोड़ने लगता है। "नेमिनाथ चतुष्पादिका" में बारह मासा का प्रथम उल्लेख मिलता है। हिन्दी में अप भ्रंश के इस कथानक रूढ़ि का खूब प्रचलन हुआ, और अनेक बारह मासे लिखे गये।[1]

आदि कवि के काव्य का प्रस्फुटन प्रकृति के वांगमय में ही हुआ था। कवि की वर्णन स्वाभाविकता, निरीक्षण सूक्ष्मता का मनोरम चित्रण है। शरीर का रूखापन, धान्य से भरे खेत, जल की शीतलता, अग्नि की सुखदता, गोरस की अधिकता, कुहरे का प्रकोप का वर्णन कवि ने सोल्लास किया है।

"स्पृशन सुविपुलं शीतमुदकं द्विरदः सुखम्
अत्यन्त तृषितोपन्यः प्रति हंसरते करम्।[2]

बारह मासा वर्णन :

सूफी कवियों ने भी अपने विरह चित्रण में सम्प्रेषण शीलता एवं तीव्रता लाने के लिए बारह मासा का नियोजन किया है। इनकी साधना में विरह की प्रचुरता है। ये प्रेमी कवि नायिका के नेत्रों की आंसू वियोग में पीला शरीर विरह अहेरी[3] दाहक चन्द्रमा[4] वनस्पतियों

1- हिन्दी फारसी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ0 442
2- बाल्मीकि रामायण अरण्य काण्ड सर्ग 16 श्लोक 5
3- चित्रावली पृ0 106 छ॰ 436
4- चित्रावली पृ0 106 छ॰ 436

को व्यथा सुनाना[1] सूर्य को देखते ही विष का फैलना[2] घर को वर्षा से छाने की चिन्ता[3] दुख से अनार का हृदय फट जाना, टेसू का अंगार होना[4] शरीर रूपी पत्ते का चित्रणविरह समुद्र का भरना[5] ठंड से ठिठुरना दुख की रातों का विशाल होना[6] ठंडी वस्तुओं का दाहक होना[7] नायिका वर्षा ऋतु में अवलम्बहीन होना, बरसात में उसका घर गिर जाना। कोई थूनी नही है।[8] जाड़ा काल हो गया है।[9] वह विरह में दीपक पर पतंगे की भांति जल रही है।[10] उसका तन पूस में थर-थर कांप रहा है। चौदह कलाओं से प्रकाशित व शीतल शारदीय चन्द्रमा नायिका को जला रहा है आदि।

1- मधुमालती पृ0 110 छ. 455

2- मधुमालती पृ0 231

3- हंस जवाहर पृ0 132

4- मधुमालती पृ0 66 छ. 406

5- मधुमालती पृ0 70

6- जायसी ग्रन्थावली पृ0 458 छ. 377

7- जायसी ग्रन्थावली पृ0 461 छ. 379

8- जायसी ग्रन्थावली पृ0 452 छ. 372

9- जायसी ग्रन्थावली पृ0 453 छ. 373

10- जायसी ग्रन्थावली पृ0 450 छ. 371

प्रायः सभी प्रेमाख्यानों में वियोग की व्यंजना बारह मासों मे हुयी है। बारह महीने में प्रत्येक माह की विशेषताओं एवं प्रभावों से विरहिणी नायिका प्रभावित होती है। कभी वह उसकी आलम्बन बनती है, कभी उद्दीपन के रूप में प्रभावित होती है। विरहिणी के मानसिक विकलता का वर्णन सूफी कवियों ने बड़े ही मार्मिक रूप में किया है।

बसन्त की मादकता, कामाधिक्य व उन्मत्तता नारी हृदय को विचलित करता है। वह झुंझला उठती है। अपने अन्तर्वेदना के घुमन को हर मास में उसके प्रभावानुसार निकालती है। संदेश के माध्यम से प्रिय को सूचना भेजती है।

प्रायः वर्ष के तीन महीनों से बारह मासा प्रारम्भ होता है। कहीं चैत्र, आषाढ़ और कार्तिक से, आषाढ़ का प्रथम मेघ कालिदास के यक्ष को उद्वेलित कर दिया था, इस प्रकार वर्षा ऋतु आगमन पर विरहिणी की पीड़ा असह्य हो उठी होगी तो इन सूफी कवियों ने अपने बारह मास का वर्णन आषाढ़ से प्रारम्भ किया होगा।[1]

प्रेमाख्यानक काव्य के कवि बारह मासे का वर्णन को भिन्न-भिन्न महीनों से प्रारम्भ किया है। चंदायन का कवि दाउद अपनी नायिका का विरह मात्र तीन महीने में ही पूर्ण कर दिया है। चांदा की विरहाग्नि मार्ग शीर्ष से प्रारम्भ होती है जो जेठ और भादों में आकर समाप्त होती है। चांदा का विरह "श्वसुर-गृह से आने के पश्चात् सखियों को बताते हुये व्यंजित हुआ है।

1- ऋतु वर्णन की परम्परा और सेनापति का काव्य पृ० २७

चाँदा का हृदय माघ में अंगीठी के समान तप रहा है। उसकी सर्दी और सुपेती एवं गर्म चादर से नही जाती, उसके नेत्र बरसते हैं, तब भी यह आग नहीं बुझती, यह तभी समाप्त होगी जब प्रिय संयोग होगा।

"माँह मास मरेउं घुघुआई, लागइ सीउ न पिउ बिन जाई,
रइनि छमासी मरइ तुसारू, हिये अगिनि बर अस आगू
बरसइ नैन न आगि बुझाई, सउरि सुपेती जाड़ न जाई[1]

जेठ की धूप नायिका सहन नहीं कर पा रही है, सारी सृष्टि तप रही है। नायिका स्तनों में चन्दन लेप लगाती है तो वह और भी तीव्रता के साथ प्रेम की झार के रूप में उठती है, जो उसे दाहकता प्रदान करती है।

"जेठ घाम सहै को बारा, तपहि बुझासन परहिं अंगारा,
पिय की छांव न बैठी काहू, जरतइ मानुष धरउ कोइ पाऊं
जो चन्दन लागौं थनहारा, अधिको उठे पिरिन कै झारा"[2]

भाद्र पक्ष में उसकी नाव बिना खेवक ही इधर उधर डोलती है। प्रिय प्रिय रटते हुये उसकी जिह्वा सूख गई है। दूसरी ओर नेत्र नदी हो गये हैं। उसकी मनोदशा प्रकृति प्रतिकूल है।

"भादों मास देव घहराई नैन नदी देव मोकराई,
बिनु करिया मोरि डोले नावा,
कोई जसकिए असि रूखा, पिउ-पिउ करत जीभि मोरि सूखा"[3]

1- चंदायन पृ0 48 छ॰ 51
2- चंदायन पृ0 652
3- चंदायन पृ0 50 छ॰ 53

"मृगावती" में विरही मृगावती बंजारों की टोली से अपना विरह संदेश व्यक्त करती है। इसमें कवि कुतुबन ने श्रावण मास से बारह मासा प्रारम्भ किया है। वह भ्रमर के साथ कली सदृश विंध कर रहना चाहती है।[1] वह मालती मधुकर के साथ एकाकार हो जाना चाहती है। यहां जीवन और ब्रह्म में कोई भीभेद नहीं है, आध्यात्मिक स्वरूप-संकेत है।[2]

पद्मावती में नागमती का विरह भी कवि आषाढ़ मास से प्रारम्भ किया है, जो जेठ तक चलता है। नागमती की वेदना हिन्दी साहित्य जगत की अनुपम निधि है। यह अद्वितीय है। प्रिय वियोग में बाउर है, उसे सांस इस प्रकार आ जा रही है, मानो प्राण अभी प्रयाण कर जायेंगे।[3] विरह के उसके शरीर को झूले सदृश झुला रहा है। सारा संसार जल से भरा है, उसे चिन्ता है, क्योंकि वह थक गई है, बिना कर्णधार के नाव कौन पार करे।[4]

कवि उसमान का बारह मासा अत्यन्त सशक्त है। चित्रावली सुजान के यहां पत्र भेजती है, जिसके अन्तर्गत अपनी वेदना भी प्रकट करती है। यहां कवि उसमान ने चैत्र मास से नायिका के वियोग का वर्णन

1- मृगावती पृ0 315

2- मृगावती पृ0 315

3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 442 छ॰ 442

4- जायसी ग्रन्थावली पृ0 446 छ॰ 368

किया है। नायिका वियोग दाहक है।

"गा भुजंग होइ गृह बासा, दहि भा स्याम विरह उसासा,

कियो झंकार विरह के आंचा, बायस भरम होत तंह बांचा"[1]

"हंस जवाहर" का कवि, नायिका के विरह का चित्रण आषाढ़ मास से करता है। नायिका प्रिय वियोग में स्नात है, उसे प्रकृति प्रतिकूल लगती है। आषाढ़ में पृथ्वी हरी-भरी है, किन्तु उसे बूँदें अंगार लगती है।[2] उसके नेत्र सावन में ओरी से टपकती बूंद के समान है।[3] भादों में विरह समुद्र में दुख भरा है, क्वार में यौवन समुद्र अथाह है, संयोग सुख की आकांक्षा है।[4] "

कार्तिक में सखियों को देखकर ईर्ष्या से भर उठती है,[5] अगहन में शीत शरीर से भर उठता है।[6] पूस में नायिका सर्दी से थर-थर कांप रही है।[7]

1- चित्रावली पृ० 103

2- हंस जवाहर पृ० 130

3- हंस जवाहर पृ० 131

4- हंस जवाहर पृ० 131

5- हंस जवाहर पृ० 131

6- हंस जवाहर पृ० 132

7- हंस जवाहर पृ० 133

षट् ऋतु वर्णन :

सूफी कवियों ने षट् ऋतु वर्णन की योजना अपने काव्य में संयोग वियोग वर्णन के लिए किया है। अगहन मास से प्रारम्भ करके दो-दो मास के युग्म की एक ऋतु होती है। तीन ऋतुओं से एक अयन बनता है। सूर्य की उत्तर, दक्षिण गति का नाम अयन है तथा दो अयन का एक वत्सर होता है। "ऋ" का अर्थ है गति और "तु" प्रत्यय लग जाने से अर्थ हुआ- जाने वाला या जाना" यह काल विशेष दो-दो मास की अवधि का छः प्रकार होता है।

कुछ ग्रन्थों के अनुसार ऋतुओं का चक्र "हेमन्त" ऋतु से प्रारम्भ होकर शरद ऋतु तक चलता है, किन्तु कुछ ग्रन्थों में ऋतु की गणना "शिशिर" से की गयी है।

"शिशिर पुष्प समयो ग्रीष्मों वर्षा शरद्दिमा,
माघादिमास युग्मै स्युर्ऋतवः षट् कमादमी"[1]

चैत्र बैशाख की "बसन्त" ज्येष्ठ आषाढ़ की "ग्रीष्म" श्रावण-भाद्रपक्ष[2] "वर्षा" अश्वनी-कार्तिक "शरद" मार्ग शीर्ष-पौष "हेमन्त" एवं माघ-फाल्गुन "शिशिर" ऋतु मानी गयी है; इनको जब तीन ऋतु मानते हैं तब चार-चार मास की एक ऋतु होती है, ग्रीष्म, वर्षा एवं जाड़ा।

सामान्य रूप से जीवन में पतझड़ एवं बसन्त दो ही मानते हैं।[2]

1- ऋतु वर्णन परम्परा और सेनापति का काव्य डा0चन्द्रपाल शर्मा पृ017
2- ऋतु वर्णन परम्परा और सेनापति का काव्य ,, ,, पृ019

"चंदन चीर पहिरि धन अंगा, सेन्दुर दीन्ह विहसि भरि मंगा
कुसुम हार और परिमल बासू, मलयागिरि छिरका कवि लासू,
सौर सुपेटी फूलन्ह डासी, धनि औ कन्त मिलै सुख बासी,
पिउ संजोग धनि जोबन बारी, भौंर पहुप संग करसि धमारी"[1]

वियोग में जो वस्तुयें दाहक थीं वही अब प्रिय सामिप्य में शीतल हो गयी हैं।

"ग्रीष्म ऋतु कै न तपनि तहां जेठ अषाढ़ कन्त घर जहाँ,
पहिर सुरंग चीर धन झीना, परिमल मेद रहा तन मीना"[2]

बसंत ऋतु

कवि उसमान ने षट्ऋतु की योजना विरह वर्णन के अन्तर्गत की है उसमान की नायिका देखती है बसन्तु ऋतु आगमन पर जहां पुष्प खिले हैं वहां भ्रमर गुंजन कर रहे हैं, किन्तु उसका प्रिय नहीं है, जिसके कारण वसन्त उजाड़ प्रतीत हो रहा है। अंगों की सुगन्ध चींटी सदृश प्रतीत होती है। फूल कलियां कांटे की तरह चुभती हैं। कोकिल पपीहे का सुरीला स्वर उसे तेज व्यंग की तरह भेदती प्रतीत होती है।

"ऋतु बसन्त नौतन बन फूला, जहं तंह और कुसुम रंग झूला
आहि कहाँ सो भौंर हमारा, जेहि बिनु बसत बसन्त उजारा,
अंग सुबास चढ़ै जनु चाटे, फूल अंगार कली जनु काटे
कोकिल पपिहा करे पुकारा, बोलन बोल सांग उर मारा"[3]

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 434 छ. 558

2- जायसी ग्रन्थावली पृ० 455 छ. 559

3- चित्रावली पृ० 760

हेमन्त ऋतु में प्रेमी युगल प्रेम सुरा पान करते हैं। पति-पत्नी के मध्य यह ऋतु सुहागे का काम करता है, प्रेमी युगल एक दूसरे के साथ प्रगाढ़ालिंगन बद्ध हो जाते हैं। उनके मध्य चन्दन चरि हार चोली, आदि अवरोधक वस्तुओं को हटना पड़ता है।

"ऋतु हेमन्त संग पियहु पियाला, अगहन पूस सीत सुख काला
धनि और पिउ मंह सीत सुहागा, दुहुन अंग मिलि एकै लागा
मनसोमन तन सो तन गहा, हिय सो हिय बिच हार न रहा
जानहुं चन्दन लागहु अंगा, चन्दन रहै न पावै संगा"[1]

शिशिर में संयोग के समय शीत नहीं सताता -

"आइ शिशिर ऋतु तहाँ न सीऊ जहाँ माघ फागुन घर पिऊ"[2]

पूरी रात तुषार पड़ रहो है, इधर नायिका सिसकी लेते हुये प्रिय के बिना दुखी है। जो धाकर उसका पता लेने गये थे वे अभी लौटकर नहीं आये। नायिका के हृदय में कामदेव ने काम की अंगीठी सुलगा दी है।

"पड़ै तुषार विषम निसि सारी, सिसकी लेति रहौ मैं बारी,
ते न फिरै जो गये बसीठी, बरै लागि उर मदन अंगीठी"[3]

पावस ऋतु में नायिका की बूंदे घृत के समान लगती है। जितनी बूंदे उसके शरीर पर पड़ती है उतने ही नायिका के विरहाग्नि में वर्षा की घृत रूपी बूंदे पड़ने से अग्नि की लपटें निकलती हैं। उसे आकाश की

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 438, छ॰ 662

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 339 छ॰ 363

3- चित्रावली पृ0 61

दमकती दामिनी ऐसी प्रतीत होती है, मानो उसके प्राण ही ले गई। मेघ की काली घटा, उस पर नितान्त अकेली नायिका, पूरी रात्रि जग कर काटती है।

"घन बरसे घिउ हम तन आगी"

"जिमि-जिमि परै मेघ जलधारा, तिमि-तिमि उर सो उठै लुआरा
श्याम रैनि मंह कोकिल बोला, बिरह जराइ कीन्हं तन भोला,
दामिनि सरग दीन्ह जनु बाढ़ी चमकि, देखाइ लेइ जिउ काढ़ी" [1]

शरद ऋतु में रात्रि निर्मल है, किन्तु प्रिय दूर है, इसलिए नायिका का हृदय विदीर्ण हो रहा है। चन्द्रमा बहेलिए सदृश अपने किरणों के बाण चलाकर घायल कर रहा है। चारो दिशाओं में विरह की अग्नि लगी हुई है, वह मन मृगी भागकर कहाँ जाये।

"सरद समै अति निरमल राती, कन्त बाजु सहि बिहरै छाती
ससि पारिधि भा पासर बांधा, किरन बान चारिउ दिसि साधा
कहाँ जाय यह मन मृग भागी, विरह आगि चारिउ दिसि लागी" [2]

ऋतु वर्णन पद्मावत चित्रावली, युसुफ जुलेखा आदि काव्यों में हुआ है। पद्मावत में ऋतु वर्णन, उल्लास, संयोग एवं प्रसन्नता के प्रकाशन हेतु व्यंजित है। नायिका पद्मावती वसन्त ऋतु में नवीन वस्त्रों से सज्जित होती है। पुष्पों के हार, परिमल गंध की सुगन्धि लगाती है। अपने विरह को बसन्त की होली में जलाकर भस्म कर देती है। प्रकृति नवीन है, अतः नायिका भी अपना नवीन श्रृंगार करती है।

1- चित्रावली पृ0 61 छ• डा0 सत्यजीवन वर्मा

2- चित्रावली पृ0 61 छ• डा0 सत्यजीवन वर्मा

ग्रीष्म ऋतु में नायिका तपती है। सूर्य की गर्मी ऊपर से और विरह अन्तर को जलाती है। नायिका दो अग्नियों के मध्य जल रही है।

"सूर आग सिर पर बरसावै, विरहा भीतर देंह जरावै
हौं पिउ जरौ अगिनि दुइ मांही, जरत न परै दिष्टि परछाहीं।[1]

पद्मावती को पावस ऋतु सुहावनी लगती है। आकाश की बूंदे विद्युत प्रकाश में स्वर्ण सदृश लगती हैं। स्त्रियां बीर बहूटी जैसी हैं। मेढक, मोर के शब्द सुहावने प्रतीत हो रहे हैं। मेघ गर्जना से डरकर वह प्रिय के कंठ से लग जाती है। प्रिय सानिध्य से उसे सावन-भादों अत्यंत प्रिय हैं।

"ऋतु पावस बासै पिउ पावा, सावन भादों अधिक सुहावा
कोकिल बैन पाति बग छूटी, धनि निसरी जनु बीर बहूटी"
चमक बीजु बासै जल सोना, दादुर मोर सबद सठि लोना
रंग रीत पीतम संग जागी, गरजे गगन चौंकि गर लागी।[2]

चौदह कलाओं से चांद उद्भाषित है, धरती आकाश सभी निर्मल हैं। शरद ऋतु में रात्रि उजाली है। पृथ्वी पर पुष्प स्वर्ण सदृश खिले हैं।

"आई शरद अधिक पियारी, आसिन कातिक ऋतु उजियारी,
पद्मावति भइ पूनिउ कला, चौदसि चांद उइ सिंघला"[3]

1- चित्रावली पृ0 60

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 437 छ. 36।

3- जायसी ग्रन्थावली पृ0 437 छ. 36।

रस

सूफी काव्य मुख्यत: श्रृंगार प्रधान काव्य है। किन्तु सहयोगी रूप में इसमें वीर रस, करूण रस एवं शान्त रस की व्यंजना हुई है।

श्रृंगार रस के दो प्रकार हैं। §1§ संयोग श्रृंगार §2§ विप्रलम्भ श्रृंगार। सूफी काव्य में विप्रलम्भ श्रृंगार की प्रधानता है। आत्मा का परमात्मा से विछोह, उसकी परब्रम्ह प्राप्ति की उत्कृष्ट अभिलाषा, चिन्ता, स्मरण, गुण कथन इत्यादि विरह दशाएं हैं। पाण्डुता मलिता असौष्ठव विरहावस्थायें तथा प्रवास मान संदेश-प्रेषण आदि की चर्चा सूफी काव्य में विस्तार से वर्णित है।[1]

विप्रलम्भ श्रृंगार : इसमें कवियों ने दो प्रकार से नायिकाओं की मनोदशाओं का वर्णन किया है प्रथम प्रकृति के उद्दीपन रूप में वियोग, दूसरा आलम्बन के रूप में, कवियों ने अधिकतर प्रकृति के उद्दीपन रूप का ही वर्णन किया है।

पद्मावती का वियोग प्रकृति के उद्दीपन रूप में दर्शनीय है।

प्रकृति के उद्दीपन रूप में वियोग वर्णन :

पद्मावती- "जोबन सुनेहु की नवल बसंतु, तेहिं बन परेउं हंस्ति मैमन्तु[2]

अब जोबन बारी को राखा, कुंजर बिरह बिधंसे साखा।

चित्रावली-

गा भुजंग होइ गृह बासा दहिआ स्याम विरह के सासा[3]

कियो झंकार विरह के आंचा, बाएस भस्म होत तहँ बाचा।

1- डा0 सरला शुक्ला पृ0 228

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 233, छ. 174

3- चित्रावली पृ0 102

जवाहर –

माँह मास ठिठुर रही, बदन खायगा देह।

फागुन आइ मिलि कहीं जब होरी जर खेह।[1]

चित्रावली –

कै विधि जग दो चांद निरमयो, एक तातों एक सीतर भयो।[2]

सीतल हुते जो गा तुम संगा, रहो उसनदाहत मम अंगा।

हंस जवाहर –

बिरह आग वर्षा महं, बरसे बूदं अंगार[3]

जग शीतल हरियर भयो, मोंहि जारे करतार।

संयोग श्रृंगार :

इसके अन्तर्गत प्रेमी युगल मिलते हैं, जिसके अन्तर्गत रति केलि का वर्णन है। सूफी काव्य में संयोग वर्णन अत्पल्प मात्रा में हुआ है।

हंस जवाहर –

धन पिउ संग भइ मतवारी, भई अचेत पुनि नाही संभारी[4]

भवंर जो सोख कमल रस लीन्हा, अमरन रंग भंग कर दीन्हा।

मधुमालती–

कुवंर बाँह कामिनी गहि कहा, हिये सिरान जोतुम दुखरहा[5]

अब तजिहु पाछिल निठुराई, परिहरि लाज लागु उरलाई।

1– हंस जवाहर पृ0 203

2– चित्रावली पृ0 436 छ॰ 110

3– हंस जवाहर पृ0 130

4– हंस जवाहर पृ0 184

5– मधुमालती पृ0 441

वीर रस

पद्मावत में युद्धवीर एवं दानवीर रसों का प्रतिपादन हुआ है। "राजा गढ़छेका खण्ड" में गन्धर्व सेन के दूत राजा रतन सेन से कहते हैं, सिंहल के हाथियों द्वारा तुम्हारे योगी कटक को मर्दित कर दिया जावेगा। इससे रत्नसेन के हृदय में प्रतिकार की भावना हेतु उत्साह उमड़ आता है। वह कहता है –

"तुम्हारे जो सिंहल के हाथी, हमरे हस्ति गुरू हैं साथी
अस्ति, नास्ति नहिं करत, न बारा, परवत करै पांव कै छारा"[1]

"गोरा बादल युद्ध "खण्ड" में बादल उत्साह से भरा हुआ माता से बोलता है।

"मातु न जानसि बालक आही, हौं बादल सिंह रन वादी,
सुनि गज जूह अधिक जिउ तपा, सिंघ क जाति रहै किमि छपा"[2]

मृगावती में कुंवर को मृगावती के बन्दीगृह में बन्द राक्षस के खोलने पर उससे युद्ध करता है, वह कुवंर से पराजित हो जाता है, यहाँ "वीर" रस का वर्णन अत्यल्प है।

"पौने बांधि मुंह चुप मैं रहा, जस बन मानुख वकत न कहा,
जस गूंगा बाउर बउराई, बकत न पाइ जीभ लपटाई।"[3]

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 290 छ• 226

2- जायसी ग्रन्थावली पृ0 282

3- मृगावती पृ0 310 छ• 285

चन्दायन में वीर रस की व्यंजना कवि ने लोरक एवं बाठा से युद्ध के समय किया है। रूपचन्द राजा लोर से युद्ध करते समय कैसे पलायित होता है, इस परिप्रेक्ष्य में यहाँ वीर रस का सुन्दर परिपाक हुआ है।

"पलटा लोर सिंह जस गाजा, पहिल खांड राजा सिर बाजा
खरग धार लोरिक कइ बांजी, पाखर काटि राउ गा भाजि।[1]

"उठा लोर सिंगहि कर गही, मारसि बेलन पाखर रही,
भिरे वीर दोउ बलि बंडा, अगिनि बरी बरू बाजत खण्डा"[2]

इसी प्रकार कवि चित्रावली में वीर रस का सुन्दर निदर्शन किया है। सोहिल नरेश से सुजान के युद्ध का जीवन्त चित्रण -

"औ तेहि मारेसि सांगि पचारी झुकि सो दृष्टि पर कुंवरउबारी
दोउ लपटाय पुहुपि परगिरे, जनु दुइ माल सरगइ मिले"[3]

कहीं कहीं ये नारी के रूपक का चित्रण युद्ध में वर्णन किये हैं।

हाँथ कमान सुन्दरी नारी, हरि लंक पातरी पियारी[4]
मानवती गर्वीली नारी का चित्रण युद्ध के रूपक में -

"जिउ मानिनी गरब जोबना एक-एक पाइ लाग सौजना,
पायन लागै ना चलै खैंयहि पांती पांति,
गरब तउ ना डोलै, अस जोबन मद माति"[5]

1- चंदायन पृ0 129 छ॰ 132
2- चंदायन पृ0 130 छ॰ 132
3- चित्रावली पृ0 98
4- चित्रावली पृ0 91
5- चित्रावली पृ0 90

करूण रस :

इस रस का परिपाक सूफी काव्य में कई स्थानों पर हुआ है। पद्मावत में नागमती पद्मावती सती खण्ड में करूण रस का सुन्दर नियोजन कवि ने किया है।

लेइ सिर उपर खाट बिछाई, पौढ़ी दुवौ कंत गर लाई[1]
लागि कंठ आगि देइ होरी, छार भइ जारि अंग नमोरी।

मृगावती का करूण कंदन भी करूण रस की निष्पत्ति करता है। राक्षस द्वारा कुंवर के उड़ा ले जाने के पश्चात् मृगावती रोती है।

रोवहि कहैं काह सुख करौं, आगि देहु विष खात मरौं।[2]
तोरि-तोरि केस पल्टे हाथा, किंह अवगुन हम बिछुरे साथा।

हंस जवाहर में हंस के मृत्यु के पश्चात् जवाहर का करूण विगलित विलाप हृदय को द्रवीभूत कर देता है।

खोले शीश औ छिटके बारा, तन बावर गर लटके बारा[3]
नैन रक्त उभड़ै उलथाहीं, भवंर फिरै फिर कुछ उतराहीं
तुम्ह मोहिं लाग भयो पिउ जोरी, मैं का देउ अहो पिव जोरी
जो मों पास प्रान पिउ तोरा, सोमैं देऊं और का मोरा।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 269

2- मृगावती पृ0 305

3- हंस जवाहर पृ0 239

पद्मावती का करूण विलाप रत्नसेन को छुड़ाने के लिए गोरा बादल के समक्ष करूण क्रंदन करूण रस से आप्लावित है।

कहै रोइ पद्मावती बाता, नैनन्ह रक्त देखि जगराता[1]

उलथि समुंद जस मानिक करे, रोइ रूहिर आँसु तन ढरे।

मधुमालती का करूण विलाप तारा चन्द के लिए -

मधुमालती लोयन जल भरी ताराचंद के पायन परी[2]

मधुमालती रोइ रोइ कहि बाता, तै मोर जनमि जिउ करदाता।

हास्यहरस:

पद्मावत रत्नसेन विवाहोपरान्त सखियां उससे हास परिहास करती हैं।

प्रथमैं भज्जन होई शरीरू, फुनि पहिरै तन चंदन चीरू[3]

साजि मांग सिर सेंदुर सारै, पुनि ललाट रचि तिलक सवारैं।

जानि परति भागिनी तुम्हारी, होइहि पियारी अति अधिकारी.[4]

तिरछि चितवनि सी धनि सोई न जाने कति हरे मन होई।

वात्सल्य रस :

वात्सल्य रस का थोड़ा बहुत परिपाक सभी सूफी काव्यों में वर्णित है। चित्रावली, हंस जवाहर, चंदायन आदि में वात्सल्य वर्णन है।

1- जायसी ग्रंथावली पृ0 760 छ. 650

2- मधुमालती पृ0 467

3- जायसी ग्रंथावली पृ0 130 छ. 7 पद्मावती रत्नसेन भेट खण्ड।

4- डा0 सरला शुक्ला पृ0 252, जायसी के परवर्ती काव्य और कवि।

किन्तु अत्यल्प मात्रा में कहीं कहीं प्रसंग वश ही इसका परिपाक काव्य में हुआ है। "गोरा बादल युद्ध खण्ड" में बादल की मां बादल के चरण पकड़ कर उसे समझाती है।

बादल राय मोर तूइं बारा, का जानसि कस होई जुझारा,[1]

बादशाह पुहुमि पति राजा, सनमुख होहिं न हमीरहि छाजा।

चित्रावली में सुजान की माता पुत्र को दुखी देख अत्यन्त कातर हो उठती है।

उठि अकुलाइ मात दुखभरी, कुंवर पास आइ एक सरी

सीस लाइके बैठी केरा, पुछि बात देखि मुख ओरा

नैन उघार पूत कहुँ पीरा, केहिं कारन भा पीन सरीरा

काहें पीत भयो मुख राता, कहहु बात बलिहारी माता।

तुहीं एक दिनमनि कुल केरा, नैन मूँद कस करिह अंधेरा

पूत पीर कहु कस जिउ तोरा, नैन खोलु करि जगत अंजोरा

अद्भुत रस : अलाउद्दीन पद्मावती के अद्भुत सौंदर्य से अभिभूत होती है।

देखिएक कौतु होई रहा, रहा अन्तर पट पै नहिं रहा।

सखर देखि एक मैं सोई रहा, पानि पे पानि न होई

सरग आइ धरती मंह छावां, रहा धरति पै धरत न पावां।

तेहिं मंदिर मुरति एक देखी, बिनु तन, बिनु जिय जाइ विशेखी।[3]

1- जायसी ग्रंथावली पृ0 767 छ० 556

2- चित्रावली पृ0 28

3- जायसी ग्रंथावली पृ0 201 छ० 5 रामचन्द्र शुक्ल।

निष्कर्ष :

सूफी कवियों की नायिकाओं का वियोग वर्णन अत्यन्त करूण है। नायिकायें प्रिय वियोग में कृष-गात हो जाती है। उनका यौवन गंगा सदृश है जो रोके नहीं रूकता, वे अपने वियोग का उद्घाटन सखियों से, वनस्पतियों से करती हैं, इनका वियोग लौकिक धरातल पर अत्यन्त आंगिक है।

नायिकाओं की अपेक्षा उपनायिकाओं वियोग अधिक दाहक है। एक स्त्री का पति उसे छोड़ दूसरी के पास चला गया है, वह उस पति की प्रतीक्षा करती है नित्य उसी रास्ते को देखती है जिस ओर उसका पति गया है। वह अपना संदेश पक्षियों, भ्रमरों से देती फिरती है। वह अन्त तक पति प्रतीक्षा रत रहती है। उसके इस प्रतीक्षा में अभिलाषा, चिन्ता स्मरण, उद्वेग, जड़ता पाण्डुता के, भाव स्वत: उत्पन्न हो जाते हैं। वह नारी रानी है राजकुमारी, है किन्तु उसे चिन्ता है कि पति के बिना वेह निरावलम्ब है।

पति की समर्थता एवं अपनी असमर्थता की गाथा वह पूरे वर्ष गाती है, अपने सारे दुख त्यागकर वन-वन भटकती है। अत: उपनायिकाओं का वियोग अत्यन्त सशक्त है।

कवि का संयोग वर्णन अत्यन्त आंगिक है, प्रतीकों के माध्यम से कवि संयोग का स्थूल चित्रण किया है। नायिका का सुध बुध खो बैठना, यौवन को ही सब कुछ समझना उसका उद्घाटन स्वतंत्र रूप से करना आदि है।

सूफी प्रेमाख्यानक में बारह मासा एवं जाड़ा ऋतु वर्णन रूढ़ि के अन्तर्गत हुआ है। किन्तु कवियों का बारह मासा अत्यन्त सशक्त है।

रस के अन्तर्गत सूफी काव्य में श्रृंगार ही प्रधान है कहीं कहीं अन्य रसों का परिपाक हुआ है।

पंचम "अध्याय"

मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

(अ) प्रेम

(आ) असूया

(इ) क्रोध

(ई) विशेषतायें

(उ) स्वप्न विश्लेषण

प्रेम :

सूफी कवि की नायिकाओं का प्रेम पूर्वराग से उद्भूत है। यह स्वप्न दर्शन, गुण श्रवण, चित्र दर्शन तथा प्रत्यक्ष दर्शन से उदित होता है। स्वप्न दर्शन द्वारा उद्भूत पूर्वराग पहले दो प्रकारों की अपेक्षा कम स्वाभाविक है। स्वप्न दर्शन एवं पद्मावती का स्वतः उद्भूत पूर्वराग केवल आध्यात्मिक पक्ष में लिया जा सकता है।[1]

इन्हें मनो वैज्ञानिक या "साभिलाष धारणा" भी कहा जा सकता है।

पूर्वराग के दो पक्ष हैं। मिलन की तीव्रता, प्रेम की परिपक्वता, चिर संयोग की स्वीकृति एवं समर्पण। और दूसरा विरह विगलित चीत्कार करता हुआ नारी हृदय का करुण क्रंदन।

यह प्रेम एवं विरह मधु-कोश में मधु सदृश संचित रहता है विरह की तीव्रता से प्रेम की अनुभूति होती है। प्रेम परिपक्व होता है।

"पेमंहि माहं विरह रस सना, मैन के घर मधु अमृतबसा"[2]

अतएव विरह ही वह मूल पदार्थ है जिसमें शाश्वत गुण वर्तमान है। जिसके लिये प्रेम का उदय हुआ करता है। अर्थात् यदि प्रेम का अस्तित्व है

1- वियोग खण्ड राजनाथ शर्मा जायसी ग्रन्थावली, पृ0 130, छं. 173

2- मंडप आगमन खण्ड, पृ0 228, जायसी ग्रंथावली

तो वह विरह के कारण क्योंकि वही प्रेम का सार है।

सूफी प्रेम को प्रगट, और गुप्त दो रूप में निरूपित किये है।

प्रगट और गुप्त, प्रगट प्रीत कठिन है[1] इसे भर कर ही जोड़ा जा सकता है।[2]

जायसी ने गुप्त प्रेम को ज्ञान कहा है प्रगट को लौकिक-विलास। पद्मावती में यह प्रेम पूरी तरह व्याप्त है जिसमें प्रेम की रंगरेलियाँ ही नहीं यर्थाथ भी है।[3]

कवि कासिम भी इसी को स्वीकार करते हैं।

"प्रगट प्रीत गुपुत मन राता"

जो रस प्रेम गुपुत कर राखा, सो रस जाय कंत पुनि चाखा,[4]

गयो अधाय लेत अरधानी, पुनि मांगा धन ते पिउ पानी।

प्रेम पंथ का पथिक वही है जो एकात्मक प्राप्त करे, जो निर्भय होकर भ्रमर की भाँति निछावर करना जानता हो। पतंग की भाँति प्राणों की बाजी लगाता हो, सूर्य की भाँति आकाश पर चढ़ना जानता हो, जो फंनिग की भाँति भृंगी मय होना चाहता हो। जिसे प्रिय लक्ष्य से मिलने के लिए आग पानी की परवाह न हो।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 213

2- कान्हावत, जायसी ग्रं॰ छ॰ 96

3- जायसी काव्य प्रतिमा और संरचना पृ0 13

4- हंस जवाहर पृ0 185

उस त्रैलोक्य सुन्दरी परम ज्योति पद्मावती की प्रेम-सूक्ति "जाने प्रीति जो मरिकै जोरा।" में प्रीत प्रणय की जो परिभाषा है वह किसी साहित्य में नहीं। प्रीति के लिए मलय होना चाहिए, जिससे विष वृक्ष भी सुगंधित हो उठे। प्रिय के लिये परम प्रकाश पुंज रवि होना पड़ता है , जो सहस्त्र किरणों से कमल का स्पर्श कर उसे सुख देता है। प्रीति के लिए भ्रमर की भाँति हृदय रसिक और गुण ग्राहक होना पड़ता है। जो दोष देखता ही नहीं जिसका ध्यान काटें की ओर नहीं केवल मधु की ओर होता है। प्रीति के लिए अग्नि पानी का भय नहीं, निर्भयता पहली शर्त है, इस प्रेम-योग की, दूसरी आध्यात्म साधना की।

वैसो मरम न जाने मोरा जाने प्रीति जो मर कर जोरा[1]
हौं जानति हौं अबहि कांचा, ना जानहु प्रीति रंग थिर राचा
ना जानेउ भयेउ मलय गिरि बासा, ना जानउ रवि होई चढ़ा अकासा
ना जानेहु भवंर के रंगु, ना जानेहु दीपक होइ पतंगू
ना जानेउ कला भृंगी कै होइ, न जनहु हिय के मंह डर कै गयउ
तेहिं का कहिय रहन खिन सो है प्रीतम लागि
जहं वह सुनै लेइ धंसि का पानी का आगि।

प्रेमी युगल के नेत्र मिलते ही पानी में बूँद सदृश दोनों खो जाते हैं, दोनों प्रेम रंग में रंग कर एक दूसरे के हो गये हैं। वे एक प्राण हैं शरीर दो अवश्य हैं। उनका प्रेम भी पुरइन की तरह सर्वत्र फैल गई है।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 213

"लोचन चार होत मिल जाई, जसपानी महं बूँद समानी
दुइ नरहे एकभो गाता, वहि वह रात वहिर वह राता
जिउ जिउ एक परान घट, देखो बुझी समत्थ
पसरी पुरइ पिरीत्त के, छाई है चहुँ गत्त"[1]

चादां के हृदय में प्रेमांकुरण होता है वह बृहस्पति के पावं तक छूती है कि उसके प्रेमी को उसके पास के आओ यहाँ नायिका का अहं भाव समाता है। वह मात्र एक क्षण के लिए लोर को देखना चाहती है।

चांद विस्पति के पा परी, कामिनी सूर देख एक घरी[2]
कई ओहि मोरे घरें बोलावति, कई मोहिं लाई ओके दण्ड लावहि

सूफी कवि प्रेम के विषय में कहते हैं कि प्रेम आग जिसने सह कर लिया उसने काल को भी जीत लिया।

प्रेम-आगि सहि जेहिं आवा, सो जग जनमि काल सेंउ बाया[3]
प्रेमसरनि जो आय उबारा, सो जग मरे न काहू के मारा

प्रेम की मादक सुरा से प्रेमी युगल सराबोर है इस सुरा का पान प्रेमी मात्र प्रेमी-युगल ही कर सकते हैं। यहाँ दूसरा अन्य कोई इसका आस्वाद नहीं कर सकता है।

प्रेम सुरा रंग दुहु जनराते, प्रेम सुरा जुग चार न माते,[4]
इहउं जरमके कवन संदेहू रचेहु, नेह दुहु जग कर एहू

1- मृगावती, पृ0 318, छ0 296

2- चंदायन, पृ0 137, छ0 140

3- मधुमालती पृ0 481, छ0 338

4- मृगावती

मधुमालती अनन्य प्रेमिका है उसके जैसी प्रेमिका अन्यत्र मिलना दुष्कर है। मधुमालती कुवँर के प्रेम में संसार के कार्य त्याग देती है। माया, मोह, ममता साथ की सखियों का परित्याग, माता-पिता घर-बार सभी त्याग देती है। उसके लिये सभी निरर्थक है।

पीतम पीतम मधुजिय भजा मधुमालती सभी धंधा तजा,

छोड़हु मया मोह संसारा, छोड़हु कुटुम्ब लोग परिवारा[1]

चित्रावली भी अनन्य प्रेमिका वह चित्र को देख रही है, चकोरी की भाँति चाँद समझकर वह टकटकी लगाए अनवरत देख रही है। वह प्रेम की पकड़ में हिल नहीं पा रही मूर्तिवत् खड़ी है। सहस्रो-कलारूप होकर कुँवर की मूरत हृदय में समा गई है जिसे देखते हुए उसकी चेतना समाप्त हो गई है प्रेम फांद में बंध गई है।

एक टक लाइ रही मुखओरा, चित्र चाँद भै कुँवरी चकोरा,

नैन लाइ मुरति सोरही, डोलि न सकी प्रेम की गही,

सहस कला होइ हिये समाना, निरखि हियेचित चेत भुलाना।

जेहिं सुनि रहेहु जीव मग्न गाता, फिर फिर कहेहु ताहि की बाता[2]

नायिका के प्रेम का कंत ने आस्वाद ले लिया, उसकी मादक सुगंधि से वह परितृप्त हो गया नायिका भी यह आज ही समझ पाई है-

पिउ कर मर्म आज मैं जाना, पिउ बिनु नेम न और सुहावा,

पिउ की प्रीति प्रान उपराँही, पिउ के बिना प्रान तन नाहीं[3]

1- मधुमालती, पृ0 307, छ॰ 354

2- चित्रावली, पृ0 30, छ॰ 122

3- हंस जवाहर पृ0 185

उपनायिका :

उपनायिकाओं में भी प्रेम का उत्कर्ष है उनका प्रेम निःस्वार्थ है, त्यागपूर्ण है कौलावती के हृदय में कुवंर का रूप यम के समान हृदय में समा गया वह आश्चर्य हो खड़ी होकर देखती ही रह गई।

देखत रूप कुवंर कर रही, अचक होइ ठाढ़ी[1]
जम होई हृदय समाइ गा, लिहेसि जनु जिउ काढ़ी।

मैंना को अपने प्रिय पर गर्व है वह चांदा से बड़े गर्व के साथ इस का उद्घाटन करती है कि मेरा प्रिय ऐसा गण-गंधर्प है कि सभी उसका बखान करते हैं। मेरे प्रिय पर स्वर्ग की अप्सारायें आसक्त हैं वह तुम्हारे जैसी पापिन से पॉव भी नहीं धुलायेगा।

मोर पुरूष खाड़इ जग जानइ, गन-गन्ध्रप सब रूप बखानइ
पंडित पढ़ा खरा सहदेऊ, चारि वेद जिति जाइ कै
"भीमबली भोजकर- जोरा"

मोर पिउ सरग क आछरि रावइ, तोहि जैसी पहि-पॉवन धुलावोहें[2]
भाई-भतार-तोरबिगरैता जानहुँ संवर आहि।

1- चित्रावली पृ० 80

2- चंदायन, पृ० 250, छ० 257

मैना चांदा को दो टूक जवाब देती है उसे अपने पति पर पूर्ण विश्वास है। यहाँ भारतीय-नारी का पति पर पूर्ण आस्था है।

दिवस चारि तुम देह भोगायेहु, साईं मोर का घाटि जायेहु[1]
भवंर की नियरे बसई, जइ कली भांति भुलाइ
खिन लई बास रस सुमिरी कवंल सिर जाइ

नायिका प्रेम की डोरी बांध चुकी, वह अब छूट नहीं सकती अब तो प्राण जाने पर ही वह छूटेगी जैसे दीपक पर पतंगे की प्रीति रहती है वह तभी उसे छोड़ता है जब उसके प्राण नहीं रहते।

"बांधी डोरी प्रेम की, बासो जायन छूट[2]
दीपक-प्रीत पंतग ज्यों, प्रान दिये पर छूट

1- चंदायन, पृ0 252, छ. 229

2- चित्रावली, पृ0 87, छ. 18

सौतदाह

असूया : नायिका

नारी मनो-भाव की सबसे संवेदन शील संवेद्य है असूया, यह परम्परा सदियों पुरानी है। नारी कितनी ही उदार-मना क्यों न हो, किन्तु इस परिप्रेक्ष्य में उसका मनो-जगत अत्यन्त संकीर्ण है। वह सर्वस्व-न्यो-छावर कर सकती है किन्तु अपने प्रेम का विभाग होते नहीं देख सकती, उसकी कोई प्रति-वेशिनी हो उसे स्वीकार नहीं।

और कवि जगत का ब्रह्मा नारी के इस भाव का निरूपण करके अपने काव्य जगत के मर्मो-भूमि का निरूपण करता है।

समस्त सूफी काव्य में असूया भाव का दृश्यांकन बड़ी सूक्ष्मता एवं कौशल-चातुर्य से कवि ने निरूपित किया है।

इन विवादों में अनेक प्रकार के रंग, भाव सूफी काव्य में बिखरे पड़े हैं, नायिका उपनायिका का आपसी द्वेश, ईर्ष्या, जलन, उपालम्ब गर्व, घृणा, दोषारोपण, अपशब्दों का प्रयोग[1], एक दूसरे को न्यून दिखाने की प्रवृत्ति, सतीत्व दोष, न्याय-अन्याय द्वारा एक दूसरे का लांछित करना[2] बदले की भावना अपने आपको सौन्दर्यवती बताना, यहाँ तक की स्थिति तो संतुलित है। किन्तु नारी-रूप के उस वर्णन में यथार्थ के धरातल पर

1- चंदायन, पृ0 252, छ॰ 252

2- चंदायन, पृ0 208

कवि का वर्णन श्लाघनीय हो जाता है,जब दो सौत आपस में मार-पीट करती हैं, नग्न हो जाती हैं यहाँ तक कि उनके अंग रक्त-रंजित हो उठते हैं।[1]

इस कलह की सूत्रधार कहीं ननद दूती, या घर में आने जाने वाली दासी होती है।

इस विवाद के इति रूप में "धरहरिया" में काव्य का नायक है। जो "नायिका" "उपनायिका" का पति है यहाँ पति कहना इसलिए उपयुक्त है कि सूफी काव्य में पति और पत्नी की मान्यता ही सर्वोपरि है। कुछ भी हो किन्तु सौतशल्य कभी नहीं मिटता।

सपत्नीको (को वाइफ) अंग्रेजी में, ऋगवेद में भी समर्पित चित्रण आया है पाली में, "सवत्ति" या "सवतिया" अवधि में "सवत" सवति, "सवतिन" रूप प्रचलित है। सवत शब्द से ही सौतेली माँ, सवतिया डाह, सवति कपूत सौतिक झार, सौतेला भाई, आदि प्रयोग यह प्रमाणित करते हैं कि सपत्नी परम्परा की जड़ बहुत गहरी है।

पारिवारिक कलह और उससे उत्पन्न अशान्ति में सपत्नी प्रथा का बड़ा हाथ रहा है।

समस्त महाकाव्यों में असूया-भाव के चित्रण का यही कारण है। पुरूष के धैर्य, उसकी चातुरी, सहन शीलता आदि का परीक्षण नारी के

1- चंदायन, पृ0 255, छ॰ 260

इसी मनोवृत्ति के अन्तर्गत होती है।[1]

मानस की कैयेयी का कलह इसी मनोवृत्ति के अन्तर्गत है।[2] यह मनोवृत्ति रासो काव्य ग्रन्थ में भी चित्रित है।

नैहर जनम भरब बरु जाई, जियत नकरब सबतसेवकाई

वह स्वर्ग जैसी गृहस्थी, भरत जैसा पुत्र, सुरेन्द्र सखा, जैसा महा प्राक्रम शाली पति, सबको दासी मंथरा के आग लगाने पर त्याग कर स्वयं कूप में गिरने को तैयार है।

परउं कूप तुअं बचन पर, सकउं पूत पति त्यागि[3]
कहसि मोर दुखु देखि बड़, कस न करत हित त्यागि

जायसी के काव्य "पद्मावत्" में ईष्या का आरम्भ नागमती [4] पद्मावती विवाद खण्ड से होता है। दूती द्वारा यह आग लगाई जाती है, रत्नसेन के चित्तौर लौटने पर नागमती उल्लसित हृदया है। श्लेष के माध्यम से, उसकी बाटिका पति द्वारा सींची जाने पर हरी भरी हो गई है, यहां पद्मावती को रत्नसेन बड़े कठिन परिश्रम, साधना के बाद पुरुषार्थ से लाया है, यह वह नवेली नारी कैसे बरदाश्त करेगी, वह

1- जायसी काव्य प्रतिभा और संरचना, डा० गुप्त, पृ० 41-42

2- मानस की महिलाए, रामानन्द शर्मा, पृ० 332

3- रामचरित मानस अयोध्या काण्ड, पृ० 391

4- जायसी ग्रन्थावली पृ० 560 छं 465 ,राज नाथ शर्मा,

गौरवर्ण नागमती-श्याम-वर्णा, कवि ने इनके नाम भी साभिप्राय दिये है। पूरे प्रेमाख्यानक काव्य में जायसी जैसा श्लेष चमत्कार और सौतदाह कही नहीं है चंदायन मृगावती, में यह चमत्कार नहीं है किन्तु चित्रावली में सौतदाह का उत्कर्ष शिखर पर है। मधुमालती में इस मनोवृत्ति का अभाव है, क्योंकि उसमें सौत नहीं है।

पद्मावती दूती द्वारा यह सुनकर कि उसकी फुलवारी हरी भरी है उसे बरदाश्त नहीं, कि नागमती की फुलवारी भ्रमर के साथ मिलकर रस-विलास करे।

"जाही जूही तेहिं फुलवारी, देखि रहसि सहि सकहिं नबारी[1]
दूतिन्ह बात नहिये समानी, पद्मावती कहा सो आनी"

पद्मावती अपने क्रोध को नहीं रोक सकी वह तुरन्त सखियों के साथ सौत "नागमती" की फुलवारी में बिन बुलाई पहुँच जाती है। सौत दाह का ज्ञार इतना तीखा है कि वह अपनी अन्तर्तीक्ष्णता को भीतर ही भीतर दबा कर उसकी फुलवारी में जाती ही नहीं वरन् दोनों, भीतर से सुलगती उपर से शान्त एक पाट पर बैठती है।

"सुनि पद्मावती रिसि नसंभारी, सुखिन्ह साथ आई फुलवारी,[2]
दुवौ सवति मिलि पाट बईठी, हिय विरोध मुख बातें मीठी।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 561 छ. 466

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 561, छ. 446, राजनाथ शर्मा

मृगावती की नायिका अपनी सौत को ताना देती है कहती है राक्षस द्वारा छोड़ी हुई तूं अत्यन्त अपवित्र है।

कौन लाइ मुख बोलसि नारी, बरबस पितै सो मे लि अडारी[1]

राकस कहं जो दीहै आनी, सो बोले आपन कहं रानी।

वह उससे रानी होने पर भी साधारण स्त्री की तरह बाद-बिवाद कर रही है। वह अपने मायके ससुराल की सम्पन्नता, अपनी आदर सत्कार की विशेषता का बखान करती है सौत के मायके द्वारा अनादर की आलोचना करती है।

यहीं नायिका का मानसिक धरातल संकुचित हो गया है। वह साधारण नारी की तरह अपनी सौत से उलझ रही है।

सोवत छाँड़ि बात नहीं पूछी, अकेले बोली हमसेउं जूझी[2]

तू जो किंहर सोहागिनी नाउ, मैके ससुरे कितहुँ नठाऊ

हो मैके सुठि मै नेउ आदर औ ससुरे बहु चाउ,

तूँ विलखें नहिं गारौ दुहुठा मान कितहुँ नसाउं,

नायिका की स्मरण शक्ति तीव्र है किसी प्रसंग वश प्रिय नायिका से मान-मनुहार के अन्तर्गत कह दिया होगा की "उंहारे चेरी एक सेव कराही"[3] की वह तो मेरी चेरी समान सेवा करती है। इसी बात को वह सौत के समक्ष उद्घाटित करती है कहती है कि तूँ पति द्वारा उपेक्षिता है मुझे तो

1- मृगावती कुतुवन , पृ0 378, छ. 399

2- मृगावती कुतुवन, पृ0 379, छ. 401

3- मृगावती कुतुवन, पृ0 372, छ. 388

प्राप्त करने के लिये मेरा प्रिय सात योजन तक चला गया।

नींक कहा सो अवसर पाई, लागिस करे सौत कर दाई[1]

मोहिं लाग जोजन सैसाता, तोहिं छाँड़ि पुछेसि नहिं बाता,

चित्रावली की मनोवृत्ति सौत के जलन से पूर्ण प्रभावित है।

बरजी सखी सहेली सोइ, सेज कवल दरसैा जनिकोई[2]

कौलहि भौरे संग लटा, चित्रावलि जिउ खरके कंटा

चित्रावली का सौतदाह अत्यन्त कठोर रूप में कवि निरूपित करता है। वह इस विषय पर कोई समझौता नहीं करना चाहती है। वह हर उस व्यक्ति के हाथ कटवा देगी जो उसका संदेश लायेगा, और उस जिह्वा को कटवा देगी जो उसकी सौत का नाम लेगी।

चित्रावली सौत से सम्बन्धित कोई वस्तु नहीं देखना चाहती है।

औ जो कवंल कहे मुख भाखी, आपन नाउं सेमिरतक राखी[3]

कौल चितेरा जो लिखे, ततखन कलपौ हत्थ।

मुख परगासे नाव जो, रसना खोउं अकत्थ।

चित्रावली अत्यन्त संवेदन शील "कलहंन्तारिका" नायिका के रूप में आती है। उसे प्रिय मिलन के समय सौत की छाया दिखाई पड़ती है।

तुम संग सुन्दरी नादिएक परगट सूझै मोहिं[4]

रूप सलोना आपना काह दिखवों तोहिं

1- मृगावती कुतुवन, पृ0 380, छ० 403
2- चित्रावली पृ0 132, छ० 541 स० मनमोहन वर्मा,
3- चित्रावली, पृ0 130, छ० 531
4- चित्रावली पृ० 116 छ० 38

पद्मावती का यहाँ रूप गर्विता के रूप में कवि व्यंजना करता है। वह दर्पोक्ति के साथ जयनाद के स्वरों में कहती है - "जौपिय आपन तौंका चोरी" नायिका सौत को अपनी मुखापेक्षी बनाने के लिये कितने चातुर्य का प्रदर्शन करती है।

मैं हौं कवल सुरूज कै जोरी, जौपिय आपन तौका चोरी[1]
हौं ओहि आपन दरपन लेखौ, करौ सिंगार मोर मुख देखौ
मोर बिगास ओहिक परगासू, तू जर् मरसि निहार अकासू
हौं ओहिं सो वह मोहिं सो राता, तिमिर बिलाइ होत परभाता

मृगावती रानी हैं किन्तु सौतदाह का उत्कर्ष मृगावती में भी दृष्टव्य है। अपनी सौत को ताना देते हुए कहती हैं।

कहत काह मैं सुने न पावा, यह रे कहति लाज न आवा[2]
कौन लाइ मुख बोलसि नारी, बरबस पितै शी मेल अडारी
राकस कह जो दीसै आनी, सो बोले आपन कहं रानी।
सोवत छोड़ बात नहीं पूछी, अकेले बोली हमसेंउ जूझी
तू जो किहंर सुहागिनी नाउं, मैके ससुरे कितहुँ नठाऊँ।

स्त्रियों की असूया भाव के अन्तर्गत स्मरण शक्ति की विवेचना सूफी काव्य में कवि ने किया है। कभी प्रेमालाप के अन्तर्गत नायक अपनी

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 569 छ. 472 रा0ना0 शर्मा।

2- मृगावती, पृ0 379, छ. 40।

पूर्व व्याहता पत्नी के विषय में कह दिया होगा कि वह तो चेरी समान मेरी सेवा करती है। नायिका उस प्रसंग के अनुसार अपनी सौत को ताना देती है।

"उहोरे चेरी एक सेउं कराहीं, चरनि पखारि मान भराई, [1]

"नींक कहा सो अवसर पाई, लागिसि करै सौत कर दाई[2]
मोहिं लागि जोजन सैसाता, तोहि छाँड़ि पुछेसि नहीं बाता

इस प्रकार अपने प्राप्त करने की कठिनता का दृष्टात देती है और सौत को प्रिय द्वारा बात भी न पूछे जाने का ताना देती है।

चादां सौत की जलन से आक्रामक हो उठती है-

"दवरि चादं बहु बाहं पंसारी" 5

और पद्मावती क्रोध से विफर उठती है वह नागमती को नागिन की तरह पकड़ लेती है-

"पद्मावती सुनि उतर न सही नागमती नागिन जिमि गही"[3]

चादां अपनी सौत से गुथ्थम-गुथ्था हो जाती है जिससे सारा अंग रक्त रंजित हो उठता है।

"नखंतहि अंग जनु टेसू फूला"[4]

1- मृगावती, पृ0 372, छ॰ 388

2- मृगावती, पृ0 380, छ॰ 403

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 574, छ॰ 476, रा0ना0 शर्मा

4- चंदायन पृ0 255 छ॰ 262

5- चंदायन, मुल्ला दाऊद

नायिका अपनी सौत को कहती है अरी नागिन तूँ किसी को डसने की आसा में जाकर कहीं छिप रहो। इसका आशय यह है कि नायिका मलयागिरि चन्दन से सुवासित अंगों की स्वामिनी है, उसकी सौत नागमती है जो नागिन के समान कहीं उसे न डस ले अतः कहीं और चली जाये।

पुहुप बास मलयागिरि निरमल अंग बसाइ[1]

तूँ नागिन आसा लुबुध डसंहि काह कहु जाइ

सौत के श्याम वर्ण पर नायिका कटूक्ति कहती है उसके वाक्य वाण इतने तीक्ष्ण है कि सुनने वाला अवाक् हो जाता है उसके श्यामल अंग के निकट जो स्त्री रहेगी वह भी श्याम वर्ण हो जायेगी, जिस स्थान पर खड़ी होगी वह स्थान काला हो जायेगा।

ठाढ़ि होसि जेहि ठाँय मसि लागै तेहि ठाँव[2]

तेहितर राध न बैठो, मकु साँवर होइ जाइ।

प्रिय के साथ सौत के रात व्यतीत करने पर नायिका तिलमिला उठती है तीखे शब्दों के बाण संधान करती हुई कहती है।

धूँप न देखहि विष भरी अमृत सोसर चाँव[3]

जेहि नागिन सो डस मरै लहरि सुरूज के आव।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 572, छ. 174, रा०ना० शर्मा

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 176, छ. 6 राम चन्द्र शुक्ल

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 176, छ. 8

चाँदा चालाक, चतुरा एवं पैनी-दृष्टि वाली नारी है, वह पूर्ण रूप से लोर पर एकाधिकार चाहती है तभी तो प्रश्न करती है कि कमल कली सदृश मैना को त्याग कर तुम अन्यत्र क्यों दौड़ते हो? भ्रमर के सदृश जिस फूल से तुम रस लेते हो वहाँ पुनः क्यों नहीं जाते, मेरे चन्द्रकुल पर धूल क्यों डाल रहे हो मुझे संदेह है कि तुम मुझे छलकर चले जाओगे।

इस प्रश्न में नायिका की दृष्टि अन्वेषी है। वह नायक लोर के मानसिक धरातल का तलदर्शी देखना चाहती है, कि क्या यह मुझे समग्र रूप से चाहेगा अथवा भ्रमर समान रस-विलास कर के उड़ जायेगा।

"असि छनि छाड़ि जो अजितई धावा"

"कवल कली जस मैना रावसि, मोरे कुल राका धूर मरावसि" [1]

वह इतनी कठोर और हृदयहीना है कि अपने मन्तव्य में पूर्ण सफल होने की परिकल्पना से वह इतनी पंगु मस्तिष्क हो जाती है कि उसी नारी से कहती है जो सामाजिक रूप से उसके प्रिय की पूर्व ब्याहता है उसी को सचेष्ट करती है आदेश देती है। वह कहती दैव ने मुझे 'लोर' दिया है मैंने उसे भेंट में पाया है। अब इस बात को ढंकी ही रहने दो इसे प्रकाश में लाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

ढाकि मुदिं हुति अधियारी, अब यह बात करहु उजियारी [2]
काह करें तूँ बारसि मैारो, दैव दिन्ह मोहिं पावसि लोरा
अब गरूई होई आछहु मैना, जीभ संकोर राखहु मुख बैना।

1- चंदायन दाउद, छ॰208

2- चंदायन, छ॰ 258

चादां को मैना स्पष्ट जबाब देती है -

सुनहुँ चादं उतरू हमारा, घर मुसियाँ निसि कै उजियारा
नांह लीन्ह मोहिं पड़ा खभारू, काकहुँ अंतहु अरप सिंगारू[1]

मैना कहती है -

"हाँथिन्ह मोर बिआहा लीजै, अउ मोहिं लेती अंन्तसुकीजै
आजू करावहि मोहिं डर लावहिं, अवरू विरोखे रावरि धाई"[2]

मैना वाक्य पटु है वह चादं की तुलना चादां से करती है।

तूँ चौगुन बड़ भेख कावसि, जिनतिकार लेखें बौरावसि
असतिरिया फुनि सती कहावसि धरां धरां जउं फिरि फिर आवसि[3]

यह चादां से कहती है - तेरे मांग सिंदूर पुरित है किन्तु मेरे मांग में तो नित्य करवत, (सिद्ध योगी अपने सिरपर आरा चलवाते थे) चलता है वहीं रक्त धार सिंदूर के रूप में है। तुम्हारे गृह में पुष्पों के हार पहनाने वाले हैं किन्तु मेरे मार्ग तो कटंका कीर्ण है।

तोरे मांग सिदूर संवारे, मोहि भाल नित करवतु सारे
तोरे घर बहुँ फूल हार पहिरावै, मोरे मारग काँठ विछावैं[4]

1- चंदायन पृ0 243, छ० 251

2- चंदायन पृ0 245, छ० 253

3- चंदायन पृ0 248, छ० 255

4- चंदायन पृ0 354, छ० 357

चादां अपनी सौत के साथ अत्यन्त आक्रामक हो उठी हैं वह उसके आभरण तोड़ देती है और बिना विलम्ब किये सखियों के झुरमुट में जाकर छिप जाती है।

"दवरि चादं बहु बाँह पसारी"[1]

अभरन टूटि विथरिगा मैना गइ कुबुलाइ चांद वेगि के देव घर

गई तराइन जाइ।

उसमान की नायिका विक्षिप्त हो उठी है वह उस रास्ते पर अपने व्यक्तियों को आदेश देकर कहती है कि सौत के सागर नगर से यदि कोई भी आये तो उसके समस्त कागज पत्र बलात् छीन लो, कहीं ऐसा न हो कि सौत का संदेश आ जाये और मेरा प्रिय मुझे छोड़कर चला जाये यह मनोभावना उसी नारी में आयेगी जो प्रिय को अधिक चाहेगी, चित्रावली ऐसी नायि-का के रूप में व्यंजित है।

वह सारे सरोवर को कमल विहीन करवा देती है क्योंकि कवंल नाम उसकी सौत का है। यह सौत दाह की अग्नि है जो स्वयं को जलती है। साथ में अन्य को भी दारूण दुख का दाहक बनाती है।

पंथ-पथ पुनि जन बैसावा, सागर नगर जो जन कोउ आवा[2]

छोरि छिनी सब कागज लेहीं, तबही देस पैसारन देहीं

एहि विधि सोइ पंथ सब राखा सस्वर रहेउ न अम्बुज साखा

चित्रावलि चित कै चतुराई, सवति दाह हिय हुते मिटाई

1- चंदायन पृ0 253, छ॰ 260

2- चित्रावली उसमान, पृ0 116, छ॰ 639

पद्मावती सौत दाह से भरी हुई है किन्तु मुख से मीठे शब्दों का प्रयोग करती है नारी का यह जटिल स्वरूप कवि बड़ी सुन्दरता से निरूपित किया है।

"दुवौं सवति मिलि पाट बईठी, हिय विरोध मुख बातें मीठी"[1]

हंस जवाहर की नायिका भी इसी भावना से युक्त है, दोनों सौत बैठी हैं, किन्तु उनके बचन ही शीतल हैं हृदय में सौत-झार की अविरल अग्नि प्रज्ज्वलित है, जो किसी क्षण कराल रूप धारण कर सकती है।

"एक दिन नारी बैठि दोइ तीरा, शीतल बचन औ आग सरीरा"[2]

मानसिक अन्तर्द्वन्द का निदर्शन कवि के सूक्ष्म निरीक्षण का परिचायक है नायिका स्वयं अपने सौत के विलास-सुख को देखने उसकी फुलवारी में आती है उसके यौवन-वाटिका रूप का सूक्ष्मता से अवलोकन करके, अपने मन की ज्वालामुखी को शब्द रूपी गुबार द्वारा निर्गत कर वह अपनी सौत से झुंझलाकर कहती है तू मुझसे मत लड़ अपनी बगीची में रह, कवि का यह चित्रण नारी के चढ़ते उतरते मानसिक भाव का सूक्ष्म चित्र है।

रहु आपनि तूँ बारी, मों सो जूझ ना बाजु[3]
मालति उपम नपूजै, बनकर खूजा-खाजु

जवाहर को अपनी सौत से भय है कि कहीं मन्त्र पढ़ने वाले देश की स्वयं मन्त्र पढ़कर प्रिय को अपने वश में न कर लें।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 561, छ॰ 466

2- हंस जवाहर पृ0 261

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 564, छ॰ 468, रा0ना0 शर्मा

तुम धनि पढ़त सो देश की, भरी पढ़त तुम्ह मांह[1]
बैठे कंत सुपास तुम हम डरपै मन मांह,

जवाहर सहनशील है भोली फिर भी असूया-भाव की हल्की चिनगी उसके अन्तर में कहीं अवश्य है; वह गम्भीर है अन्य नायिकाओं की भाँति उद्दत नहीं। वह अपनी सौत कमोदनी की बात सुनती है और कहती है -

सुनि सो बात कवंल मुसकानी, पीहृदय तब क्रोधरिसानी[2]
एक कहत हौं दस पकराये, गुन अपने सो खोलि सुनाये,

कुमुदनी के उटपटांग शब्दों का जवाहर . प्रत्युत्तर देती है वह कहती है यहाँ तुम्हारा मंत्र नहीं चलेगा सत् रूपी मेरा सुमेरू है जो तुम्हारे मन्त्र बल को नष्ट कर देगा। वह अपनी सौत के माता की ओर इंगित करते हुए कहती है तुम्हारी माँ ने मुझे पर्वत पर डाल दिया किन्तु मेरा कोई अनिष्ट नहीं हुआ।

कैसे पढ़त चलै तहं तोरा, सत्य सुमेरू अहै जह मोरा[3]
मायतोरि गइ पढ़त पढ़ाई, कैसे निलज रोय फिर आई
तब बैरिन मोहि डार पहारा, कैसा नीर भयो जगधारा।

1- हंस जवाहर पृ0 260

2- हंस जवाहर पृ0 260

3- हंस जवाहर पृ0 226

"कमोदनी" द्वारा यह कहने पर कि तुम्हारी बारात लौट गई, तुम पर पुरूष को चाहती है। जवाहर की सौत की बात से आपा खो देती है। यहाँ कवि ने नायिका के क्रोध का स्वाभाविक चित्रण किया है।

कहेसि कि अब जनि, सिर पर डोलसि[1]

सीस नवाय कहु कस बोलसि।

नायिका जवाहर की गम्भीरता समाप्त हो जाती है वह कमोदनी पर ताने व्यंग्य का प्रहार करती है किन्तु वह सत्य कहती है।

बाट चलत धर लीन्हां जोगी,[2]

कोइ बाचै कोइ रहा वियोगी।

जवाहर में आत्म श्लाघा, अपने प्रेम एवं प्रिय पर गर्व है। वह इसका उद्घाटन बड़े गर्व के साथ करती है।

मोहिं करतार भाग अस दीन्हा, तब भो कीरति सब जगदीन्हा[3]

और विधि ने मोहिं आप उबारा, भा जोछार जोदूजे चाहा,

अब वह सहनशील नहीं है क्रोध में कहती है कि तूँ अपने गुण क्या छिपाती हो रास्ते चलते मेरे प्रिय का हरण कर ली, पिता के मुख में कालिख लगादी।

तै अपने गुन कैस छिपावसि, मसि लावसि मुख सीस उठावसि[4]

बारी बरस जो चांचर लैकर छार पिता मुख मेली।

1- हंस जवाहर पृ0 262

2- हंस जवाहर पृ0 262

3- हंस जवाहर पृ0 262

4- हंस जवाहर पृ0 262

और जवाहर का क्रोधावेग सीमा पार कर चुका है अन्य काव्य नायिकाओं की भाँति जवाहर भी अपनी सौत को झकझोर उठती है।

"दीन्ह सौत झकझोर मुख मोरी"[1]

और अन्तिम गुबार रूप में वह बोल पड़ती है-

पिउ कारन माथि बैठाइ, मांथ देत लागि संहारवाई[2]

नागमती को पद्मावती भुंजगिनी काली नागिन स्वयं को श्वेत हंसिनी कहती है वह कहती है मैं कंचन कली हूँ रतन में सजाई हुई हूँ, तू उजाली चंद्रिका की राहू के समान प्रकाश हरण करती है।

तूँ भुजइल हौं हंसिनी गोरी, मोहिं तोहिं मोति-मोति कर ओरी
कंचन करी रतन नग बाना, जहां पदारथ सोंह न आना,
तूँ तौ राहूँ हौ ससि उजियारी, दिन दिन पूजा निसि अंधियारी.[3]

चंदायन की नायिका और आगे बढ़ जाती है वह तो दर्पोक्ति गर्वोक्ति में पद्मावती से भी आगे बढ़ जाती है वह कहती है कि मेरी सेवा पंडित मुनि लोग करते हैं बाल वृद्ध मेरे चरण छूतेक हैं जिससे उनके पाप विनष्ट होते हैं। तू तो गिरी हुई है। सभी के साथ पाप कर्म करती है चाहे वह देवर, जेठ या कुनवा परदेशी, तेली भूंज, कोयरी, धोवी, कोई जाति का हो यह झूठा लांछन व्याहता पत्नी पर चादां बिना साक्ष्य के

1- हंस जवाहर, पृ0 262

2- हंस जवाहर, पृ0 262

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 1.1,4, छ॰ 2

लगा देती है।

> पाटी पढ़ो काहें नाहीं पंडित मुनिवर सेव कराहीं, [1]
> बार बुढ़ि जई पायन लागहि। पाप केत पुरूषा के भागहिं।
> सात छिनाल घालि तूँ करसि, काहें कसहुं जउ लीते मरहुँ
> देवर जेठ मांह संग लेसी, मीत्र, कुनबा परदेशी।
> तेली भूंज और कोयरी धोबी, नाउचेर

चांदा झूठ बोलने में कोई कसूर नहीं छोड़ती वह कहती है गाय चराने वाला दूध निकालने वाला मुझे अंकों में लेगा। जो मेरे द्वार पर गाय चराता है।

> गाई चराई करहिं दुबाहा, तेहि सेंती मोहीं अंकरकु लावा
> तोर भतार चेर उरगावन, आछहि पवन दुबार[2]

उपनायिका : असूया –

उपनायिका का असूया-भाव अत्यन्त तीव्र है किन्तु इनके इस भाव का उद्दीपन नायिका होती है। नायिका इस भय से कि कहीं मेरी सौत मेरे प्रिय को अपने रूप-शुषमा से आकर्षित कर मुझे प्रिय द्वारा उपेक्षित न करवा दे।

सर्वप्रथम नायिका उपनायिका के पास आती है तभी यह विवाद प्रारम्भ होता है।

1– चंदायन दाउद, पृ0 2, छ० 345
2– चंदायन दाउद, पृ0 256, छ० 249
3– जायसी ग्रन्थावली, पृ0 562, छ० 467, राजनाथ शर्मा

नागमती पद्मावती के आरोप प्रत्यारोपण के द्वारा आहत् हो उठती है वह स्पष्ट शब्दों में कह देती है -

जो सरवर जल महं बाढै, रहै जो अपने ठॉव[1]
तजि केसर जो कुईंहि जानि न पर अबंराव

पद्मावती के अर्ध-अनावृत्त वक्षस्थलों की ओर दृष्टिपात करते हुए कहती है। कमल गट्टे सदृश तू अपने अंगों का प्रदर्शन करती है।

कॅवल सो कौन सोपारी रोठा, जेहिके हिये सहस दस कोठा, [2]
रहै न झॉपि आपन गटा, सो कित उघेलि चाह पर गटा।

नागमती उसके अन्तर के स्वरूप का वर्णन बड़ी चतुरता से करती है कि वह अन्दर कितनी असुन्दर है उपर से ही सौन्दर्यवती है ऐसे हृदय को तो जला देना चाहिए।

"उपर राता भीतर पियरा, जारौ ओहि हर दी असजियरा[3]

नागमती हृदय के अति संवेदनशील एवं कोमल पक्ष का मर्म जानती है तभी वह उस पर आघात करती हुई कहती है।

सब निसि तपि मरसि पियासी, भोर भये पावत निसी बासी[4]
सेजवा रोइ रोइ भरसि, तूॅ भोसों का सरवस करसि।

अन्ततः दोनों के सब्र का बॉध टूट पड़ता है और एक दूसरे को पकड़ते हुए जूझ उठती हैं -

वह ओकहीं वह ओकहिं गहा, काह मरौ तस जाइ न कहा[5]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 562, छ. 467 राजनाथ शर्मा
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 471, छ. 471
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 471, छ. 471
4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 574, छ. 474
5- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 574, छ. 476

चंदायन की सौत मैना लोरक के जाने से दुखी है, वह चूल्हे में आग नहीं जलाती, घड़े में पानी नहीं रखती। वह न कान से सुनती है न मुख से बोलती है। वह अत्यन्त अन्तर्मुखी हो उठी है।

आगि चूल्हा घरा न पानी, लोरिक परिहुँ रविनुनुसुखानी[1],

दरस करै न लोर सो मैना, स्रवनहिं सुनै बकत नहिं बैना,

नागमती रत्नसेन से सौति या दाह में क्षोभ से भरी हुई कहती है। यहाँ द्वेष क्षोभ की व्यंजना कवि ने स्पष्ट रूप से किया है – यहाँ बिजली और वर्षा का अप्रस्तुत उपमान कवि की कल्पना को सूक्ष्मता को दर्शाता है।

"काह हंसौ तुम मोसो कियो और सो नेंह,

तुम मुख चमकैं बिजूरी मो मुख बरसे मेंह"[2]

मृगावती की सोते रूप मनि आक्रोश से भर उठती है वह कहती है कि मेरे मरने के उपरान्त तुम्हें हत्या-दोष लगेगा अतः ईश्वर से डरो और इससे बचो? मुझे अपनाओ नयी पत्नी देखकर मुझे मत भूलो।

नवतिय देखि आदरस खाई, मरि हौ तिह परहत्यौ लाई[3]

दइ कर डर चित्त करहु विचारी, हत्या निबहे किये हु भारी।

मैना भी आक्रोशमयी हो उठती है। वह देवता से कहती है हे देव उसे तुम भक्षण करो, जो दूसरे के पुरूष का हरण करती है अपना पुरूष छोड़ दूसरे को चाहती है एक विवशनारी के आर्त स्वर का कवि ने निरूपण किया है।

1- चंदायन पृ0 228, छ॰ 228

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 552, छ॰ 459

3- मृगावती पृ0 340, छ॰ 336

"अहो देव तेहिं खायेहु जो पर पुरूष देराव"

अपनई सेज छाँड़ि निसि, "अन्तइ फिरि फिरि धाव"[1]

यहाँ हंस जवाहर की उपनायिका "कमोदनी" सौत-दाह से जल रही है। वह जवाहर को छोड़ती नहीं जितना अधिक दर्शित शब्दावली का प्रयोग हो सकता है करती है। वह अपने आप पर आरोप लगाने पर कि तुमने मेरे प्रिय को हरण कर लिया उत्तर देती है, "पिउ अपने जो चाहा सो कीन्ह"

जवाहर को ताना देती है। तुम्हारे क्रिया कलाप को सारा संसार जानता है तुम तो घर में ही बैठकर बाल्यावस्था में संसार घूम चुकी हो।

तुम जस अहौ भुलि उजियारी, जग जानौ का कहौ उघारी[2]

बारहिं पढ़ौ बेद कह ज्ञानी, घर बैठ्यो डार्यो जग छानी।

चरित्र को लांछित करते हुए कहती है।

कबहुं भवंर पतंग लोभायो, अपने कुल की कुली कहायो[3]

काहू दीन्हों छाप निसानी, कबहु पठ्यो शब्द सयानी

एक बरात बुलायो बारा, दूसर रखियों, भांझ सोनारा।

जवाहर के भाग्यवादी विचार को सुनकर वह कठोर शब्दों में कहती है।[4]

तुम आपन मुख रह्यो सभारी, नाहित मुखते आवत गारी।

1- चंदायन, पृ0 242, छ. 249,

2- हंस जवाहर , पृ0 261

3- हंस जवाहर , पृ0 261

4- हंस जवाहर , पृ0 262

मान :

"मान" और क्रोध का सम्बन्ध एकात्मक है। जायसी ने अपने काव्य में इस बात पर जोर दिया है मान उतना ही करना चाहिए जिससे प्रिय दुःखी न हो। मान का अर्थ "मनस्वी" से लगाया जा सकता है किन्तु मनस्वी अहंकार के अर्थ में आता है, और यदि अहंकार है तो जल्दी टूटता नहीं। किन्तु मान क्षणिक होना चाहिए तभी उसकी सार्थकता है। "मान" करतरिसि मानै चाडू" मान मनुहार के समय यदि क्रोध आगया तो "मान" का सुख जाता रहता है।

मान "चाडू" मराठी में भी मान मनुहार के आशय में प्रयुक्त है विद्यापति ने भी मान की परम्परा निभाई है। सूर की गोपियाँ भी मान करती है "मान के कठोर रूप के दर्शन मानस की कैकेयी में हुआ है। वह कोप भवन में लेटकर मान के माधुर्य को समाप्त कर देती है। प्रसाद ने मान का निरूपण प्रकृति के नारी रूप में मानवीकरण के अन्तर्गत किया है। विद्यापति ने भी "मान" को गिरि के समान गम्भीर कहा है।

केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि नेवारई[1]
मानहुँ सरोष भुअंग भामिनि विषम भाँति निहारई।

सिन्धु सेज पर धरा वधू अब तनिक संकुचित बैठी सी[2]
प्रलय निशा की हलचल स्मृति में, मान किये कुछ बैठी सी।

1- रामचरित मानस अयोध्या काण्ड, पृ0 395

2- कामायनी आशासर्ग, पृ0 24, जयशंकर प्रसाद

गिरिसम गरूव मान जहिं मुंचसि अपरूप व्यवहार[1]

प्रेमाख्यानक काव्य की नायिकाओं का "मान" अल्प कालिक है। पद्मावती रत्नसेन के थोड़े प्रयास से अपना मान तोड़ देती है। चंदा, चित्रावली, मिरगावती, जवाहर सभी में मान के स्वरूप प्राप्त हैं।

जायसी ने "मान को बड़े सुन्दर ढंग से व्यंजित किया है सखियों द्वारा उन्होंने यह कहलवाया कि प्रिय जैसी आज्ञा दे वैसे रहो "मान" थोड़े समय में ठीक है प्रिय है। अधिक मान करने से उसका महत्व जाता रहता है।

"मान न करसि पोढ़ कर लाड़ू,मान करत रिसि मानै चाहू"[2]

चांदा भी बड़े अभिनव के साथ मान करती है -
वह देखती है लोरक कितने कष्टों के साथ उसके पास दिवार फांद कर आया है किन्तु यह जानकर भी वह जाकर पलंग पर सो जाती है।

"चांदहि देख लोरिक गा आई सेज सुभर होइ विसई जाई।[3]

मृगावती ने देखा कुवंर आ रहा है, उसने तुरन्त उसकी तरफ पीठ फेर दिया, मान का यह स्वरूप भी अभिनव है।

"जहाँ बैठि मिरगावती आहीं, कुवंर कयेहु पीठ दैरही,

मन मँह बुझि कुवंर असकहू मिरगावती कुहानेउ अहा।[4]

1- विद्यापति की पदावली डा० शुभा कपूर पृ० 226, छं० 138

2- पद्मावत, पृ० 120

3- चंदायन, पृ० 19, छ० 197

4- मृगावती, पृ० 386, छ० 387

मृगावती के मान में लय बद्धता है वह बैठने के पश्चात् उठकर चलने लगती है, वह यह दिखाना चाहती है कि मैं मनस्विता हूँ - नायिका के मान में भोलेपन की झलक स्पष्ट परिलक्षित है।

"मान भाव से चली सुनारी, दौरि कुंवर कर गहिपियारी"[1]

मधुमालती को मान करने आता ही नहीं -

देखि कुवंर बरकामिनी धाई, प्रित अन्तर खिन लिहे रि उचाई[2]

कहेसि मान मोहिं बूझी न नाहां मैं तजिमान देउं गलबांहा।

उपनायिका मान :

उपनायिकायें भी मानवती हैं किन्तु अधिक मान नहीं करती,

मैना मानवती नायिका है - वह चांद से लोर का सम्बन्ध सहन नहीं कर पाती है और यहाँ मैना का मान ईर्ष्याजन्य है।

राति जाई तउ नारी मनाई, चांदहु चाही अधिक परिवाई

पहिलेहि दुख जउं नारी बखाना, राखेसिमान लोर जस जाना।[3]

रूपमनी भी सौत के प्रति ईर्ष्याजन्य भाव प्रकट करते हुए मान करती है वह कुवंर से कहती है मेरे पास क्यों आये हो। मृगावती के पास जाओ और उसके वस्त्र खीचो इसमें नारी के अन्तर्मन की भावना स्पष्ट ईर्ष्या से युक्त प्रदर्शित है।

1- मृगावती पृ0 322, छ० 302

2- मधुमालती, पृ0 120 छ० 12

3- चंदायन पृ0 287, छ० 393

पिता सपथ सो छोंड़ि न चीरू, जाई गहउ मिरगावती चीरू।[1]

अब जिउ मोर न तोहि मिलाई, काह करौं अब सखिन्ह पठाई।

"तिही तिरी पंसगै कवन गुन मान केतन कराइ"

नागमती भी रत्नसेन के "चित्तौर आगमन खण्ड" में चित्तौर से आने पर नारि जनित इर्ष्या भाव से प्रेरित हो अपना मुख दूसरी ओर फेर कर बैठ जाती है।

"नागमती मुख फेर बइठी, सौंह नकरे पुरूष सौं दीठी,[2]

और इतना ही नहीं वह वाक्य पटु एवं चतुर है यहाँ वह मानवती नायिका के साथ'कलहन्तारिका'नायिका के स्वरूप में भी चित्रित है वह रत्नसेन के प्रसन्न मुख को देखकर कितने वाक्य चातुर्य के साथ अपना रोष और मान प्रगट करती है - जिसमें एक ही साथ दोनों भाव दृष्टव्य है प्रसन्नता एवं दुख -

"काह हंसो तुम्ह मोसो कियेउ और सोनेह

तुम्ह मुख चमकै बीजुरी मो मुख बरिसे मेह"[3]

कौलावती मान नहीं करती बल्कि अपने प्रिय से विनम्र प्रार्थना करती है कि तुम चित्रावली को जब तक नहीं प्राप्त करोगे तब तक तुम्हारा मेरी ओर हंस कर देखना एवं बोलना ही लाख एवं करोड़ों के समान है। मुझे

1- मृगावती, पृ0 366, छ. 378

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 552, छ. 459

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 552, छ. 452

तो रस भोग की रीति अभी ज्ञात ही नहीं है। मैं तुम्हारे चितवन, प्रेम और हंस कर बोलने को ही प्रेम समझती हूँ।

"कौले कहा रहसि सुनि साई चित्रावली पावहि जब ताहीं
हंसि बोलहु देखहु ममओरा, जानहु पायो लाख करोरा,
हौं अबहि रस रीति न जानौं, चितवनि हंसनि प्रेमरस मानौं।[1]

कौलावती की विचारधारा है कि तरूणियां .. मान नहीं करती बल्कि मान उनके स्वभाव का एक अंग है।

घूँघट ओट रहहि मुख गोई, तरुन्नि मान सुभावहिं होही [2]

कौलावती अपने प्रिय को प्राण प्रण से चाहती है वह ऐसे घूँघट और लाज को जला देना उचित समझती है जो प्रिय और प्रिया के बीच अन्तर बनाये।

कौलावती मन कीन्ह गियाना, कौन मान जो कंत न माना[3],
मोहिं प्रियतम जो अन्तर होई, घूँघट लाज जाउ जरि सोइ
कुलिस ते कठिन सो आहि करेजा, जोतिय मान न कर पिउ सेजा।

1- चित्रावली , पृ0 99, 1, 2, छ॰ 406

2- चित्रावली, पृ0 98, 3, छ॰ 402

3- चित्रावली, पृ0 983, छ॰ 402

नायिका क्रोध :

सूफी काव्यों की नायिकाएं क्रोधी है चांदा का क्रोध तो इतना प्रखर है कि वह अपनी सौत को दौड़ कर पकड़ती है जिससे उसके हार, आभरण सभी टूट-फूट जाते हैं।

"दंवरि चांद बरू बाहं पसारी,
हार टूटि मोती छहराने, "[1]

पद्मावती का क्रोध कुमारी होकर भी, रत्नसेन के लिए समर्पित हो उठती है वह कहती है कि मैंने अपने प्राण हाथों में ले लिया है हमें कोई अलग नहीं कर सकता। इसमें उसके दृढ़ता का प्रबल, समाज से टकराने की हठ, और अपने प्रेम की पराकाष्ठा पर अग्रसर होने वाली प्रणयी नारी।

'कार्दी प्रान बैठी ले हाथा, मरौ तो मरौ जियौ एक साथा, [2]

दूती जब आती है उसने उस दूती को इतना फटकारा कि जो सिंह पुरूष है, जिस कुल पर उसका अधिकार है भला सियार वहाँ कैसे बसेरा कर सकता है यहाँ उसका रूप आक्रोश से भरी प्रिय पर गर्व करने वाली भारतीय आदर्श नारी का है।

"कुलकर पुरूषसिंह जेहिं खेरा, तेहिं पर कैस सियार बसेरा
हियाफार कुकूर तेहिं केरा, सिंह ह्रितजि सियार मुख हेरा" [3]

1- चंदायन, पृ0 253, छ. 260

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 42, छ. 11

पद्मावती रत्नसेन की पूर्ण समर्पिता प्रेमिका एवं पत्नी है देवपाल की दूती पर वह अपने क्रोध का प्रदर्शन करती है। कितना स्पष्ट बोलती है पद्मावती -

कुमुदनी बैन सुनत हिय जरी, पद्मिनी उरहि आग सनु परी,
रंग ताकर हों जारौं काचाँ, आपन तजि सो पराये राँचा[1]

चित्रावली भी क्रोधी है वह कुटिल कुटिचर के उपर क्रोध करती है जिसने उसके प्रेम का भेद खोला था-वह इतनी क्रोधावेग में है कि उस कुटिल को बाँध कर मंगवाती है उसे अग्निकुण्ड में डालने का आदेश दे डालती है।

"भोरहिं चित्रनि जन दौरावा, कुटिल कुट्टिच्चर बाँधि मंगावाँ,
आज्ञा चेरिन आनि सुनाई, अगिन कुण्ड लैडारहि साई।
परमदोष जासो कहु होहीं, ताही कुण्ड लैडारहु सोई
बैरिहि अगिन कुण्ड मह मेली, करहि दोउ निसिदिन सुखकेली"

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 243, छ. 12

2- चित्रावली उसमान, पृ० 132, छ. 541

उपनायिका क्रोध :

नागमती के अन्दर रूप गर्व है वह श्रृंगार करके अपने सौन्दर्य पर गर्व करते हुए तोते से पूछती है -

कै सिंगार कर दरपन लीन्हा, दरसन देखि गरब जिउ कीन्हा[1]

नागमती में क्रोध भी है वह सुये की भावना और भाव अपने प्रति समझकर वह उसके प्रति क्रोधित हो उठती है -

धायदामिनी बेगि हंकारी, ओहि सौंपा हियैरिस भारी

देखि सुआ यह है मंद काला, भयउ नताकर जाकर पाला,[2]

नागमती रत्नसेन के संयोग हो जाने पर प्रेम- रंग चढ़ जाने पर हंसकर अपने सौत के बारे में पूँछती है और यह जानना चाहती है कि क्या पद्मावती उसके रूप से ज्यादा सुन्दर है? इस समय नागमती के हृदय में सौतिया डाह, ईर्ष्या, कुत्सा, और घृणा, का बड़ा सजीव चित्रण हुआ है सामान्य नारी के रूप में अपनी समस्त दुर्बलताओं के साथ नागमती के भावों का मनोवैज्ञानिक चित्रण है।

जो गाभेर भयउं रंग राता, नागमती हंसी पूँछी बाता

कहंहु कंत ओहि देश लोभाने, कस धनि मिली भोग कस समाने

जौ पद्मावती सुठिहोई लोनी, मोरे रूप की सरवरि होनी

"काह कहौं हौं तोसो, कुछ नहिये तोहिंभाव

इहां बात मुख मोसो, उहां जीउ उहाँ ठाँव"[3]

इस प्रकार सूफी नायिकाओं में सौतदाह के साथ-साथ अन्य मानसिक भाव भी परिलक्षित होते हैं। ये नायिकाएं साधारण जगत की साधारण मनो-

---

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 117, छ. 85

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 119, छ. 87

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 555, छ. 461

भूमि में घर-घर की स्त्रियों का सजीव चित्र है। जिसका चित्रण कवि ने बड़ी सूक्ष्मता से किया है ऐसी नारी व्यंजना जो यथार्थ से जुड़ी हो अत्यन्त दुर्लभ है।

नायिका कठोरता :

ये नायिकायें अपने प्रिय को अन्तरंगता से चाहती तो अवश्य हैं, किन्तु क्रोध का बाह्य अनुभाव करके कठोरता का प्रदर्शन करती है - पद्मावती कहती है जोगी, भिखारी तू बहुत बातें करता है -

जोगी भिखारी करसि बहु बाता कहेसि रंग देखो नहिं राता
एक ठांव एथिर न रहाहीं, रस लेई खेल, अन्तर कहुँ जाहीं[1]

और पद्मावती में विब्बोक भाव (रूप सौन्दर्य यौवन जाति गर्व के कारण प्रिय को अनादर) कठोरता का व्यवहार करते हुए कहती है - रे योगी तू मेरी बाहें मत पकड़, दूर हट तुम्हारे शरीर एवं वस्त्रों से सड़े अन्नों की बास आ रही है, तेरी भभूति से मुझे छूत लगती है तेरी तपस्वियों वाली काया से मेरे अंगों प्रभाव पड़ रहा है।

"गहु न बांह रे जागी भिखारी"[2]

ओहट होसि जोगी तेरी चेरी, आवैरबास कुरकुटा केरी
देखि भभूति छूत मोहीं लागे, काँपै चांद सूरसो भागें
जोगीलर तपासे कै काया, त्यागि चहें मारे अंग छाया

और स्वयं को कहती है कि मैं रानी हूँ -

"हाँ रानी हूँ जोगी भिखारी, जोगिहीं भोगिहीं कौनचिन्हारी"[3]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 121, छं. 15।
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 122, छं. 19
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 122

मृगावती कठोरता में पीछे नहीं, वह जाती है कि यह उसका प्रिय ही योगी वेश धारण करके आया है किन्तु कठोरता का प्रदर्शन करती है और कहती है कि दीपक पतंगे की कौन सी प्रीति है सूर्य और कमल की प्रीत समान नीचे खड़ा होकर जो ऊँचे से प्रेम करता है वह कमल की भाँति मरता है। अतः भिक्षा लो और दूसरे स्थान पर जाओ।

मिरगावती कहीं देखौ री-ती, दीपक पतंगहि कौन पीरी ती[1]
नीच सो ऊँचे सेउ संग करहीं, सूरकप्रेम कवंल ज-नि मरई
भीख मांग कहु भुगति दिवावों पुन होई परतर् कहुँ पावों।

इतना ही नहीं मृगावती उस प्रिय को जो योगी वेश में उसके दरबार में आया है उसे ढीठ इत्यादि सब कुछ कह देती है –

अबहुँ ढीठ बात तूँ करई, अवंक होई कै चुप नरहहीं
अस मैं ढीठ न देखि भिखारी; मारिन जाई न दीहहे- गारी।[2]

और बिचारे कुँवर को फटकारते हुए कहती है –

"कहिसि जाउ जो तन जिउ होही,
मांटी लैर अडारो कोई"[3]

1– मृगावती, पृ0 258, छ. 227

2– मृगावती, पृ0 260, छ. 230

3– मृगावती, पृ0 260, छ. 230

मंझन ने मधुमालती को कठोरता से बचा लिया है यह कोमल हृदय की है, भावुक है, सरल है, उसे अपने प्रिय पर पूर्णतः विश्वास है, वह परीक्षा भी नहीं लेती।

"विहंसि कहेसि पुनि रसहि जो आहीं, तुम्ह हौरस बात बौराई[1]
चकित रही कहुँ कहि नहीं आवा, मुनि रस बचनरसहि रस पावा।

किन्तु दाउद की चादां कठोर परीक्षिका भी है वह लोरक को चाहती तो हृदय से है किन्तु उसकी कठोर परीक्षा ले रही है -

"आपुहि वीर सराँहेसि काहां, जाति गोवारू आदि चरवाहा,
हमरे चेर सहस एक अहही, कायछाय तेहिं आगि न परहीं,[2]
जाकेंह लोर कीन्ह मनुसाई, तेहिंक मंदिर कस पैठिहु जाई।

अब यहां भी नायिका चांदा की कठोरता दृष्टव्य है। लोरक बेचारा जान की बाजी लगाकर चांदा के शयन गृह में कितनी कठिनता से प्रवेश किया।

चांदा उसके इस प्राणोत्सर्ग की स्थिति में कैसा बर्ताव कर रही है रात्रि के समय लोरक मिलता है तो चांद उससे अपने हृदय-हार के मोती चुनने का आदेश दे डालती हैं - और मोती चुनते-चुनते रात्रि व्यतीत हो जाती है।

चांद कहा खिन एक सम्हारौ, हार टूटिगा मोति सम्हारौं
मोति उचावत रैइनि विहानी, उठा सूर लई साध निमानी[3]

1- मधुमालती , पृ0 102, छ॰ 122

2- चंदायन , पृ0 197, छ॰ 230

3- चंदायन , पृ0 206, छ॰ 212

चित्रावली भी कठोर है वह भी पद्मावती की तरह "गहुं न हाँथ रे जोगी भिखारी" की तरह"झिझकि हाँथ चित्रावली कहा"

तूँ तो एक भिखारी हो राजकुमारी से तुम्हारा क्या सम्बन्ध क्या पहचान है- कितनी दूरी है कितना अन जाना पन है चित्रावली की भाषा में उसकी वाणी में।

तूँ भिखारी हैों राजाबारी, राज भिखारिहिं कौन चिन्हारी,
"झिझकि हांथ चित्रावली कहा"

मृगावती भी कहती है कि "अस मैं ढीठ नदेखि भिखारी" और चित्रावली भी यही शब्द कहती है -

"कस चकोर अस करै ढिठाई विंहसे सरगसेज ससि जाई"[1]

मृगावती की कठोरता हृदय में चुभने वाली है राज कुवंर तो उसका वस्त्र लेकर उसे अपने वस्त्रों द्वारा सुसज्जित करना चाहता है किन्तु मृगावती क्या कहती है -

"चीर हमार देहु कसनाहीं अउर चीर हम पहिरी न चाहीं"[2]

मृगावती सोचती है कि इसने मुझे आसानी से उपलब्ध कर लिया है। यदि मेरी चाह् इसे होगी, तो यह मेरे गांव स्वयं आयेगा उस मृगावती का कितना कठोर हृदय है कि नाम पता कुछ भी बेचारे कुवंर को नहीं बताती और उड़ जाती है।

मृगावती मनमहं असकहा इह कहमारे चाह जो अहा,
जोरे मो हीं यह चाहां आइहि हमरहु गांव, कहेसि चीरमैकैसेकपाउँ
"उड़ि रे इहा हुत जाऊँ"[3]

1- चित्रावली, पृ0 129, छ॰ 530
2- मृगावती , पृ0 159, छ॰ 87
3- मृगावती , पृ0 166, छ॰ 96

पतिव्रता

पतिव्रता नारी :

प्रेमाख्यानक काव्य की नारी आदर्श नारी है उसमें पातिव्रत्य, संकोच, क्षमा, दया, सत्धर्मिता, कुलकानि की रक्षा, विनम्रता आदि आदर्श गुण सन्निहित है। कवि ने नारी आदर्श का महान स्वरूप अपने काव्यों में प्रदर्शित किया है।

जायसी की पद्मावती पतिव्रता है वह महान से महान दुख की घड़ी में अपने पातिव्रत्य धर्म की रक्षा करती है यह आदर्श, प्रेमाख्यानक काव्यों की अपनी विशिष्टता है। चन्दायन की नायिका को छोड़कर सभी नायिकाएं पातिव्रत एवं एक निष्ठता का सतत् पालन करती हैं।

पद्मावती देवपाल की दूतों को करारा प्रत्युत्तर देती है वह कहती है यौवन प्रिय के दुलार के छाँह में पनपता है जब प्रिय ही नहीं तो श्रृंगार कैसा -

> "ए कुमुदनि जोबन तेहिं माँहा, जो आछै पिउ के सुख छाँहा,
> जाकर छत्र सो बाहर छावा, सो उजार घर कौन बसावा,
> अहा न राजा रतन अजोरा केहिक सिंगार केहिक पटोरा।"[1]

वह उस प्रीत के रंग को कच्चा कहती है जो अपने को छोड़कर पराये पर लुब्ध हो -

रंग ताकर हौं जारौं काँचा, आपन तजि जो पराये रांचा[2]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 42, छ॰ 9 रामचन्द्र शुक्ल,

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 43, छ॰ 9 रामचन्द्र शुक्ल,

दूसर करै जाइ दुइ बारा, राजा दुई न होहिं एक पारा
जेहिं के जीउ दृढ़ प्रीती होई मुख सोहाग सो बैठे सोई,

वह पूर्व जन्म में प्रिय मिलन का संकल्प लेती है -

एहि जग जौं पिय करहीं न फेरा, ओहि जग मिलहि जो दिन-
दिन हेरा[1]
जोबन मोर रतन जहं पीउ, बलि तेहि पिय पर जोबन जीउ।

पद्मावती सोचती है मैं क्या तुम्हारी पूजा में अर्पण करूँ सभी कुछ तो तुम्हारा है युद्ध से लौटने के पश्चात् रत्नसेन घायल है। यहाँ पद्मावती का रूप आदर्श पतिव्रता का है।

"पूजा कौन देउं तुम्ह राजा, सबै तुम्हार आव मोहि लाजा"
पाय निहारत पलक न मारों, बरूनी सेंत चरनरज झारों
हियसो मन्दिर तुम्ह रे नाहां, नैना पंथ बैठेहु तेहिं माहाँ।"[2]

पद्मावती भारतीय नारी का आदर्श है। वह पतिव्रता है यौवन का भेंट देती है तो शरीर मात्र से नहीं "तन-मन यौवन साजि के लेइ चली दे भेंट" और सती होने के पूर्व प्रिय के प्रयाण करके पूर्व भी उसका वहीं समर्पण-भाव पातिव्रत्य के प्रखरता का भाव तन, मन, यौवन केवल शरीर से नहीं वरन् -

---

1- जायसी ग्रन्थावली पृ० 795 छं० 683 'राजनाथ शर्मा'
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 261, छ. 2 'रामचन्द्र शुक्ल'

तन-मन-यौवन आरति करहुँ जीउ काढ़ी न्यौछावरि धरउं

पंथ धूरि कैं दृष्टि बिछावौं, तुम पग धरहु सीस मैं लावौं[1]

मृगावती पतिव्रता है वह कहती है -

"तुम्हरी ब्रहमारूढ़ सीउ कै बाचा, मोर जीउ आहै तिंहपै राचों

तौलहिं तुम्हरे सम्हारेहु नाहां"[2]

और दूसरी ओर वे दोनों एक एक शरीर दो प्राण हैं तभी तो जब कुवंर को राक्षस उठा लेता है वह कष्ट में है यहाँ तुरंत मृगावती की आत्मा को कुवंर की आत्मा से संदेश मिलता है यह पातिव्रत्य निष्ठ पत्नीको ही पूर्वाभास हो सकता है -

कुवरेंहु इहां परेउ दुखभारी उहां आग उर उठी सो नारी,

कहेसि सखी सो सुनहुं नबाता, सुख मंद् दुखर उठेउ कहुगाता।[3]

और वह सामीप्य लाभ के लिए सहेलियों से प्रार्थना करती है -

"जाइ देउरे सहेली धर कह, मोर, जिउ धंसि-धंसि जाई"[4]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 261, छं. 2

2- मृगावती , पृ0 62, छं. 91

3- मिरगावती पृ0 305, छं. 278

4- मिरगावती पृ0 150, छं0 338, शिवगोपाल मिश्र

समर्पिता नारी :

नारी प्रिय मिलन के पूर्व जिन अनुभूतियों से गुजरती है, सुरत के अनन्तर उसकी क्या मनोदशा होती है। इसकी व्यंजना सूफी कवियों ने अत्यन्त सरस और मनोवैज्ञानिक किया है, जो वसन्त-यौवन पति के आनंद निमित्त लालायित था वही मरगज होने पर शिथिल हो जाता है, रति केलि पूर्व जो भय-कंपन था वह आस्वाद पाने पर पलायित हो जाता है- नारी का समपर्ण भाव कितना है जो नारी यौवन और नितम्ब के भार से दबी जा रही थी, वही पति के बोझ को बड़े उछाह से सहती है क्यों? - वह समर्पिता है जिस यौवन को सूर्य की धूप और पवन-मलय भी नहीं लगने देती, जो श्रृंगार संजोती है वह पति को समर्पित कर निरंग हो जाती है उसका गुलाबी रात-रंग पीताभ हो जाता है।[1]

और नायिका सोचती है - "पिउन रिसाई ले उबरू जीउ"[2] उसके प्राण चले जाएँ किन्तु प्रिय तुम उससे प्रसन्न रहें। मृगावती भी -

हिया थार कुच कंचन लाडू, अगुवन भेंट किन्ह होइ चाडू"[3]

नारी का सर्वश्रेष्ठ गुण है उसका समर्पण और सूफी कवि कुचि का इस भाव का सुन्दर अभिव्यंजनाकरती है।

प्रसाद ने भी 'कामायनी' की 'श्रद्धा' का समर्पण व्यंजित किया है -

समर्पण लो सेवा का सार, सजल संसृति का यह पतवार[4]
आज से यह जीवन उत्सर्ग, इसी पदतल में विगत विकार
दया, माया, ममता, लो मधुरिमा लो अगाध विश्वास
हमारा हृदय रत्न निधि स्वच्छ तुम्हारे लिये खुला है पास

1- जायसी काव्य प्रतिभा एवं संरचना, पृ0 159-60
2- जायसी ग्रन्थावली, छ. 324, 3- मृगावती, छ. 256
4- प्रसाद "कामायनी" श्रद्धा सर्ग। पृ० 57

कान्हावत में भी नायिका ने अपने यौवन का भोग दिया है कान्हा को भी आशाये, इच्छायें पूर्ण की है यहाँ पर साथ में गोपियाँ भी हैं -

सबहिं भोग भातिहि मानी, इच्छा पूजी आस बुलानी,[1]

भां अंजोर सब जग कै भानू, चांद सुरूज दोइ भये बखानू।

चित्रावली भी समर्पण शीला है - अधरामृत देकर कुंवर की आत्मा को अमर कर रही है -

अधर घूँट सो अमिरित पीया, जे हिके पिये पियत अमरभा हीया,

राहु गरास कलानिधि काया, लोचन पल आनन पट झापां।[2]

चन्द्रावलि भी यौवन रस एवं आस्वाद लेकर अपने प्रिय को भेंट देती है समर्पित करती है -

"कुच कचौरी हिया थार, सब रस लेहु संवार

कौन भेट देई आगे करौं, कान्ह मनुहार,[3]

यौवन का समर्पण करके ही नहीं वह चाहती है कि ऐसे प्रिय को प्राण देने में भी आनन्द है -

जोरे पियार मिलै असपीउ, ताकह देत न राखै जीउ[4]

1- कान्हावत, छ. 134, 4 कान्हावत छ. 104

2- चित्रावली, छ. 122

3- कान्हावत, पृ० 204

नारी अपने यौवन द्वारा ही नहीं बल्कि जो निछावर कर रही है क्या वह मन से भी है या नहीं वह मनसा, वाचा, कर्मणा, तीनों से समर्पण है। इस प्रकार पद्मावती पद्मावत् में सती होते समय भी सम्पूर्ण समर्पित है यह समर्पण चार स्थानों पर है।

"साजन लेई पठावा आयसु जाई न मेटि[1]
तन, मन, यौवन साजि के लेई चली दे भेंट"

और अन्तर से स्पष्ट उस हृदय को लेकर उस प्रिय को यौवन, मन, प्राण, हृदय न्योछावर कर रही है -

तासो कौन अन्तरपट जो अस पीतम पीउ
न्योछावरि अब सारों तन मन जोबन जीउ"[2]

और यहां चंदायन को भी चांदा भी लोर को यौवन का पूर्ण आस्वाद देकर प्रिय को परितृप्त करना चाहती है।

"अधर खांड़ि नैननछिउसातौं, हिरदै भार भरि आगे आनौ
'सुरंग बेलि पर तुम्हको राखों,' "फूल सेज परिमल चन्दन बहुबिधि भीजं
करगहि रहीं पयोधर अधर खंडि रस लीज।"[3]

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 120, छ. 13

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 125, छ. 26

3- चंदायन , पृ0 209, छ. 215

मृगावती भी समर्पण की भावधारा से स्निग्ध स्नात् है। अपने प्रिय को वह आमन्त्रण देती है, कितने विनय के साथ समर्पण करती है पुरूष और नारी के सम्बन्ध का बोध कराती है।

-तिहिण पलंग सेज संवारी, मिरगावती बैठी घन बारी,[1]
चलहु सेज पसवहु बैठेउ तूरे पुरूख हौं नारी।

वह पुरूष की भावना समझती है अतः पहले ही सूचित कर देती है- जो अछूते यौवन को उसने उसके लिए संजो रखे हैं। वे अभी अछूते है पुरूष का अहंकारी मन इससे और संतुष्ट एवं आकर्षित होता है -

"विरसु सिर-फल राखेहु छाँहा"

"पवन न लागी सूर पहूं राखी, बांस नाउं भवंर न चाखी
आलिंगन आलो कुच धरई, कर कुच धरे सहस रस भरई"[2]

और इस प्रकार मृगावती अपना समर्पण कर देती है अपने मन प्राण के साथ -

मिरगावती उन्ह दीन्हों, औ आपुनि सब जीउ
चलहु जो हरै जाहि भेंट ले, मिरगावती कै पीउ[3]

1- मृगावती, पृ0 263, छ. 233
2- मृगावती, पृ0 268, छ. 241
3- मृगावती, पृ0 271, छ. 245

<u>सत् धर्मशीला :</u>

सूफी काव्य की नायिकायें विषम परिस्थितियों में भी सत्धर्म की रक्षा करती है। वह राजकुंवर के प्रेम निवेदन को, विवाह के पूर्व अकर्म कहती है कवि मंझन ने 'प्रेम काव्य' में भारतीयता का पूर्ण पालन किया है। वह कहती है धर्म जाने से मुख में कालिख लगेगी, कुटुम्ब कुल धर्म सभी कलंकित होंगे, समाज उन्हें गालियाँ देगा। इस वार्ता में कवि ने भारतीय ललना का दैदीप्य स्वरूप अंकन किया है, सती पार्वती सती, अनसुया, सती सावित्री सती अम्बाला, एवं सती अहिल्या का रूप व्यंजित किया है।

> अकरम कै का धरम नसाई, गये धरम पुनि जिउ पछताँही[1]
> धरम जाहीं मुख लागें कारी, कुटुम्ब लाज कुल आवै जारी,
> हम तुम्ह साँच बचावह कीजै, रूद्र ब्रहम हरि अन्तर दीजै,
> प्रीति सपथ दृढ़ बाधा, मोहिं रे देहु तुम्ह स्नेहु
> जन्म जन्म निरधारहिं विधि, मोहिं रे तोहू सनेहु।

और पद्मावती के सतभाव और प्रेम की सच्चाई का वर्णन कवि करता है 'लक्ष्मी समुद्र खण्ड' में पद्मावती के होश में आने के पश्चात् प्रिय वियोग से आहत हो उठती है।

> कहाँ जगत-मनि पीउ पियारा, जौ सुमेरू विधि गरूव संवारा[2]
> ताकर गरूइ प्रीत अपारा, चढ़ी दिये जस चढ़ै पहारा।

1- मधुमालती पृ0 107, छ० 128

2- पद्मावती, पृ0 160, छ० 3

मधुमालती सत्वंती नारी है वह सब कुछ त्याग सकती है किन्तु "सत्" नहीं छोड़ सकती यह वाक्य वह कुँवर के प्रेम निवेदन के प्रत्युत्तर में कहती है कि बिना सामाजिक संस्कार के आदेश के वह अपने "सत्" से नहीं डिग सकती।

"जग जीवन जग परिहरहिं, जिन्ह सत् उपर चाउं
सरबस तजहिं सत् नहिं छोड़हि, सुनहुँ कुवर सतिभाउं"[1]

और दूसरी ओर पद्मावती पातुरी राम देवपाल की दूती जो वियोगिनी वेश में पद्मावती को सत्-धर्म से डिगाने आती है, और असफल रहती है, तत्पश्चात् बादशाह की दूती आती है, शाह चतुर छली है सोचा पद्मावती को सत् से हटाने का कार्य कोई वियोगिनी ही कर सकती है - वियोगिनी किंगरी लिये वियोग के गीत गाती आती है। इस वर्णन से लगता है उस युग में स्त्रियाँ प्रिय वियोग में योगिनी हो जाया करती थीं। यहाँ नाथ पंथियों का प्रभाव हो सकता है।

यद्यपि जायसी योगी वेश की बात करते हैं किन्तु उनका समर्थन गृहस्थ आश्रम मेंरहकर प्रियतम के मनन, रटन, करने में है जायसी सत् धर्म को प्रमुखता देते हैं- मनुष्य संसार में रहे बैरागी, पर मन में विरक्ति रखे, प्रत्येक स्वास में परमप्रिय का रटन हो, "बादशाह दूती खण्ड" में कवि के जीवन दर्शन की झांकी मिलती है उसका मानव मूल्यों के प्रति आदर है- रानी पद्मावती छल से नहीं सत्-धर्म का मार्ग अपनाती है सदाव्रत बाटती है-

जोगी-जाती आव जेत केथी, पूछै पियहीं जान कोई पंथी[2]
देत जो दान बाँह भइ ऊँची, जाहि साही पहं बात पहुँची।

1- मधुमालती पृ0 150, छं0 127

2- जायसी काव्य प्रतिभा और संरचना, डा0 गुप्त, पृ0 268

पद्मावती योगिनी की बातों में आ जाती है क्योंकि छल तो उसे आता नहीं हाँ पति चाह में सत्-धर्म देना चाहती है जो उसकी सबसे अमूल्य निधि है।

जिन नैनन्ह देखावै पीउ, सोई मोहि देखाव देउ बलि जीउ[1]

सत और धरम देउ सब ताहीं पिय की बात कहीं जेई मोहीं।

पद्मावती दूती को कहती है यौवन रूपी जल तो घट जाएगा किन्तु

"जोबन नीर घटे का घटा, सत् के बर जो नहिं हिय फटा[2]

वह रावण का दृष्टांत देती है कि उसका दोनों लोक में मुख काला हुआ

रावनपाप जो जिउ धरा, बुवौ जगत मुँह कार

राम-राम जो मन धरा, ताहि धरैं को पार।

शील की रक्षा करने वाली मधुमालती प्रेमाख्यानक काव्य की अनुपम नायिका है। भारतीय नारी के परिप्रेक्ष्य में वह अनुकरणीय है किन्तु मर्मज्ञों ने उसे संयोग के समय यौवनोन्माद को शीत करने का दोष लगाया है।

बरकामिनी तब हाथ अडाई, उठिकै कुवंर सेज पहं आई[3]

कहेंयि कुवंर अकरम न कीजै माता-पिता अपकिरति दीने

एक तिल सुख के कारन सरबस आप नसाऊँ

तिरियां थोरे अपकरम जग अपकीरति पाउं।

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 248

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 242, छ॰ 11 रामचन्द्र शुक्ल,

3- मधुमालती, पृ0 104, छ॰ 125

मानस की सीता भी कहती है -

अवगुन एक मोर मैं माना, बिछुरत प्रान न कीन्ह पयाना,[1]
नाथ सो नैनन्ह को अपराधा, निसरत प्रान करहि उठबाधा
नयन स्रवहिजल निसरनि लागी, जैरैन पाव-देहिं विरहागी।

नेत्रों का स्वार्थ है कि वे अपने परम प्रियतम को देखना चाहते होंगे तभी तो अश्रुजल से उसे गीला करते हैं, कि विरह अग्नि से वे जल न जायें।

तृन धरि ओट कहत वैदेहीं, सुमिरी अवध पति परम सनेही[2]
सुनिदस मुख खद्योत प्रकासा, कबहु कि नलिनी करई विगासा।

सीता रावण के घर में कितनी निर्भय होकर कहती है -

सठ सूनेहि हरि लायेसिमोही, अधम निलज्ज लाज नहीं तोहीं

और पद्मावती दूती से कहती हैं -

रंगताकर हौं जारौं कांचा, आपन छोड़ पराये राचा[3]

और इतना ही नहीं वह निर्भय होकर कहती है -

"सत्रु मोर पिउ कर देवपालू, सोकतपूज सिंह कर भालू"[4]

1- रामचरित मानस सुन्दर काण्ड पृ० 226

2- रामचरित मानस सुन्दरकाण्ड, पृ० 803

3- जायसी ग्रन्थावली पृ०745, छ० 336

4- जायसी, ग्रन्थावली पृ० 749, छ० 640

मधुमालती भी सत्धर्म को लौकिक एवं अलौकिक दोनों पंथ के उजाले का आधार कहती है मंझन की नायिका का कहना है जो इस धर्म का पालन करते हैं वे पापाग्नि से सदैव दूर रहते हैं।

वह राज कुंवर को समझाती है यौनान्ध नहीं होती, धर्माचरण के लिए कुवंर को प्रेरित करती है – नारी स्वरूप की विशिष्टता को कवि मंझन ने उकेरा है –

"सुनौ कुवंर एक बचन हमारा, धरम पंथ दुहुं जग उजियारा[1]
जाकि हिरदय धरम गा जागी, सोकस परै पापके आगी।"

सोई विधि मोहि तोहिं जम खेइहिं, परिहरि पाप, धरम निधि देइहि[2]
अकरम कैके धरम नसाई, गये धरम पुनि जिउ पछिताहीं।

– मधुमालती क्षणिक यौन सुख के लिए पाप-पंथ पर नहीं चलना चाहती वह कुंवर को समझाती है। यहाँ सत्वंती नारी का आदर्श मंझन ने व्यंजित किया है। वह कुल रक्षिका है– कुल की मर्यादा का मंझन की नायिका सतत् ध्यान रखती है कुलधर्म को वह प्रथम मानती है –

कुल और धरम दुऔ रखवारी, मंता-पिता दै जाई नगारी[3]
निमिख लागि जौ आपुहि नासा, ताकंह नरक मोहिं भा बासा,
पापके पंथ चढ़ जेहिं सत् राखा, सरग अमिय फल तेहिं पर पाका।

1– मधुमालती पृ0 106, छ. 127

2– मधुमालती पृ0 107, छ. 218

3– मधुमालती पृ0 107

सती नारी : नायिका

प्रेमाख्यानक काव्य में नारीत्व की शोभा है, नारीत्व का माधुर्य है, नारीत्व के प्रति आदर है। [1]

भारतीय विचार धारा में मानवी प्रेम को इतना ऊँचा स्थान प्राप्त[2] नहीं था। वह स्थान इन कवियों ने दिया है। नारी के प्रेम को भारत सदा अविद्या कहकर ठुकराता था परन्तु कवियों ने उसकी उच्चता का पाठ हमें पढ़ाया।

"हिन्दू दृष्टिकोण में महिला जाति की सबसे बड़ी विशेषता उसका[3] सतीत्व यह सतीत्व मनुष्यत्व और देवत्व से भी महान है, यह पुरूषों के लिए भी ईर्ष्या का विषय है। वह पातिव्रत, महिलाव्रत, एवं पत्नीव्रत, से भी ऊँचा है। इसके बल से त्रैलोक्य को भी जीतने की शक्ति है। इसी के प्रताप से उसमें गार्हस्थ्य और मानव समाज को पवित्र और विकासोन्मुख रखने की सामर्थ्य है। इससे वह विभूतियों की विभूति है, इसलिए वह मनुष्यों और देवताओं की भी देवता है। सती के सतीत्व से ही संसार व्यापी सत्व अनुप्राणित है।

स्त्री जाति का यह सतीत्व चन्द्रमा की चंद्रिका, सूर्य का प्रकाश और सौन्दर्य का सौन्दर्य है। यह सत्य, शिव, और सौन्दर्य का समन्वय है। जगत के विभिन्न तत्वजाल और माया मोह का सामंजस्य है। इसके अभाव में महिला जाति के गुण निरर्थक हैं। इसके भाव में महिला जाति के समस्त

1- डाकमल कुलश्रेष्ठ भारतीय प्रेमाख्यानक काव्य, पृ0 248

2 ,, ,, पृ0 417

3- पत्रिका कल्याण नारी अंक सन् 1948 (39) पृ0 843,

अवगुण भी गुण हैं यह समस्त अवगुणों का प्रश्रय तथा गुणों का संशोधन है।

और सूफी यह जानते थे अतः उन्होंने अपने प्रेम काव्य में नारी का यह दैवीय रूप पूर्ण उत्कर्ष के साथ उकेरा है।

पद्मावती भी सती हुई जीवित रहने पर भी साथ रही मृत्यु केपश्चात् भी साथ निभा रही है।

"जियतकंत हम्ह तुम्ह गर लाई, मुएकंत नहीं छोड़हिं साई[1]
बैठि कोई राज न पाठा, अन्त सबै बैठि पुनि पाटा।"

पद्मावती सज-धज कर सुन्दर वस्त्र पहन कर प्रिय के अन्तिम मिलन के लिये प्रतिबद्ध है।

"पद्मावती पुनि पहिरी पटोरी, चली साथ पिउ के होई जोरी[2]
छोरे केस मोतिं लरटूटी, जानहुं रैनि नखत सब छूटी"

जायसी की नायिका भारतीय नारी के आदर्श पर खरीहै, वह हंसते-हंसते स्वगत् सती हो जाती है अग्नि होलिका में समर्पित होती है।

लेइ सर उपर खाट बिछाई, पौढीं दुवौं कंतगर लाई[3]
लागी कंठ आगी देइ होरी, छारि भई जरि अंग न मोरी,
"राति पिउं के नेह गई, सरग भयो रतनार
जोरेउवा सो अथवा, रहा न कोई संसार"

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 268

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 228

3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 269

सती नारी उपनायिका :

नागमती भी एक आदर्श सती स्त्री है उसका सतीत्व नक्षत्र की तरह आलोकित है नागमती पद्मावती रानी, दुवौ महासती बखानी"

जियत जो जरे कंत के आसा मुए रहेसि बैठि एक पासा[1]

कौलावती में समर्पण है - मिलन का क्षण है - वह अपने लिए नाहीं बल्कि प्रिय के सुख योग के लिए समर्पण करती है -

अधर रहा छंद उरज नख, उधसि गई पुनि मांग
प्रथम समागम जनुकियो जिथिकभयो सब आंग[2]

मोहिं न अपने प्रेम रस चाउ, नेहि लाग यह करौसुभाउ

कौलावती का चरित्र उसमान ने सशक्त कर दिया है वह गुणों से उक्त होते हुए भी उसके चरणों में गिरती है स्वयं को अपराधी कहती है वह कहती है मैं तुमसे छोटी हूँ मेरी विनती सुनो यह नारी मन की उज्ज्वल भावना है जो कम नारियों में दृष्टिगत होती है।

"मरनबेर मुख देखौं जाई मकु अजहुँ तजिकोह छोहाई [3]
चित्र निकट आई गुनभरी, बदन विलोकि पाउं लैपरी
कहेसि कि हौ अपराधिनी तोरी, कहहुँ छोट सुनिविनति मोरी,
रहे सदातुअं सीस पर, सेंदुर मांग सोहाग।"

और नागमती भी पद्मावती को संदेश देती है कहती है कि -

मोहिं भोग सो काज न वारि, सौंह दीठि के चाहन वारि[4]

1- जायसी ग्रन्थावली पृ0 168, छ. 2
2- चित्रावली, पृ0 406, छं. 995
3- चित्रावली, पृ0
4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 144

एक निष्ठता :

सूफी नायिका एक निष्ठ है। इनके ऊपर प्रिय के अलावा कोई अन्य रंग नहीं चढ़ता, इनकी एक निष्ठता भंग करने के लिए दूती, धाय, जो अन्य देशों के राजाओं द्वारा भेजी जाती है प्रत्यनशील होती है किन्तु नायिका के दृष्ठता से वह अन्ततः निराश होती है।

पद्मावती एक निष्ठ है देवपाल दूती खण्ड में वह दूती से कहती है-

"मोहिं अपने प्रिय केर खभारू, पान फूल का होई अहारू"[1]

कवि ने नायिका के एक निष्ठता का चित्रण श्लेष के माध्यम से अति चतुरता से किया है। नायिका रत्नसेन रूपी रत्न को हाँथ में लेने के पश्चात् अन्य मुक्ता मोती घुंघची सदृश प्रतीत होते हैं यहां नायिका अपने पति के श्रेष्ठता को कितने तीव्र भावों से व्यक्त करती हैं। उसे रत्नसेन के अलावा अन्य कोई नहीं दिखाई पड़ता।

रतन छुये जिन्ह हाथन्ह सेती, और नछुवो सोहाथ सकेती[2]

ओहि के रंग भा हाथ मजीठी, मुकुता लेहुत घुंघुची दीठी।

ईश्वर में आस्था : नायिकायें ईश्वर में पूर्ण आस्थावान है।

जो विधि तोहिं इहाँ लेआवा, मोहिं-तोहिं भा दृष्टिभरावा[3]

हम तुम्ह सांच बचा वह कीजै, रूद्र ब्रहमहरि अन्तर दीजै।

सूफी काव्य नायिकायें शिव की आराधना करती है उन्हें शिवरात्रि की प्रतीक्षा है।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 241, छ॰ 77

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 243, छ॰ 13

3- मधुमालती, पृ0 65, छ॰ 264

अलप दिने आवै सिवराति, नेवत जेवावत जंगम जाती[1]
सिउ-सिउ करत बार जो आवा, आजु आदि सिव बार सुहावा
बेगि होहु विलभाउ, आजु है उत्तम बार।
हिंछा हरि परसाव पुरवै मकु करतार।

विनम्र नारी :

सूफी काव्य की नायिकाओं में विनम्रता है। सहन शीलता है, इनके अन्दर धैर्य है ये अपने प्रिय सानिध्य में अधीर नहीं विनय गुण के साथ सहयोग करती है। पद्मावती विनम्र है धैर्यशाली नारी है पद्मावत्कार ने नायिका के विनयी स्वरूप की सुन्दर व्यंजना की है -

वह कहती है हे प्रिय तूझे मेरी सुधि नही है तुम यौवन-हाला को प्याला दर प्याला पीते चले जा रहे हो यह भी नहीं सोचते की मेरी सुराही में यौवन रस है या रिक्त हो गया, शराब के उपमान के माध्यम से विरोध भी कितने विनम्रता के साथ करती है यह कवि भी कल्पना का प्राचुर्य है - और नारी मनोभाव का सुन्दर अंकन -

"विनयकरै पद्मावती बाला, सुधिन सुराही पियहु पियाला,[2]
पिउ आयसु माथे पर लेउँ, जो माँगै तो नइ-नइ देउँ
पै पिउ एक वचन सुनु मोरा, चाख पियामधु थोरैई थोरा।"

1- चित्रावली, पृ० 65, छ० 64

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ० 263, छ० 234

मृगावती की विनम्रता स्पृहणीय है वह बड़े विनम्र भाव से प्रिय को आमंत्रित करती है उसे अपने पास न बुलाकर स्वयं प्रिय समीप चल कर आती है वह सेज से उतरकर उसका स्वागत् करती है -

देखि कुवंर गा आईं, उतरी सो सेज सौं ठाढ़ी सुहाई[1]
पैगियारि चलीकिहेसि जुहारू, आवँहु माय करहु अहारू।

वह राजरानी होते हुए भी विनम्र है अपनी अंतरंग सहेली के यहाँ जाने के लिए प्रिय के आदेश की प्रतीक्षा करती है -

कहेसि बात एक सुनहु नराजा, सखी एक कुछ कहेहु काजा,
सो हम कहं बुलवाई, आई, आयसु होई जाई तो जाई।[2]

ईश्वर में आस्था :

सूफी नायिकायें ईश्वर में आस्था रखती हैं वे अपने मनोरथ पूर्ण करने हेतु देव मंदिर जाती हैं आराधना करती हैं।

जायसी की पद्मावती देव दुआर जाती हैं, चांदा भी "गवनी देवदुवार" मृगावती भी "जस चाहेहु तस दयी मेरा वा" में विश्वास करती है। चित्रावली को "शिवबार सुहावा" लगता है वह "शिवराधिका" है।

1- मृगावती, पृ0 263, छ० 234

2- मृगावती, छ० 463 पृ0 294

"पद्मावती हौं देव दुवारा भीतर मण्डप कीन्ह पैसारा[1]
फल फूलह सब मण्डप भरावा, चन्दन अरग देवहन्ह नहवावा,
लेई सिंदुर आगे भई खरी, परसिदेव पुनि पायन्ह परी,
मोंकह देव कतहुँ वर नाहीं
हौं निरगुन जेहीं कींह न सेवा, गुनी निरगुन दाता तुम देवा,
बरसो जो मेरवहु कलस जाति हौं मान।

तुलसी की सीता भी मानस में सीता वर के लिए स्पष्ट तो नहीं कहती किन्तु इतना अवश्य कहती है -

मोर मनोरथ जानेहु नीके, बसहु सदा उर पुर सब हीके[2]
कीन्हेहुँ प्रगट न कारन तेहीं, असकहीं चरन गहे बैदेही।

चंदा भी वर के लिये देव मंदिर जाती है, सूर्य जैसे वर की कामना करती है।

"चांद सुरूज सुनि रहसि देव मनावन जाहु" [3]
चांद सुरूज जेहिं दिन देव करसि बहुधिरित भरावहु
बिनवउ चांदा पायन्ह परी, देव सुरूज बिन जिउ नधरी
देव पुकारी चांदा विनती ठाढ़ी कराहीं।

1- रामचरित मानस बालकाण्ड पृ0 243

2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 74, छ. 9

3- चंदायन पृ0 237, छ. 244

चांदा भी वर के लिए देव मन्दिर जाती है और सूर्य जैसे वर की कामना करती है। वह मानता मानती है कि वह "घृत मखाएगी"

"जउं धरी माँथ देव पर आवहि, सो जसि चांद सुरूज वरपावहि[1]
चांद सुरूज सुनि रइसि देउं, मनाइस जाई",
"चांद तराइन सेंती आवनी देव दुवार "[2]
चांद सुरूज जेहिं दिन देवाकरसि बहुघिरित भरावहुँ
विनवउं चादां पाँयन्परी, देव सुरूज बिनुजिउ न धरी,
एक चित्त कह मोहिं आपहुँ दूसर राध न जाई,
देव पुकारि चांदा विनती ठाढ़ी कराही।

मृगावती भी ईश्वर पर विश्वास करती है -

"जस चाहा तस दई भरावा, अमृरित कुण्ड सम्पूरन पावा[3]
"मनसा चित्त पूजी मोरे, मिलहु सुधर हम जागे।"

कोमलता ﴾सुकुमारता﴿

कोमल नारी :

प्रेमाख्यानक काव्य की नायिकाएं अत्यन्त कोमल हृदय की हैं, वे परिस्थिति सापेक्ष हैं। चांदा लोरक को देखती है किन्तु उसके आकर्षण

1- चंदायन पृ० 237, छ० 244

2- चंदायन पृ० 240, छ० 244

3- मृगावती पृ० 293, छ० 260

को उसके देदीप्य मान रूप को उसका कोमल हृदय ग्राह्य नहीं कर पाता- वह व्याकुल हो उठती है उसका कोमल मुख कुम्हला जाता है।

"देखि विभोही गई वेकरारा, नैन मुरुछि मुख गा कुबिलाई[1]
नैन सीप जनु मोतिन्ह भरे, राखेसि चांद आँसू तन ढरे।"

वह ऐसी पसीने से तर बतर हो गई मानों -

"जनु अभरन संग गांग नहानी"[2]

जायसी की पद्मावती अत्यन्त कोमल है- सखियां परिहास कहते हुए कहती है "सहिन सकै हिरदय पर हारू कैसे सहौ कंत के भारू"[3] इसमें विदग्धता एवं परिहास, साथ ही पद्मावती की कोमलता दृष्टव्य है।

पद्मावती रत्नसेन मिलन के पश्चात् निरंग हो गई सूर्य का झार उसे लग गया है ऐसा लगता है जैसे ग्रस ली गई हो -

"कवंल कली कोमल रस भीनी, अति सुकुमारी लंक के छीनी,[4]
चांद जैसधनि हुत परगासा, सहस कला होई सूर परगासा,
तेहिं के झार गहन अस गही, भई निरंग मुख जोति न रही।

1- चंदायन पृ0 135, छ0 138

2. जायसी ग्रन्थावली, पृ0 136, छ0 139

3. जायसी ग्रन्थावली, पृ0 129

4. जायसी ग्रन्थावली, पृ0 130

मंझन की मधुमाली कोमल है। वह वचन, भाव, विचार, कर्म अनुभाव सभी क्रियाओं में उसकी कोमलता परिलक्षित है वह अपने शयनगृह में राज कुंवर को देखकर कडुवे वचन नहीं बल्कि मधुर वचन वह भी अमृत से स्नात् बोलती है -

पुनिवर कामिनी वचन अमोले, अम्ब्रित बचन कहो रसधोले
पुछेसि मधुरे बचनरसारा, को आहेहु तुम देवकुमारा, [1]

राजकुवंर मधुमालती के सौन्दर्य दर्शन से संज्ञाहीन हो जाता है तब भी वह पूरे धैर्य एवं मनोयोग से उसकी सेवा करती है अपने अंचल से उसका मुख पोछती है -

तब वर कामिनी अमृत नीरू,छिरकि कुवंर मुख परससमीरू[2]
निरख कुवंर मुख दया मयानी, गहि आचर पोछेसि चखुपानी।

उसके चरण पर राजकुवंर अपना मस्तक टेक रखा था मधुमालती उसके मस्तक को हटाती है -

"दया भई मन मोह जनावा, गहिचरन सो सीस उचावा"[3]

चित्रावली में भी कोमलभाव है वह अपनी सौत कौलावती को अपने कंठ से लगा लेती है जबकि ऐसा होता नहीं की सौत को गले से लगा ले -

"चित्रावलि सुनि हिये छोहाई, कौलावती कह कंठ लगाई[4]
कहहि तजौं सौत करनाता, तोरि मोरि एकै जनु माता"

1- मधुमालती पृ0 84, छ. 101
2- मधुमालती, पृ0 93, छ. 111
3- मधुमालती, पृ0 93, छ. 111
4- चित्रावली, उसमान, पृ0 147, छ. 602

मैना अत्यन्त दुखी है वह विक्षिप्त हो रही है उसका हृदय अत्यन्त कोमल है वह अपनी सासू से कहती है कि -

जायेदेहूं मोहि खोलिनि लोरिक कीन्ह दुहेलि,

सारसि परि उरि मुएउं पिउं बिनु रैनि अकेलि[1]

और वह इतना कह कर रक्त धार की तरह अश्रुप्रवाह लगी- उसके मुख से डफार फूट पड़ी।

रगत धरा हुई मैनाहं रोयेसि घालि डफार

वह इतनी प्रिय के दूसरा कर लेने से दग्ध है कि

"नीर समुदं जस उलथहि नैना"[2]

"चुइ-चुइ बूंद परहि थनहारा, जनु टूटहिगज मुक्ता हारा"

वह इतनी कोमल है कि -

"फूल धाम जसि रही सुखाई, विहंसति मैना, गई कुबिलाई"[3]

उसकी सारी इन्द्रियाँ निश्चेष्ट हो गई हैं।

"स्रवनिन सुनहिं नैन नहिं देखहिं जउन होहिं मन हाँथ[4]

सेवन भाव रूच नहिं कामिनी, तिल न रहहिंसंग साथ"

1- चंदायन पृ0 228, छ• 235

2- चंदायन पृ0 106 छ• 108

3- चंदायन पृ0 233 छ• 233

4 चंदायन पृ0 233 छ0 240

लज्जाशील नारी :

लज्जा नारी का आभूषण है, लज्जा से नारी में गरिमा गौरव का वैभव निवास रहता है, सर्वविदित लज्जा से नारी माधुर्य पूरित हो उठती है प्रसाद ने तो लज्जा पर पूरा एक सर्ग लिख डाला है, "तुम रति की प्रति कृति लज्जा हो" प्रसाद ने लज्जा को सौन्दर्य का पर्याय कहा है -
पद्मावती संकोच एवं लाज से भर उठती है -

"तुम रति की प्रतिकृति लज्जा हो सौन्दर्य जिसे सब कहते हैं"[1]

पद्मावती संकोच से भर उठती है, वह घबराती है शंका करती है।

पद्मावती भी सलज्जा नारी है प्रिय मिलन की उत्कंठा भी है चाह भी है किन्तु लाज ने उसे बेड़ी डाल रखी है -

संवरी सेज धनि भई मन संका, ठाढ़ी तेवानि टेकिकर लंका[2]

अन चिन्ह पिउ काँप मन माँहा, का हम कहब गहब जब बाँहा

नाजानौ कस होहीं पदुत् कंत के सेज,

हौ बरि दुलहिन पीत सरू व लहतेज

मधुमालती भी लाजवन्ती है -

"कहेहु न लाज केहु एही पीरा"[3]

"एक दीसि पीर पिरम कै एक दिसी कुल की कानि

मोहि दुवौ दिसि दूभर भइसि इतकुल उत हानि"

1- प्रसाद कामायनी, लज्जा सर्ग, पृ० 103

2- जायसी ग्रन्थावली, रामचन्द्र शुक्ल पृ० 120, छ० 11

3- मधुमालती पृ० 276-77, छ० 322

कृतज्ञा नारी :

प्रेमाख्यान काव्य की नारियाँ अपने प्रति किये गये उपकार से उपकृत रहती और उस उपकार करने वाले को प्राण देने में भी संकोच नहीं करती है। मधुमालती ताराचन्द्र के पैरों पर गिर पड़ती है वह माता-पिता से अधिक कुवंर की उपकृता है, कहती है माता पिता मात्र जन्म देकर छोड़ दिये तुम तो मेरे प्रतिपालक हो।

मधुमालती लोचन जल भरे, ताराचन्द के पायन्ह परी, [1]
मधुमालती रोइ-रोइ कहबाता, तै मोर जनमि जीउकर दाता
माइ-बाप है जनमि अढारी, वीर मोहिं लै तुइं प्रतिपारी
मिलइ के जिय में हुति न आसा, तुम्ह मोहिं दीन्ह मारे घरबासा।

वह करूणा विगलित भाव से तारा चन्द से कहती है मेरे भाई मेरी माँ ने मुझे पंछी बनाकर निकाल दिया, तुमने मुझे मानवी बनाया मां ने मुझे सागर में बिना आधार के छोड़ दिया, किन्तु तुम मुझे आधार दिये, मेरे कभी न मिलने वाले प्रिय से मिलाया वह बार-बार कृतज्ञ होती है बार-बार कहती है -

आस-निरास पुरीतुई मोरी मैं सेवा कुछु कीन्ह न तोरी, [2]
पंछी रूप कै जननि निसारी, तै मानुज कैहों निस्तारी,
जननि मोंहि गुन काट बहायेहुं तै मोहीं तीर लै आएहु।
बहाजात मोर बेरा बिनु गुन विनुकण्डहार,
ता मंझधार मंहबूड़त तुम्ह मोहिं दीन्ह अधार।

1- मधुमालती पृ0 467, छ॰ 523

2- मधुमालती पृ0 419, छ॰ 447

पद्मावती बादल को कृतज्ञता ज्ञापिक करती हुई बड़े उदार एवं करूणा से भरे शब्दों में कहती है।

मेरे मस्तक पर सिंदुर तिलक चमचमा रहा है वह तुम्हारे भुज-दण्डो के बल एवं शौर्य के कारणं, और वह उन शक्ति पूरित भुजदण्डों की पूजा करती है –

"पूजै बादल कै भुजदण्डा, तुरयके पॉव दाबकर खण्डा[1]
यह गज बदन गरब जो मोरा, तुम्हराखा बादल और गौरा,
सेंदुर तिलक जो आँकुस अहा, तुमराखा मंथि तौरहा"
काछ बांधि तुम जिउ पर खेला, तुझ जिउ आनि मजुरखा मेला
राखा छात चंवर औधारा, राखाघुद्रं घेर झनकारा,
तुंअ हनुवंत होई भुजा पइठे, तब चितउरपिय आई बइठे।

चित्रावली भी परेवा से इसी भावपूर्ण शब्दों में कृतज्ञता ज्ञापित करती है।

तैसो वचन अमिरित अस भाखा निसरत प्रान फेरि घट राखा।[2]
का तोरे न्योछावरि सारौ, लाजन एक, जीउ नहिं वारौ।

तन पाचांल थालसम, होत जो पूरित प्रान[3]
काढ़ि-काढ़ि तुअ चरन पर वारि देत मन प्राण।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 264, छ. 4, रा0च0शुक्ल

2- चित्रावली, पृ0 124, छ. 210

3- चित्रावली, पृ0 56, छ. 63

कुशल गृहणी :

पद्मावती ऊँचे महलों की राजकुमारी है किन्तु वह सुगृहणी के गुणों से युक्त है। लक्ष्मी समुद्र खण्ड में लक्ष्मी द्वारा दिये गये रत्न को वह सम्हाल कर रखती है पति रत्नसेन के असहाय स्थिति में वह रत्न देकर अपने संचयन वृत्ति एवं कुशल गृहणी का रूप प्रस्तुत करती है।

लक्ष्मी दीन्हरहा मोहिं वीरा, भरिकै रतन पदारथ हीरा[1]
काढ़ि एक नग बेगि भजावा, बहुरि लच्छ फेरि दिन पावा।
दरब गरीस करै जनि कोहू, साम रसोइ गांठि जो होई।

दाउद की चंदा सुनियोजित गृहणी है वह लोरक के साथ पलायन करते हुए[2] मानसिक संतुलन बनाये हुए रहती हैं वह मात्र प्रेम के अंध आवेग में ही नहीं रहती बल्कि गृहस्थी के लिए भोजन के लिए उसे चिंता है तभी तो वह-

"लीन्हेसि अभरन मानिक मोती" २

कलाप्रियता :

चित्रावली कलाकार और कलाप्रिय दोनों हैं वह चित्रकारी कर लेती है स्वंय का चित्र भी बना लेती है तभी तो कुमार सुजान उसके चित्र दर्शन द्वार प्रेम करने लगता है।

सावंर अरून पीत औं हरा, जोरंग चाहिय सोसब धरा।[3]
तेहि कहं चित्रावली गुन ज्ञानी, आपन चित्र लिखै अस मानि।

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 169

2- चंदायन पृ0 203, छ॰ 280

3- चित्रावली पृ0 21-22, छ॰ 65

ज्योतिष ज्ञानी :

चंदा ज्योतिष का ज्ञान रखती है – वह लोर के साथ पलायन करते हुए बृहस्पति से ज्योतिष गणना करके शुभ मूहूर्त की गणना करती है।

मीन राशि जो कहइ जाई, सिंह परोसी नियर होइ आई[1]
तुला राशि दोउ सम आवहि, रइनिचांद कस तइरे पावहि
बहु दिन होहि मेरावा चांद गिनी देखि राशि।

परदुखकातर :

मधुमालती दूसरे के दुख से दुखी हो उठती है।

पुनि उपजेउ बाला मन माहें, यहि मोहि लाग मरे केहि काहे[2]
यह सो राजकुंवर सुकुवारा, मरै तो हत्या चढ़ै कपारा।

मातृवत्सला :

कुंवर के कष्ट को देखकर नायिका मधु शोक विह्वल हो उठती है वह नायिका का सहोदर नहीं किन्तु उसने उसके उपकार की गरिमा से भाई का सम्बन्ध बनाया है वह उस भाई के लिए स्वर्ग से अप्सरा तक लाने को तैयार है।

1– चंदायन पृ0 20, छ॰ 226

2– मधुमालती, पृ0 310, छ॰ 473

वीर लाज मोसो कस तोहीं, परिहरि लाज बात कहु मोंही[1]
जो नाव मैं तेहिं का सुनिपावौं सरगसुरद्विनी आन मेरावों।

सुनतहि मधुमालती उठि धाई, वीर-वीर रोवतकै आई[2]

स्पष्टवादी :

सूफी नायिकाएं विशेषकर चंदा स्पष्टवादी है। अपनी सास को स्पष्ट शब्द में कहती है कि यदि तुम्हारी पुत्री स्वसुर गृह में हो पति हाल न पूछे तो तुम क्या कहोगी। अभी तक मैं तुम्हारे कुल की रक्षा करती रही किन्तु अब मैं यौवन पीड़ा से व्यग्र हूँ मेरा शरीर विरह से जल रहा है।

तुम्हरे धीय जो ससुरे अहा, पिउ न पूछ तो बोलउ कहा[3]
अब लग कुरू मैं आपन धरा, काम लुबुध विरहतन जरा।

वह सुहागिनी कहलाने से अच्छा विधवा कहलाना अधिक उपयुक्त समझती है।

एहि परिहंस उठि मइके के जाउँ तिय सो राध सोहागिन वाउँ[4]

1- मधुमालती, पृ0 318, छ. 478,

2- मधुमालती पृ0 418 छ. 473

3- चंदायन पृ0 43, छ. 48

4- चंदायन पृ0 43, छ. 48

स्वप्न विश्लेषण :

सूफी काव्यों में स्वप्न दर्शन एवं उसका रहस्योद्घाटन करके प्रेमी-युगल के प्रेम की गणना चन्द्र तारों के माध्यम से करना एक रूढ़ि बन गयी है। फारसी कथा साहित्य में भी इस रूढ़ि का प्राचुर्य है, स्वप्न में फरिश्ता या बुजुर्ग का दर्शन देना।

मौलाना जामी ने स्वप्न का उल्लेख अपनी यूसुफ जुलेखा में किया है।

"मंगोई रव्वाबरा जिन घर बाक़स
मुवादाई शरवाद दानद"[1]

पद्मावत में वसन्त खण्ड में पद्मावती देव पूजन के पश्चात् स्वप्न देखती है।

"जनु ससि उदय पुरूब दिसि लीन्हा,
औ रवि उदय पच्छिम दिसि कीन्हा,
पुनि भलि सूर चांद पंह आवा, चांद सुरज दुई भये मेरावा।[2]

सखियां इसका विचार करती हैं, और उसके संजोग के अनुकूल विचार करके बतलाती हैं कि तुम्हारा मिलन होगा।

"सुरूज चांद तुम्ह रानी, अस वर दऊ मेरावै आनी
पच्छिम खण्ड कर राजा होई, सो आवा कहं तुम कंह होई,
किछु पुनि जूझि लागि तुम्ह रामा, रावन सो होइहैं संग्रामा
चांद सुरूज दुइ होहिं बिहाऊ बारि विधंसब बेधव राहू।[3]

1- हिन्दी फारसी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ0 416
2- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 263, वसन्त खण्ड छ. 202, राजनाथ शर्मा
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 263 वसन्त खण्ड, छ. 203

हंस जवाहर में जवाहर स्वप्न में ही संजोग लाभ करती है। एवं प्रिय हंस के दर्शन करती है। वही प्रिय यथार्थः में भी रहता है।

"सपने कंह कत के लागी, बांवर भई सोइ जब जागी
हेरे रूप दृष्टि नहिं आवै तौं लागी सो आप हेरावै"[1]

कहीं कहीं स्वप्न के षड्यन्त्र रचकर नायिका की सहेली नायिका के प्रिय मिलन में सहयोग देती है। चित्रावली में कुमुदनी ने ऐसा ही षड्यन्त्र रचकर योगियों का ज्यौनार कराया है।[2]

"कहत रात मैं सपना दीठी, जोगी संग जनुबार बईठी
कस यह सपन कैस व्यवहारा, तुम रानी अब करहु बिचारा।"[3]

हंस जवाहर में जवाहर तीनबार स्वप्न देखती है, प्रथम हंस का रूप स्वप्न में देखती है, दूसरी बार चन्द्र सूर्य का उल्लेख है, हंस के रूम जाने पर और विहाह पश्चात् -

"सपना दुष्ट पड़ा पुनि काहां, देखै अहै कछु घर मांहा
रचा मंदिर कैलास सिघारा, फूलाबीच रही फुलवारा
दुलहिन बरनचन्द्र अस नारी, थोड़ी बैस बदन सुकुवारी"[4]

1- सूफी काव्य संग्रह पृ0 174

2- चित्रावली पृ0 82

3- चित्रावली पृ0 83

4- हंस जवाहर पृ0 29

चन्द्रावती के आरम्भ में कवि को कथा की अन्तः प्रेरणा मिली है।

"एक रात सपना में देखा, सिंधु तीर वह तपिय सरेखा

अहै ठाढ़ि मोहि लीन्ह बुलाई, कहेसि कि सिन्धु में डूबौ जाई,

आस छोड़ पोढ़ा कइ हीया, मोती काढ़हु होय मरजीया।[1]

जवाहर का स्वप्न साकार हो उठता है, उसने स्वप्न में प्रिय को देखा था वह उसके सामने खड़ा है।

सपने मंह जो देखे नारी, आयो कंत मांझ सो नारी[2]

इस प्रकार स्वप्न विश्लेषण शुभ अशुभ चांद तारों की गणना के अनुसार कवियों ने किया है। भारतीय स्वप्न दर्शन में सुबह का स्वप्न सत्य होता है। स्वप्न देखने के पश्चात् उसे न बताने पर उसका दोष समाप्त हो जाता है।

किसी कवि ने कहा है -

"सपना देख रहे गोय, निज देखे सो आन को होय"

1- हिन्दी फारसी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन पृ0 415

2- सूफी काव्य संग्रह पृ0 172 पं0 परशुराम चतुर्वेदी

अतः मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के अन्तर्गत प्रेम, असूया, क्रोध मान एवं नारी की अन्य विशेषताओं को इन सूफी कवियों ने बड़े कौशल पूर्ण ढंग से अपने काव्य में प्रस्तुत किया है। भारतीय नारी के आदर्श का समग्र स्वरूप प्रतिपादित किया है। ये सूफी कवि नारी के प्रेम की पराकाष्ठा जो मृत्यु के बादभी जोड़ी जाती है प्रेम अग्नि है इसे जिसने सह लिया वह काल को जीत लिया-[1]

असूया के अन्तर्गत वह नारी अपने अन्तस से सौत ईर्ष्या करती है वह मीठी बातें भी करती है किन्तु अन्तस में विरोध है[2] इतना अन्तर्विरोध कि वह अपने से ऊँचा सौत को कभी नहीं समझती[3] सपत्नियों की हाँथावाही[4] दौड़कर अपने आभूषण तोड़ना[5] आपसी संघर्ष में रक्त रंजित हो जाना [6] ये सभी चित्रण कवि ने सामयिक किया है। कहीं कहीं तो नायिकायें आपसी मारपीट में निर्वस्त्र तक हो गयी है।[7] उनके वक्षस्थल से रक्त की -

---

1- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 113

2- मधुमालती पृ0 481, छ. 338

3-4- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 56। नागमती पद्मावती विवाद खण्ड

5- जायसी ग्रन्थावली पृ0 56।

6- चंदायन पृ0 253, छ. 260

7- चंदायन पृ0 253, छ. 260

धारा फूट पड़ती है, नाखूनों से नोच लेती हैं।[1] कोई नायिका रास्ते के समस्त चिन्ह हटवा देती है जो उसकी सौत से साम्य रखता है।[2] रास्ते में अपने आदमी लगा देती है, जो भी पत्र उसके सौत के देश से आता है उसे छिनवा लेती है,[3] इतना स्वाभाविक वर्णन करना इन सूफियों के ही वश की बात थी।

सूफी कवियों ने स्वप्न विचार का भी विश्लेषण, भारतीय विचार के अनुसार चन्द्र सूर्य एवं तारों के गणना के आधार पर व्यंजित किया है। स्वप्न के माध्यम से प्रेमी-प्रेमिका का संयोग लाभ का पूर्वाभास ज्ञात कराना मात्र है और कुछ रूढ़ि का प्रभाव एवं प्रिय संयोग है।[4]

सूफी कवि नायिकाओं के चरित्र की विशेषताओं का अंकन अत्यन्त विशद् एवं उदार रूप से किया है। नारी के शील मर्यादा पतिव्रता त्याग, एक निष्ठा एवं समर्पण का उदात्त चित्रण किया है। नायिका का समर्पण पूर्ण है, वह तन, मन जीवन से समर्पित है।[5] उसका पतिव्रत प्रखर है। सूर्य के समान तेज है।[6] किसी भी परिस्थिति में उसका पातिव्रत्य डिगता नहीं है।

1- चंदायन पृ0 254 छ॰ 26।

2- चित्रावली पृ0 116

3- चित्रावली पृ0 116 सत्यजीवन वर्मा

4- पद्मावत पृ0 197

5- जायसी ग्रन्थावली पृ0

6- जायसी ग्रन्थावली पृ0 74। छ॰ 63।

7- जायसी ग्रन्थावली पृ0 747, छ॰ 638

जो उसके पति की बराबरी चाहेगा वह जल के फेन के सदृश नष्ट हो जायेगा,[1] नायिकायें प्रथम ही प्रिय को अपने यौवन का भोग हृदय थाल सजाकर देती है।[2] अधर खण्डित कर उसका आस्वाद स्वयं लेने को कहती है। ऐसी है प्रेमाख्यान की समर्पित नारी[3] वह स्वयं अपने को समर्पित कर रिक्त हो जाती है निरंग हो जाती है।[4] नारी और पुरूष के मर्म को समझाती है। वह प्रिय शैया पर आने का आमन्त्रण देती है।

इन सूफी कवियों ने समाज के द्वारा निर्धारित मर्यादा नीति एवं आचरण का उल्लंघन कहीं नहीं होने दिया है। उसमें प्रेमी की स्वच्छन्दता के साथ अपने कर्तव्य भावना का भी प्राबल्य है। नारी का सम्पूर्ण समर्पण पति सेवा की एकनिष्ठता, लज्जा संकोच एवं सद्आचरण की गरिमा, नारि जनितशील की सौम्यता ईश्वरास्था, विनम्रता राजरानी होते हुये भी धैर्य की मूर्ति, पर दुख कातर, कष्ट सहिष्णु[5], कुशल गृहिणी,[6] भातृ वत्सला[7], कष्ट सहिष्णुता का जो साकार चित्र खीचा है वह नारी को आदर्श भारतीय नारी के रूप में प्रस्तुत करता है। यह सूफी प्रेमाख्यानक काव्यों की विशेषता है कि वह विदेशी मुसलमान होते हुये भी भारतीय गरिमा की प्रतिष्ठा अपनी नायिकाओं के व्यक्तित्व में पूर्णतः निवेश किये हैं।

1- मृगावती छ॰ 256
2- चंदायन पृ0 209, छ॰ 215
3- जायसी ग्रन्थावली, पृ0 225 छ॰ 349
4- मृगावती पृ0 271, छ॰ 265
5- चंदायन पृ0 43 छ॰ 48
6- जायसी ग्रन्थावली पृ0 169, छ॰ 28
7- मधुमालती। पृ॰ 418, छ॰ 473

उपसंहार

सूफी प्रेमाख्यान काव्य नायिका प्रधान है, इसमें पुरुष पात्रों की कमी है, सूफी कवियों का वर्ण्य विषय ऐतिहासिक एवं काल्पनिक दोनों ही है। ऐतिहासिक कथानकों में पद्मावती है जिसका पूर्वार्द्ध काल्पनिक एवं उत्तरार्द्ध ऐतिहासिक है। इसी प्रकार देवल देवी एवं खिज्र खाँ की प्रेम कथा को सूफी कवियों ने अपने काव्य का उपजीव्य बनाया है। अन्य कथाओं के मध्य भी इन कवियों के काव्यों में ऐतिहासिक घटना के स्थान पर कहीं-कहीं केवल ऐतिहासिक नाम ही मिल जाता है। उदाहरण के लिए छीता शीर्षक प्रेमाख्यान प्रस्तुत किया जा सकता है इसमें अलाउद्दीन का नाम ऐतिहासिकता का परिचायक है, किन्तु चरित्र कवि कल्पित है।

अधिकांशतः सूफी काव्य में हंसावली, मधुमालती चित्रावली, मृगावती, हंस जवाहर भाषा प्रेम रस, पुहुपावती आदि कवि कल्पना प्रसूत है।

सूफी कवियों की लोक दृष्टि अत्यन्त सजग है। अपने आस-पास के विस्तृत वातावरण से कहीं निराधार विस्तृत कल्पना इन कवियों ने नहीं की, इनकी रचनाओं में भारतीय जीवन एवं संस्कृति का बड़ा सजीव चित्रण हुआ है। प्रकृति चित्रण के अन्तर्गत भी भारतीय प्रकृति-छटा के दृश्य है। षट्ऋतु एवं बारह मासे के वर्णन में भारतीय गार्हस्थ्य जीवन की समस्याओं एवं प्रकृति के उपकरणों का चित्रण है।

रस निरूपण की दृष्टि से प्रेमाख्यानक काव्यों में श्रृंगार रस का परिपाक हुआ है, जिसके अन्तर्गत संयोग एवं वियोग श्रृंगार प्रमुख है। किन्तु कवि ने प्रेम की तीव्रता निरूपित करने के लिए वियोग श्रृंगार का विशद

वर्णन किया है। हिन्दी सूफी काव्य अत्यन्त समृद्ध है, इसके प्रणयन में अनेक मुसलमान कवियों का अतुल योगदान है। ये कवि नारी के विभिन्न रूपों की प्रतिष्ठा अपने काव्य में अभिव्यंजित किये हैं।

सूफी कवि अपने काव्य में इश्क मज़ाजी के द्वारा इश्क हक़ीकी का प्रतिपादन किया है। इन लौकिक कथाओं में प्रेम की झांकी का सुंदर निरूपण है। जिसमें विश्व-प्रेम की भागीरथी प्रवाहित करने में इन कवियों का महत्वपूर्ण योगदान है। सामाजिक व्यवस्था में समन्वय स्थापित करके शांति और हृदयगत प्रेम की स्थापना में सूफी कवियों का अत्यधिक योग है।

सूफी कवि का प्रेम निरूपण सौन्दर्य से प्रभावित है अधिकांशतः प्रेमारम्भः का मूल कारण रूप सौन्दर्य ही है जो खुदा के नूर की ओर संकेत करता है ईश्वरीय सौन्दर्य की अवतारणा अधिकांश सूफी कवियों ने अपनी नायिकाओं में की है। यह सौंदर्य साधक को अपनी साधना की ओर प्रेरित करता है।

किन्तु समस्त सूफी काव्यों का अनुशील करने पर इन कवियों का सौन्दर्य चित्रण, संयोग चित्रण निर्विवाद रूप से स्थूल है। ये कवि अपनी नायिकाओं अंगों के सूक्ष्म निरीक्षक के रूप में दृष्टिगत होते हैं। ये सब कुछ कहकर भीकुछनकहने वालों की श्रेणी में आते हैं। ये अपने काव्य में नारी को ब्रह्म स्वरूप में अवश्य चित्रित करते हैं। किन्तु इनकी ब्रह्म नारी कहीं-कहीं अत्यन्त कमजोर दिखाई पड़ती है।

"पद्मावती वियोग खण्ड" में पद्मावती के यौवन का गंगा सदृश लहरें लेना, यौवन के प्रबल वेग को संभाल न पाना, बिना अंकुश के हाथी सदृश होना, यौवन उदधि में डूबना आदि एक अत्यन्त कमजोर, सांसारिक

1- जायसी ग्रंथावली पृ0 133, छ० 174

नारी का रूप अंकित करते हैं।

इस नायिका का क्रोध न संभाल पाना, सौत से विवाद करना[1] उससे हाथा बाँही करना,

पद्मावती सुनि उतर न सही, नागमती नागिन जिमिगही,[2]

सौन्दर्य चित्रण के अन्तर्गत वह ब्रह्म नारी जो सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है, जो पारस रूप है[3] जिसके स्पर्श मात्र से सरोवर निर्मल हो जाता है, जिसकी दृष्टि विलास से सर्वत्र कमल खिल उठते हैं, जिसके श्वेत-हास से सर्वत्र हंसों की सृष्टि हो जाती है। जो महारूप है जिसके विद्रुम अधर के प्रकाश से पूरे संसार में अरुण छाया का प्रकाश विकीर्ण हो जाता है।

उस नारी के सौन्दर्य चित्रण में कवि की स्थूलपरक कल्पना नारी के दैविक रूप को धवल करती है।

चंदन भांख कुरंगिनी खोजू दहुँ का पाउँ को राजा भोगी,

उसी अलौकिक परमसता स्वरूप ईश्वरीय सत्ता के वर्णन के अन्तर्गत उसके अंगों को देखकर मन का ठहरा जाना, या कवि का यह कहना कि नायिका का पेट कामपुर का पथ है,[4] इसका कोई औचित्य समझ में नही आता, क्या अलौकिक नारी के अंगों में काम भाव की दृष्टि विलास चेतना चेतन हो सकती है। कवि के इस भाव से उसकी मानसिकता का स्पष्ट धोतन होता है। अतः कवि अपने काव्य में नारी स्वरूप चित्रण पूर्णतः लौकिक धरातल पर किया है।

1- जायसी ग्रंथावली पृ० 561, छ॰ 446

2- जायसी ग्रंथावली पृ० 574, छ॰ 576

3- जायसी ग्रंथावली पृ० 92, छ॰ 67

4- चंदायन पृ० 181 छं॰ 28

मनोवैज्ञानिक चित्रण के अन्तर्गत नारी के मानसिक भावों का निरूपण कवि ने बड़े सुन्दर ढंग से व्यंजित किया है सपत्नी विवाद, ईर्ष्या घृणा, क्रोध एवं नारी जनित आदर्शों की अवतारणा उसकी सती होना पातिव्रत्य, त्यागमयी, करुणामयी, आदि रूप उसके व्यक्तित्व को सुन्दर आधार देते हैं।

सामाजिक रीतियों, त्योहारों, संस्कारों का वर्णन भी इन प्रेमाख्यानक काव्यों में यत्र तत्र प्राप्त होता है छठीं, नामकरण, पाटी पूजन, सगाई आदि का वर्णन देकर कवि ने भारतीय परिवेश को सूफी काव्य में एक नयी दृष्टि दी है।

अस्तु कवि का काव्य भारतीयता से ओत प्रोत एक गृहस्थी की समस्याओं को व्यक्त करती नायिका की चिन्ता, पति के लिये चिंतित भारतीय आदर्शनारी के गौरव गरिमा का श्रेष्ठ रूप प्रतिपादित करती है।

नारी रूप चित्रण में कवि की कल्पना शीलता स्तुत्य है कि उसने नारी को दैवि रूप में प्रतिष्ठित किया, और उसे आध्यात्मिक आवरण से वेष्ठित कर अलौकिक रूप दिया। किन्तु प्रेमाख्यानक काव्य की नारी, समस्त मूल्यांकन के पश्चात् पूर्णतः लौकिक है और जो नारी जनित दुर्बलताओं एवं क्षमताओं से युक्त एक भारतीय नारी है।

सहायक ग्रन्थों की सूची

क्र०सं०	पुस्तक	लेखक , सम्पादक एवं संस्करण
1	2	3
1-	आधुनिक हिन्दी काव्य में नारी भावना -	डॉ० शैल कुमारी, हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद उ०प्र० प्रथम संस्करण 1951, पु० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
2-	आधुनिक हिन्दी काव्य शिल्प-	डा० मनमोहन अवस्थी, प्रथम सं० 1962 पुस्तकालय, इ०वि०वि०, इलाहाबाद।
3-	कृष्ण काव्य परम्परा और नायिका भेद	राकेश गुप्त, प्र० अलीगढ़, सं०प्रथम 1987 इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इला०
4-	कल्याण नारी अंक - पत्रिका	प्र० गीता प्रेस कल्याण कार्यालय, गोरखपुर। संवत् 1948, 39वां अंक हि० सा० सम्मेलन, प्रयाग।
5-	कालिदास ग्रन्थावली -	सम्पादक - राम प्रताप शास्त्री पु० - हिन्दी सा० सम्मेलन, इला०
6-	चन्दायन	मुल्ला दाउद, सं० माताप्रसाद गुप्त, (व्याख्या सहित), प्र० आगरा संस्करण प्रथम 1967, पु०साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

1	2	3
7-	चन्दायन	मुल्ला दाउद, सं० परमेश्वरी लाल गुप्त §व्याख्या रहित§
8-	चित्रावली	उसमान, सं० जगनमोहन वर्मा, §व्याख्या रहित§, सं० द्वितीय, प्र० नागरी प्रचारिणी सन्त काशी, पु० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।
9-	चित्रावली	उसमान, सं० सत्यजीवन वर्मा, §व्याख्या रहित§ प्र० राम नरायन लाल; संस्करण प्रथम 1929, पु० हि०सा०स० प्रयाग।
10-	जायसी ग्रन्थावली	जायसी, सं० वासुदेव शरण अग्रवाल, §व्याख्या सहित§ प्र०- का०हि०वि० वि० वाराणसी, संस्करण प्रथम, पु०- हि०सा०स० प्रयाग।
11-	जायसी ग्रन्थावली	जायसी, सम्पादक राजनाथ शर्मा, प्र० विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा संस्करण - षष्ठ, 1983 पु० - का०हि०वि०वि० वाराणसी।
12-	जायसो ग्रन्थावली	जायसी, सं० राम चन्द्र शुक्ल, प्र० पु०- इ० वि० वि०, इलाहाबाद।

1	2	3
13-	जायसी ग्रन्थावली	जायसी, सं0 मनमोहन गौतम, सं0- प्रथम 1945, पु0-हि0सा0स0प्रयाग।
14-	जायसी काव्य प्रतिभा और संरचना	डा0 हरि प्रसाद गुप्त, पु0-भाषासाहित्य संस्थान, सं0 1982, पु0-इ0वि0वि0इ0
15-	जायसी का पद्मावत काव्य और सौन्दर्य	डा0 गोविन्द त्रिगुणायक, प्र0साहित्य निकेतन, सं0 द्वितीय 1973, पु0 हि0 सा0 स0 प्रयाग।
16-	तस्सवुफ अथवा सूफी मत-	डा0 चन्द्रवली पाण्डेय, प्र0 सरस्वती मंदिर बनारस, सं0 द्वितीय 1948 पु0 हि0 सा0 स0 प्रयाग।
17-	नारी तेरे रूप अनेक-	क्षेम चन्द्र शुक्ल, प्र0 रामलाल पुरी सं0 प्रथम 1967, पु0 हि0सा0स0प्रयाग।
18-	निर्गुण काव्य पर सूफी प्रभाव-	डा0 रमापति राम शर्मा, प्र0- पुस्तक संस्थान नेहरू नगर, कानपुर, सं0 1977 पु0- इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इला0
19-	पद्मावत का काव्य सौन्दर्य -	डा0 शिव सहाय पाठक, प्र0-हि0सा0स0 प्रयाग, सं0 प्रथम 1956, पु0-हि0सा0स0प्र0
20-	प्रसाद ग्रन्थावली - (प्रसाद वांगमय खंड-1)	जयशंकर प्रसाद, प्र0 रत्नशंकर प्रसाद प्रकाशन-लोकभारती, पु0-इ0वि0वि0इ0

1	2	3
21-	प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी -	डा० गजानन्द शर्मा, प्र० रचना प्रकाशन. सं० 1971, पु०-हि०सा०स० प्रयाग।
22-	भक्ति कालीन हिन्दी साहित्य पर मुस्लिम संस्कृति का प्रभाव-	डा० अशद अली, प्र० दिल्ली, पु०- काशी विधापीठ, वाराणसी।
23-	भक्ति काव्य में माधुर्यभाव का स्वरूप -	डा० जयनाथ "नलिन", प्र० रघुवीर शरण बंसल, सं० - प्रथम 1966, पु०- हि० सा० स० प्रयाग।
24-	भारतीय प्रेमाख्यान की की परम्परा -	परशुराम द्विवेदी, प्र० लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, सं०द्वितीय 1962 पु०- इलाहाबाद विश्वविधालय इला०
25-	भारतीय एवं पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धांत-	डा० राजकिशोर सिंह, प्र० सीतापुर रोड लखनऊ, सं० 1987, पु०- हि०सा०स० प्रयाग।
26-	मधुमालती	मंझन, सं० माताप्रसाद गुप्त§व्याख्या§ प्र०- मित्र प्रकाशन, सं० 1961 पु० - हिन्दी सा० स० प्रयाग।
27-	मधुमालती	मंझन, सं० परमेश्वरी लाल गुप्त, §व्याख्या रहित§पु०-हि०सा०स०प्र०।

1	2	3
28-	मध्य युगीन हिन्दी साहित्य का लोकतांत्रिक अध्ययन-	डा० सत्येन्द्र, प्र० राजकिशोर, सं० प्रथम 1960, पु०इ०वि०वि०इ०।
29-	मध्य युगीन साहित्य में नारी भावना-	डा० उषा पाण्डेय, प्र० हिन्दी साहित्य संसार, सं० प्रथम 1954, पु० हि० सा० स० प्रयाग।
30-	मध्य युगीन प्रेमाख्यान -	डा० श्याम मनोहर पाण्डेय, सम्पादक- श्री कृष्ण दास, प्र०- मित्र प्रकाशन, पु-हि०सा०स० प्रयाग।
31-	मधुमालती का पुर्नमूल्यांकन-	दर्शन लाल सेठी, हि०सा०स०प्रयाग।
32-	मानस चतुर्थ शताब्दी - समारोह-	प्रयाग विधा मंदिर, प्र० हि० सा० स० प्रयाग।
33-	मानस की महिलायें-	रामानन्द शर्मा, प्र० कन्याकुमारी, सं० प्रथम 1962, पु०इला०वि०वि०इ०
34-	मृगावती -	कुतुवन, सं० डा० शिवगोपाल मिश्र, प्र० (व्याख्या रहित) सं० प्रथम पु०- हिन्दी सा० स० प्रयाग।
35-	मृगावती - कुतुवन	डा० परमेश्वरी लाल गुप्त, सं० प्रथम 1967, पु०-हि०सा०स०प्र०
36-	रामचरित मानस-	तुलसीदास कृत, टीकाकार-हनुमान प्रसाद पोद्दार, प्र०-गीता प्रेस गोरखपुर, सं० एकादस।
36क.	जायसी ग्रन्थावली	रामचन्द्र शुक्ल प्रथम संस्करण पु० इलाहाबाद वि० विद्यालय

1	2	3
37–	रीति काव्य संग्रह –	डा० जगदीश गुप्त, सं० प्रथम 1961 पु० हि० सा० स०, प्रयाग।
38–	ऋतु वर्णन परम्परा और सेनापति का काव्य –	डा० सूर्य पाल शर्मा, प्र०पुस्तक प्रचार सं० प्रथम 1973, पु–हि०सा०स०प्र०।
39–	ब्रहम वैवर्त्त पुराण – (हिन्दी अनुवाद सहित)	संपादक– तारणीश झा, सं० प्रथम पु०– इ०वि०वि० इला०
40–	विश्व कोष हिन्दी प्राच्य-विद्या महापर्व	नगेन्द्र नाथ वसु, सं० बंगाली विश्व कोष, पु० हि०सा०स० प्रयाग।
41–	विभिन्न युगों में सीता का चरित्र चित्रण –	डा० सुधा गुप्ता, सं० प्रथम 1978, पु–इ०वि०वि०इ०
42–	सूफी काव्य संग्रह –	डा० परशुराम चतुर्वेदी, प्र०– हि० सा०स० प्रयाग, सं० प्रथम 1951 पु० – हि० सा० स० प्रयाग
43–	सूफी काव्य संग्रह –	डा० परशुराम चतुर्वेदी, प्र० गोपाल चन्द्र सिंह, सं० चतुर्थ 1965, पु०– हि० सा० स० प्रयाग।
44–	सूफीमत साधना और साहित्य –	डा० रामपूजन तिवारी, सं० प्रथम, संवत् 2013, प्र०ज्ञान मंडल बनारस पु० हि० सा० स० प्रयाग।
45–	सूफी महाकवि जायसी	डा० जयदेव, प्र० भारत प्रकाशन मंदिर अलीगढ़, सं० 1957, पु० इ०वि०वि० इलाहाबाद।

1	2	3
46-	सूफी काव्य विमर्श -	डा0 श्याम मनोहर पाण्डेय, सं0 1968 पु0 हि0 सा0 स0 प्रयाग।
47-	हिन्दी सूफी कवि और उनके काव्य	डा0 सरला शुक्ला, प्र0 लखनऊ वि0वि0 सं0 संवत् 2001, वि0, पु0 हि0 सा0 स0 प्रयाग।
48-	हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य-	डा0 कमल कुलश्रेष्ठ, सं0 प्रथम 1953 प्र0 चौधरी मान सिंह कचेहरी रोड, अजमेर, पु0 हि0 सा0 स0 प्रयाग।
49-	हंस जवाहर -	कासिम शाह, पु0 हि0सा0स0 प्रयाग।
50-	हिन्दी साहित्य की भूमिका -	डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्र0 हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर बम्बई, सं0 1950, पु0 हि0सा0स0 प्रयाग।
51-	हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास-	डा0 राम कुमार वर्मा, प्र0 राम नारायण लाल बेनी माधव सं0पांचवां पु0 हि0 सा0 स0 प्रयाग।
52-	हिन्दी शोध नये प्रयोग-	सम्पादक- राम नाथ त्रिपाठी, प्र0 वाणी प्रकाशन दिल्ली, सं0 1983 पु0-इ0वि0वि0 प्रयाग।
53-	हिन्दी साहित्य का इतिहास -	डा0 रामचन्द्र शुक्ल, प्र0 नागरी प्रचारिणी सभा, सं0 सोलहवां पु0 हि0 सा0 स0 प्रयाग।

1	2	3
54-	हिन्दी काव्य में श्रृंगार परम्परा और महाकवि बिहारी -	डा० गणपति चन्द्र शुक्ल, प्र० राजकिशोर अग्रवाल, सं० प्रथम 1959, पु० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।
55-	हिन्दी सूफी काव्य में प्रतीक योजना -	डा० सरोजनी पाण्डेय, प्र० युगवाणी प्रकाशन जवाहर नगर कानपुर-12 सं० 1974, पु० इ०वि०वि० इला०
56-	हिन्दी महाकाव्यों में नारी चित्रण -	डा० श्याम सुन्दर व्यास, प्र० रघुनाथ दास अग्रवाल, सं० प्रथम 1963 पु० - हि० सा० स० प्रयाग।
57-	हिन्दी और फारसी सूफी-काव्य का तुलनात्मक अध्ययन -	डा० श्रीनिवास बत्रा, प्र० नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं० प्रथम सम्वत् 2026 पु० इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।